औरंगाबाद
की
हिन्दी सन्त वाणी

लेखक

डॉ० भालचन्द्र राव तैलंग

अध्यक्ष हिन्दी-विभाग, मराठवाडा विद्यापीठ
औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

प्रकाशक

रामनारायण लाल बेनीप्रसाद

प्रकाशक तथा पुस्तक विक्रेता
इलाहाबाद-२

प्रथम संस्करण] १९६७ [मूल्य २० रुपये
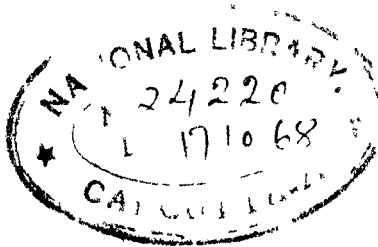
रुचि-निदेश तथा रचना-निर्देश

के

केन्द्र-स्थल

स्व० चन्द्र हासन

के

कर कमलों में

समर्पित

डॉ० भालचन्द्रराव तेलंग

मराठवाड़ा विद्यापीठ, औरंगाबाद द्वारा 'औरंगाबाद की हिन्दी-सन्त-वाणी' के प्रकाशनार्थ १००० रुपये का जो अनुदान प्राप्त हुआ है लेखक उसके लिये कृतज्ञता प्रकट कर अपना हार्दिक धन्यवाद प्रदान करता है।

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

'सन्तो दिक्' अर्थात् सन्त ही दिशा हैं—महाभारत के वनपर्व में दिया गया यक्ष-प्रश्न का यह उत्तर 'सन्त' शब्द की परिव्याप्ति का सूचक है। सन्तों की वाणी आनन्द का वह सन्दोह है, जहाँ ब्रह्म, परमात्मा और भगवान् साक्षात् प्रतिभात होते हैं। सन्त नामदेव ने कहा है **'भगवन्त भगता नहिं अंतरा'** और तुलसी ने उसे और भी स्पष्ट करते हुए कहा है—**'सन्त भगवन्त अन्तर निरन्तर नहीं'**। सन्तों की यह पीयूषधारा आत्मा से निःसृत हो लोकसंग्रह की प्रशस्त भूमि पर सदा से बहती रही है—इस चिरन्तन प्रवाह में लोकमंगल की चिन्ता का तीर्थसलिल है तथा भारतीय आध्यात्मिक चिन्तन का सतत और प्रबल वेग है। धर्मों, सम्प्रदायों, मतमतान्तरों से सहिष्णु एवं संपुष्ट इन सन्तों की वाणी में भारत की भावात्मक एकता का जो बल है उसे देख हम जहाँ नतमस्तक हो जाते हैं, उसकी वरिष्ठता तथा श्रेष्ठता को देख हम उन्नतमस्तक होते हैं।

महाराष्ट्र का सन्त साहित्य विपुल, ऐश्वर्यमय, बहुगुणाश्रय, सम्पन्न तथा प्रसन्न है। भाषा की एकता ने इस प्राप्ति को विशद व्याप्ति दी है। इतिहास साक्षी है कि आन्ध्रशासक बौद्धधर्मानुरागी शककर्त्ता शालिवाहन की प्रतिष्ठान नगरी ऐसी राजधानी थी जहाँ राजा प्राकृत बोलते थे और रानी संस्कृत बोलती थीं। तत्कालीन जैनाचार्य श्रीमच्छर्व वर्मा ने संस्कृत भाषा के शीघ्रबोध के लिये पाणिनि के आधार पर 'कातन्त्ररूपमाला' व्याकरण की रचना की थी। पैशाची कृति 'वड्डकहा' के रचयिता गुणाढ्य से लेकर सभी मुनियों का नमन उसके मंगलाचरण[1] में मिलता है। 'गाथासप्तशती' भी तत्कालीन अनेक प्राकृत कवियों की सरस्वती का निःस्यन्द है।

हिन्दी के आरंभ-युग में महानुभावपंथ के प्रवर्त्तक महात्मा चक्रधर ने पैठण में चौपदी में गाया :—

> **'आंखें निरंजन लो लो करी हो**
> **भाव अभाव दोन्ही नाहीं।'**

---

[1] 'नमो वृषभसेनादि गौतमान्त्यगणेशिने।
मूलोत्तर गुणाढ्याय सर्वस्मै मुनये नमः॥'
—कातन्त्ररूपमाला व्याकरणम्

भावाभावविनिर्मुक्तावस्था को साधना का लक्ष्य मानते हुए सिद्धनाथों के अनुसार तन्त्रपीठकाया में उड्डियानबंध की प्रक्रिया एवं ऊर्ध्वमहासुख स्थान में समाहित होने वाली अन्तस्साधना का संकेत हमें इस प्राचीन हिन्दी चौपदी में मिलता है। आवागमन के जंजाल से मुक्ति पाने के लिये योगासन की इस क्रिया का उल्लेख गोरखनाथ ने[१] भी किया था : 'मोरे मन उडियांनी आई'। यह 'लो' निश्चय ही सहज, शून्य, निरजन की 'लौ' है, जिसे कालान्तर में कबीर ने समझाया :—

'ऐसा लौ नहिं तैसा लौ
केहि विधि कहौ अनूठा लौ।'

पैठण की गोदावरी तट पर स्थित नागघाट तथा नागमन्दिर आज भी उनके शिष्यप्रवर नागदेवाचार्य[२] की स्मृति दिलाते हैं। **'गुरुवचनें उठीयाना'** से प्रेरित हो नागदेवाचार्य की चचेरी बहिन महदायिसा ने अपने नारीस्वर में गाया :—

**'नगरद्वार हो भिच्छा करो हो
बापु रे मोरी अवस्था लो।'**

अटन, विजन और भिक्षाभोजन में लीन **'मोरी चिन्ता लो'** की चरणध्वनि पैठण के नगरद्वार पर ध्वनित-प्रतिध्वनित होती है तथा वहाँ के हाट चौहाटों पर साधिका 'रूपाई' का रूप भी बिम्बित-प्रतिबिम्बित होता है। इनके पूर्वज देवगिरि के यादवराज महादेवराय के यहाँ पुरोहित थे।[३] इन दिनों देवगिरि के राजाश्रय मे 'संगीत रत्नाकर' जैसी रचना हुई और लोकभाषा के क्षेत्र में काव्य को संगीत का आश्रय मिला। महानुभाव पंथी दामोदर पंडित ने **'नागदेव म्हणे हमें रंगजों चक्रस्वामिआ चरणीं'** की भक्ति में रागरागिनियो में गाया :—

**'अनंत पुरुष हो अनंत भाषा पुकारति नाना विचार
सबहि मिलकर रहणि नेनति पंथु तो अपरांपर।'**

दामोदर पंडित ने गुरु के बिना आत्मज्ञान होना असंभव बतलाया है :—

---

[१] मूल चापि डिढ आसणि बैठा
तब मिटि गया आवागवनं—गोरखनाथ की बानी

[२] परिचयार्थ देखिये डॉ० विष्णु भिकाजी कोलते: महानुभाव पंथ

[३] डॉ० तुळपुळे :—महाराष्ट्र सारस्वत पृष्ठ ८८५

'मुके नि सपना दीठे अनुवाद करे कोण
तैसा सुन रे भया ! असे आत्म ग्यान ।'

दामोदर पंडित ने अपने आपको **'सिद्धान्त सिद्धन सिद्धति स रे अवधूत के हम राजे'** कहा है । वे एक ओर **'नगर मध्ये पैसौ बाबा'** तथा दूसरी ओर **'काल फाड़ फाड़ खादा'** कहकर आर्थिक और पारमार्थिक दोनों दृष्टियों से जीवन को सफल बनाने का उपदेश देते हैं ।

पैठण के समीप आपेगाँव में सन्त ज्ञानेश्वर का जन्म हुआ तथा पैठण से चार कोस पास आळंदी ग्राम में सन्त ज्ञानेश्वर की समाधि स्थित है । उनकी ज्ञानेश्वरी जनता और बहुभाषाविदों के लिये 'भवार्णवी नाव' के रूप में उतरी । नामदेव कहते हैं :—

'छप्पनभाषेचा केला से गौरव
भवार्णवीं नाव उभारिली ।'

'सर्व खल्विदं ब्रह्म' और समस्त नानारूपात्मक मूर्त्त अमूर्त्त रूपों में ब्रह्म की सत्ता को स्वीकार करते हुए ज्ञानेश्वर ने कहा :—

'सब घट देखो माणक मौला
कैसे कहूँ मैं काला धवला
पंचरंग से न्यारा होय
लेना एक और देना दोय ।'

इस जगत् में सांसारिक व्यापार तथा पारमार्थिक चिन्तन दोनों अभिप्रेत हैं, पर अनासक्ति ईश्वरोन्मुख है । यहाँ **'माणिक मौला'** शब्द मन पर छा जाने वाले मुस्लिम सन्तों का सूचक है । जिस ब्रह्म को समझाने में सन्त ज्ञानेश्वर ने 'काला' 'धवला' का संशय रखना चाहा, उनकी बहिन मुक्ताबाई ने शक्ति का योग देकर उसे अनेक वर्णों से सन्निहितार्थ करते हुए आशय को स्पष्ट करना चाहा :—

'लाल बीच मों उदला काला ओंठ पीठ सों काला
पीत उन्मनी भ्रमर गुंफा रस भूलन वाला'

आगे चलकर सन्त नामदेव ने भी **'तीन रंग डोरि जाके, सेत पीत स्याही'** कहकर गगन में उड़ने वाली उस सहज पतंग की ओर ध्यान दिलाया है ।

सन्त नामदेव ने **'पंढरीनाथ बिठाई बताओ, मुजे पंढरीनाथ बिठाई'** की धुन लगा दी तो कबीर ने भी 'मन के मोहन बीठुला' तथा **'गोकुल नाइक बीठुला'** पद गाकर विट्ठल भक्ति का परिचय दिया । यह सम्पर्क इतना बढ़ा कि **'चन्द्र-**

भागा बालवंट पर कबिरा धूम मचाई' की बात प्रचलित हो गई। सन्त नामदेव जहाँ नाथसिद्धों से प्रभावित हो योगपरक साधना की बात इन शब्दों में कहते हैं :—

'इड़ा पिंगला सुषमनि नारी। पवनां मंझि रहाऊंगा।
चन्द सूर दोऊ समि करि राखूं। ब्रह्म ज्योति मिलि जाऊंगा॥'

वहाँ श्रीमद्भागवत् से प्रभावित हो कहते हैं :—

'भाव कलपतर भगति लता फल
सो फल रसाल के देस देवा।
नामो भजे केसवे ! तूं देसी नर लाहाइणें
उपाये तुझे भणीजे'

और सगुण भक्ति का प्रतिपादन करते हैं। और तो और

'आव कलंदर केसवा। करि अबदालव भेष बाबा
ताज कुलह ब्रह्मांड कीन्हा। पाव सप्त पतांल जी
चमर पोस का मंदरु तेरा। इहि विधि बनै गोपाल जी

के पद द्वारा वे भगवान् के उस विराट् रूप के दर्शन कराते हैं जो हिन्दू-इस्लाम धर्म के रूप के परे हैं। काण्हपा की उक्ति 'जिम लोण विलिज्जइ पाणीएहि' को नामदेव स्वीकार करते हुए कहते हैं **'लूण नीर थै ना ह्वै न्यारा'**, तथा इस उक्ति से प्रभावित हो सूफी सन्त ख्वाजा बन्देनवाज कहते हैं :—

'पानी में नमक डाल लेसां देखना इसे
जब घुल गया नमक तो नमक बोलना किसे ?
यूं घोले खुदी अपनी खुदा साथ मुस्तफा[१]
जब घुल गई खुदी तो खुदा बोलना किसे ?

निर्गुण सन्तों की साधना के साथ वारकरी सम्प्रदाय की भक्ति सरिता ने सारे समाज को आप्लावित कर दिया। **'जपत जपत शाम राम सुन्दर मुख सदा राम'** के गायक विष्णुभक्ति प्रपन्न भानुदास ने पंढरपुर के विट्ठल की वहाँ पुनः प्रतिष्ठा करके भक्तों की परम्परा ही स्थापित कर दी। सौ वर्ष बाद, उनके प्रपौत्र, देवगिरि के जनार्दन स्वामी के भक्तशिष्य एकनाथ ने 'चतुःश्लोकी भागवत्' से लेकर 'भावार्थ रामायण' लिखकर भक्ति की ऐसी गंगा बहाई कि आबालवृद्ध सारा महाराष्ट्र समाज उसमें अवगाहन कर कृतार्थ हो गया।

[१] मेराजुल आशकीन : खलीक अंजम 'रुबाइयान'।

गोरखनाथ ने जिस माया को ले 'मेरा गुरु तीनि छंद गावै'[1] कहा, उसे सन्त नामदेव ने **'तीनि छंदे खेलु आछे'**[2] के रूप में गाया पर उस खेल को खिलाया और दिखाया, सन्त एकनाथ ने। बाजीगर स्वांग, मुंडा आदि प्रदर्शनरूपों को जनता के सम्मुख दिखाया, एका जनार्दन ने; और अपने ढंग से। एकनाथ की यह 'भारूड शैली' जनता के बीच बड़ी लोकप्रिय सिद्ध हुई। 'भारूड' की व्युत्पत्ति मेरी दृष्टि से इस प्रकार है :

भारूड < भाँरूड < म्हारूड < सं० महारूढ

सिद्धनाथों के समय से बहुरूढ़ क्या महारूढ़ होने के कारण इन शब्दों, बिम्बों प्रतीकों को जनता ग्रहण करती रही और इस बोध्य, लक्ष्य तथा व्यंग्य अर्थ को समझ आनंदित होती रही। पैठण की गोदावरी के तट के इस वारकरी पुनीत तीर्थसलिल में जनता पर्व-पर्व पर स्नान करती रही तथा भक्ति के इस अभिषेक-जल से अभिसिंचित हो पूजन-अर्जन-आराधन करती हुई पुण्य-प्राप्ति करती रही।

शिवाजी के प्रादुर्भाव ने महाराष्ट्र में ऐतिहासिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा सामाजिक उत्थान में उत्क्रान्ति की लहरें फैला दीं। वारकरी सम्प्रदाय के भक्तिमन्दिर के शुभकलश तुकाराम के दर्शन और उनके द्वारा रचित अभंगों ने जनता को भावविभोर और आत्मविभोर कर दिया। समसामयिक सन्त समर्थ रामदास ने जहाँ तुका को तुकाराम बना लिया वहाँ सावधान कहते हुए जनता को साधन चतुष्टय का बल प्रदान कर समर्थ बना लिया और अन्ततोगत्वा अपने आपको रामदासाभिमानी सिद्ध कर लिया। नामी से अन्तर्यामी तक, अन्तरात्मा से परमात्मा तक का ज्ञानदान ही तो सारांश में उनका 'दासबोध' है। राम, कृष्ण, निरंजन सभी उनके उपास्य थे। आचार-विचार का पालन, पाखंड-आडम्बर का तिरस्कार, श्रद्धा और विश्वास का संचार उनका महत् कार्य था। सद्गुरु तुकाराम की स्वप्नभेंट तथा समर्थ गुरु रामदास की मारुति-मूर्ति-भेंट से अनुगृहीता **'छन्द प्रबन्ध सुनावत नारी, देह भाव नहिं जाने'** गानेवाली कवयित्री बहिणाबाई ने **'बसुदेवा तब बारन आवें, सोवें गोकुल नन्द'** से लेकर **'मीरा को बिख अमृत किया, पत्तर कू दूध पिलाया'** तक गया है। उनके पुण्यस्थान शिऊर

[1] गोरखबानी : पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल (द्वि० सं०) पृ० १३६, १३७, २५७.

[2] सन्त नामदेव की पदावली : पूना विश्वविद्यालय, पद-१५६.

८ शिवपुर में आश्विन शुक्ला प्रतिपदा की पुण्यतिथि पर सुने गये दो हिन्दी भजनपद यहाँ उधृत किये जाते हैं :—

[१]

फूल बिना फल, जल बिना अंकुर बिन पुरुषो नहिं छाया
जल बिन कमलिनि, रबि बिन तेज, आगि[१] तहाँ सब आया
तरु तहाँ बिन बिज्र, तहाँ तरु हय, दीप के पास प्रकाश
नर तहिं नारी, जल ताहिं थल है,[२] पुण्य तहाँ अविनाश
बहेनि कहे जिस कु हरि आवे वोहि पुण्य को रास
शांति क्षमा उसके घर सोवे, सब ही सम्पति दास

[२]

ये अजब बात सुनाई, भाई
गरुड़ को पाँख हिराये कागा लक्ष्मि चोरन गाई[३]
ये सूरज को बिंब अंधारो, सोवे चंद कु आग जलावे[४]
राहु कु गिरहो भोगिका हरे[५] अमृत ले मर जावे
कुबेर रोवे[६] धन के आस, हनुमान जोरू[७] मंगावे
वैसो सब ही झूटो है रा, निंदे की बात सुनावे
सुमिंदर तान्हो पीयत कैसो साधु मांगे दान
बहेणि कहे जन निंदक है रे, वाको सांच न मान

मुसलमान शासकों के राजस्व में सन्तों का वर्चस्व बढ़ता गया। जिस प्रकार पंढरपुर के विठ्ठल की मूर्ति विजयनगर में 'श्री विजय विठ्ठल' के विग्रह से

[१] पाठान्तर : 'अंगी' : कोल्हारकर (२६७), डॉ० विनयमोहन शर्मा (६)
[२] पाठान्तर : 'फूल नाहीं फल है' : कोल्हारकर, डॉ० विनयमोहन शर्मा (वही)
[३] पाठान्तर : 'चरन चुराई' कोल्हारकर (५६६), डॉ० विनयमोहन शर्मा (८)
[४] पाठान्तर 'चंबर कू भाग जलावे': कोल्हारकर (५६६) डॉ० विनय-मोहन शर्मा (८)
[५] पाठान्तर 'भोगी कहा रे' वही वही पृ० १६०
[६] पाठान्तर 'सोवे' वही वही
[७] पाठान्तर 'नीर' डॉ० विनयमोहन शर्मा हि० म० स० दे० पृ० १६०

प्रतिष्ठित हुई, उसी प्रकार कालान्तर में औरंगजेब के शासनकाल में खड़की औरंगाबाद के औरंगपुरे में 'श्री विजय पांडुरंग' की मूर्ति अनागोंदी से लाकर एकनाथ मंदिर में स्थापित हुई। नासिक के श्री मध्वाचार्य के भक्त नारायणाचार्य ने त्र्यम्बकेश्वर का प्रसाद जान अपने पुत्र का नाम 'त्र्यम्बक'[१] रख दिया और श्री मध्वाचार्य ने इनमें शंकर की तेजस्विता देख इनका नाम मध्वमुनीश्वर[२] रख दिया। शृंगेरी, भोगूर, शेषाद्रि, पंढरपुर, काशी, गया आदि की तीर्थयात्रा कर वे औरंगाबाद आ गये। इन्होंने अपने भजनों में यहाँ के तीर्थस्थानों तथा देवी-देवताओं का नमन किया है। कहा जाता है कि मध्वमुनीश्वर ने औरंगाबाद के जासुदपुरे के कुएँ से शिवलिंग निकालकर वहाँ उसकी स्थापना की, पर सन्निधि में गंगा लाने के लिये उन्हें 'सेंदुरवाड़ा'[३] आना पड़ा, जहाँ आज भी गजानन के मन्दिर के पास उनका बनाया हुआ 'भागीरथी कुंड' है। श्री गुरुलीलामृत मध्वनाथ चरित[४] के अनुसार यह खड़की नामक छोटा-सा ग्राम है, जहाँ व्याघ्र का पीछा जम्बूक करता है अर्थात् जरामरणादि से कातर मन, गुरु-उपदेश प्राप्त जीवात्मा का पीछा करता है भावार्थ यह कि यह एक सिद्धपीठ है जहाँ 'निति निलि सिआला सिंहे सम जुझ अ' और जिसे आलमगीर ने विस्तीर्ण कर अपनी राजधानी बनाई और जिसका नाम औरंगाबाद रखा। मध्वमुनीश्वर औरंगाबाद आये और निपट निरंजन से मिले। मध्वमुनीश्वर का समय सन् १६८६ से सन् १७३१ तक था। इनकी गुरुपरम्परा इस प्रकार है :—

आदिनारायण—ब्रह्मदेव—नारद—व्यास—शुक्राचार्य - मध्वमुनीश्वर

मध्वमुनीश्वर ने भगवान् रामचन्द्र तथा श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन बड़े सरस और मधुर हिन्दी पदों में किया है। **'भज मन साहेब मोहन लाल'** के साथ-साथ गोपियों के उपालंभ गीत **'मुरली भई सौगण री हमारी'** आदि भजन बड़े सुन्दर हैं। भगवान् और भक्त का सम्बन्ध सूत्र 'तुम' और 'मैं' से प्रगट किया जाता है। यमक पर आधृत यह पद प्रभावपूर्ण है :—

तूं है रामजादा रे, मैं तो हरामजादा रे ॥
न करूं तेरी खिजमत रे, मेरे पर तूं खीज मत रे ॥

---

[१] राजाराम प्रासादी के मतानुसार इनका नाम 'महादेव' था।

[२] 'कहत हैं माधोनाथ गोसाईं नासिक तिर्मकवाला'

[३] 'इटे वरी उभें ठेलें, सेंदुरवाड्यांत भेट लें'

[४] हस्तलिखित प्रति, द्वारा श्री किशनराव कुलकर्णी, सेंदुरवाड़ा

इस दुनिया कूं जर दे रे, मेरे पर तू नजर दे रे ।।
जब लग मिलती सबजी जी, तब लग कहते सब जीजी ।।
दो दिन की ये दौलत जी, आखर खाना दो लात जी ।।
बाजे नगारा डुबडुब जी, माया नदी मों डूब डूब जी ।।
जागीर वजुद खेड़ाह जी, यहाँ तो बहुत बखेड़ा जी ।।
तेरा नाम न गाऊँ रे, चेला पुरान गाऊँ रे ।।
मध्वमुनीश्वर पेदास्ती, उसकी कर तू निगादास्ती ।।

मध्वमुनीश्वर और अमृतराय की भेंट कहा जाता है—औरंगपुरे के चौक के पास (जहाँ उनका अमृतेश्वर मंदिर है) हुई और अमृतराय ने मध्वमुनीश्वर से 'भोंदू' कह कर तीखा मजाक किया। मध्वमुनीश्वर ने उस बालक का नाम पूछा ? उत्तर मिला 'अमृत',[१] तो मध्वमुनीश्वर ने कहा 'तुम्हारे माता-पिता ने तुम्हारा नाम 'अमृत' रखा है, भगवान् ने तुम्हें अमृत समान वाणी दी है, तुम अपनी मधुर वाणी का उपयोग इस तरह करोगे ? इन शब्दों ने ग्यारह वर्षीय बालक 'अमृत' में काव्य की स्फूर्ति फूंक दी और तत्काल उन्होंने 'कटाव' छन्द में रचना की और देवी के सम्मुख रख दिया। 'अमृत' का जन्म सन् १६६८ में फत्ते खेर्डा (साखर खेड़ा) में हुआ था, वहाँ से वे औरंगाबाद आ गये। पिता शंकर राय की मृत्यु के बाद उनकी नौकरी का पद तथा उनकी 'राय' पदवी अमृत को मिल गई और वे 'अमृत' से 'अमृतराय' हो गये। उनके श्वसुर विठ्ठलराय बेगमपुरा में रहते थे और यहीं उनका दफ्तर था। अमृत-राय औरंगाबाद के मुगल सूबेदार बीसा मोरो के 'सीर दफ्तर' थे।[२] उन्होंने अपने आपको 'अमृतराय नवसिदा'[३] लिखा है जो नविश्त = लिखना + ख्वांद = पढ़ना से बना है। उनका एक छंद है :—

"खाविंद छंदी चरणारविंदी
फर्जन्त बन्दा हुजूरात बंदी
जी जिन्दगी धुंदि करीत फंदी
ती बंदगी मंदिल बेइ चंदी"

---

[१] 'अंबाजिता अमृत पावन नाम ज्याला'—अमृतराय कविता संग्रह।
[२] औरंगाबाद गजेटियर पृष्ठ ३८३।
[३] गुण लेखक मोहरीर अमृत घरि बसल्या घे तहरीर, पृ० १२४ पद १६।

इन्होंने अम्बिका सरस्वती से भागवत्, पुराण, वेदांत आदि पढ़ा था। इनकी गुरु परम्परा इस प्रकार है :—'नारायण विधि नारद व्यास
शुक मध्वश्री अमृत विलास' इनका एक पद है :—

'ब्रह्मरात मुनि सप्र में बदावा हो ॥५०॥
अंशुक विरहित शुक विहरत जो किंशुकवत् फुलला हरिभजनों
भक्ति विरक्ति पक्ष द्वय राघव उड़त फिरत अनुभव चिद् गगनों
देवरात शुक नलिके अड़कुनि ऊर्ध्वपंथ करि फिरि फिरि वदनों
जनक प्रथित श्रुति मथित भागवत कथित मलिन मति उलथित भविह्रुनिं
पदवितत तनय अभिमन्यु तनय कार अति विनय श्रवण समजुनिं
व्यास हृदय पंजर शुक माशुक आशुकरिति हरि हरि हरि अनुदिनों
पद्मनाथ विधि साम्प्रदाय मत अमृतोद्‌गार व मृदुवचनों।'

अमृतराय के हिन्दी पद मधुर, सरस, मोहक और आकर्षक हैं। कीर्त्तन-सुख का आनन्द प्राप्त कराने के लिये ही अमृतराय का जन्म हुआ था।[१] महा-महोपाध्याय डॉ० द० वा० पोतदार का कथन[२] है 'तुकाराम और रामदास की अन्तर्भेदी वाणी स्तब्ध हो गई और वाङ्मय में कंकण की रुणत्कार तथा नूपुर की झणत्कार सुनाई देने लगी। ऐसे समय में मध्वमुनीश्वर और अमृतराय आदि ने अपना वाग्विलास किया···ये उत्तम कीर्त्तनकार रहे होंगे। इनके कितने ही पद्य मधु के समान मधुर रसपूरित हैं। '···अमृतराय ने कविता के क्षेत्र में 'कटाव' छंद का नूतन प्रयोग कर काव्य-रसिकों को मुग्ध किया।'[३] श्रीराम और श्रीकृष्ण की लीला-वर्णनों के साथ दखनी में लिखा हुआ 'सुदामाचरित्र' हिन्दी की मधुर सम्पदा है। सन् १७५३ में अमृतराय ने एकनाथ समाधि के पास समाधि ली और शिवदिनकेसरी ने जो स्वयं हिन्दी के सन्त कवि हुए हैं, अपने हाथों उनकी देह गंगा में समर्पण कर हरि के हाथों दे दी। शके १६७५, चैत्र शुक्ल षष्ठी के दिन चक्रतीर्थ पर की गई शिवदिनकेसरी की रचना नीचे दी जाती है :—

---

[१] मोरोपन्त—सन्मणिमाला।

[२] हिन्दी को मराठी सन्तों की देन : डॉ० विनयमोहन शर्मा, पृ० १६७।

[३] तत्रैव पृ० २०४।

प्रतिष्ठान हे क्षेत्र चांगले गंगा वाहे बरी ग्राहे ब्रह्मादि नगरीं
लोक येउनि स्नाने करितीं वदनीं गातीं हरी नारी भरिताती घागरी
घाट चांगले बुरूज बांधिले चिरे रोविले, सज्जन ये उनि बैसति वरी
ऐक साजणी तेथे नांद तो स्वामी शिवदिनकेसरी भोळ्या भक्ताला उद्धरी
चक्रतीर्थी राय जी समाधि जा उनि केली बरी धांवुनि भेटिस ग्राले हरी

शिवदिननाथ नाथ-परंपरा के सन्त थे बाद में ये केसरीनाथ के शिष्य हुए, 'शिवदिन केसरी बोध गुप्त गुरु सत्य ज्ञान सुरतरु' से इनकी गुरु परम्परा इस प्रकार प्रसिद्ध है : शिवदिननाथ, केसरीनाथ, उद्बोधनाथ, गुप्तनाथ, गैबीनाथ, सत्यामलनाथ, ज्ञाननाथ। इन्हीं शब्दों से दूसरा अर्थ होता है—कल्याण रूप, काल के लिये सिंह, प्रबोध परमार्थ रहस्य की गरिमा से युक्त, सत्यस्वरूप, ज्ञानमय यह कल्पतरु थे। इनका समय सन् १६६८—१७७४ तक था। इनके हिन्दी छन्द प्रकाशित हुए हैं[१] केसरीनाथ के दो प्रसिद्ध शिष्य थे :—मल्हारीनाथ और शिवदिननाथ जिन्होंने राशिन और पैठण में पृथक् मठ स्थापित किये। पैठण के इसी मठ में प्रतिष्ठान महाविद्यालय स्थापित हुआ है। पुत्र नरहरिनाथ तथा जनार्दन स्वामी के वंशज महीपति इन्हीं शिवदिन केसरी के शिष्य थे।

सिद्धयोगी निपट निरंजन

इतिहास कहता है कि मुगल सम्राट् शाहजहाँ ने खड़की ग्राम पर मलिक अंबर द्वारा बसाये गये विस्तीर्ण नगर का नामकरण अपने तृतीय पुत्र औरंगजेब के नाम पर **औरंगाबाद** किया। शाहजहाँ की मृत्यु के पूर्व ही ओड़छानरेश महाड़ सिंह ने **पहाड़ सिंहपुरा** बसाकर **सुनेरी महल**[२] बनवाया। इधर अक्तूबर ८, सन् १६५७ में मुहम्मद अकबर के जन्मते ही शाहनवाज़ खाँ की पुत्री औरंगजेब की पत्नी दिलरस बानू[३] का देहान्त हो गया और 'राबिया उल दौरानी' के साध्वी नाम से नगर के सीमान्त पर उसे दफना दिया गया और वहाँ युवराज आजमशाह ने ताजमहल का प्रतिरूप यह स्मारक **बीबी का मकबरा**[४] बनवा दिया। धीरे-धीरे **हनुमान टेकड़ी गोगापीर**, दतियानरेश शुभ-

---

[१] तत्रैव पृ० ३८७ से ३९० तक।

[२] अत्रैव निपट निरंजन पृ० ७-८।

[३] Sarkar's Short History of Aurangzeb Anecdotes P. 13-22.

[४] Aurangabad Gazetteer, P. 594.

करण का स्मृति-चिह्न **सुकनपुर, देवगिरि मार्ग** का यह परिसर सन्तों का केन्द्र-स्थल बन गया।[१] निपट निरंजन ने आलमगीर को यही तो बतलाया कि **'सुनेरी महल बीच सोना ही तो सोन'** है।[२] लोगों ने 'सुनेरी महल' को **'सुन्न हरि महल'**[३] समझ उसे नाथपंथ के शून्य का सूचक मान लिया। निपट निरंजन ने चर्पटनाथ को अपना गुरु माना है। वर्ण रत्नाकर ग्रन्थ की सूची के अनुसार ३१वें स्थान पर चर्पटी का नाम आता है। राहुल सांकृत्यायन की वज्रयानी सिद्धों की सूची में संख्या ५९ पर चर्पटी का नाम आता है। नवनाथ की कथा में चर्पटनाथ का जन्म स्खलित वीर्यकणों के पैर से चर्पट करने से माना गया है। कौलज्ञान निर्णय के अनुसार चर्पटी गोरख के शिष्य थे। **'गोरख निपट शरीर'** कथन के अनुसार गोरख ने ही निपट के शरीर में प्रवेश किया है। चर्पटी का समय प्रो० टुची के मतानुसार १०वी शताब्दी कहा गया है। चर्पटनाथ को गुरु मानने का अर्थ चर्पटनाथ की योगसाधना को स्वीकृत करना है।

निपट निरंजन की सन्त-वाणी को दो भागों में विभाजित किया गया है। पहला, निपट निरंजन-आलमगीर संवाद है, जिसमें सम्राट् और सम्राट् से बड़े ज्योतिर्मय सम्राट् के प्रश्नोत्तर हैं। इसमें जहाँ आत्मज्ञान की जिज्ञासा है वहाँ समाज के मानसिक गठन की परिकल्पना तथा मर्यादा का समर्थन है। दूसरा, निपट निरंजन के पद्यों का है, जिसमें विधि-निषेध, सुखद-दुखद, शुभ-अशुभ, तत्वज्ञान, साधना, नामस्मरण, भक्ति, योगाभ्यास की विवेचना है। हिन्दू-मुस्लिम एकता के स्वरूप में परम ज्ञान की घोषणा सन्तों की उपलब्धि रही है। जहाँ वे **ब्रह्मा, रुद्र, राम, कृष्ण, भवानी, गणेश, ध्रुव, प्रह्लाद, भीलनी, सदना, नामा, रैदास, चोखा** की ओर संकेत करते हैं वहाँ **अल्लाह, खुदा, रब, ईसा, मूसा, नमरूद, शदाद, फिरोन, हमान, दारा, सिकन्दर, बाबर, हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर** की ओर भी संकेत करते हैं। एक ओर जहाँ **अष्टांगयोग त्रिकुटी, नाद बिन्दु, अनहद, चैतन्य, दिव्यजोति, परात्पर, चारों धाम अड़सठ तीरथ**, चारि बानी **परा, पश्यन्ती, मध्यमा, बैखरी ॐकार, सतनाम, रंकार** आदि ध्वनियों की बातें करते हैं, वहाँ दूसरी ओर चार चक्र, **बाजबुल, सुम्कनूल,** मुम्तनूल, **आरिफुल वजूद अम्मारा, लवामा, मुलेहमा, मुतमइना नफ्स, मलकूत, जबरूत, लाहूत, आहूत** आलम, **मारिफत, शरीयत, तरीखत, हकीकत, तबक़,**

---

[१] निपट निरंजन पद—२५ अत्रैव,

[२] अत्रैव निपट निरंजन पद—२७

[३] दिग्विजयभूषण : गोकुल प्रसाद 'बृज' ९० निपट, पृ० ५४।

हक, जिक्र, कल्मा, नमाज, रोजा, सिज्दा, मक्का, मदीना, बगदाद, अजमेर कल्ब के रोशन की क्रिया, रूह के रकान की खोज, जहूर, जमाल, तूर, नूर, हूर, नूर की चर्चा भी करते हैं। और तो और, जहां निरंजन की छाया, चन्दा रानी, चन्दा बाला, एक लड़की का संकेत मिलता है, वहाँ मरद के आशिक, खूबसूरत के खजास की भी कल्पना के दर्शन होते हैं। गोरख के 'नव दरवाजा देवै ताली। दसवाँ मधें होइ उजाली' को देख निपट की यह पंक्ति 'नऊ दरवाजे दसवीं खिड़की' तो क्या मराठी 'नव द्वारा सी घालुनि कुलुपे दहावा उघड़ा' तक का स्मरण आ जाता है। 'मरने से मर पहिले' को सुन फारसी 'मूतू कब्ला अन्ता मूतू' की याद आ जाती है; पर सन्त ज्ञानेश्वर का 'गगन मंडली नारी सुकुमार दिसे' का पूर्व संकेत तो हम कदापि भूल ही नहीं सकते। 'चन्दा रानी' तथा 'चन्दा बाला' इसी का परिणाम है।

सिद्ध साहित्य के ऐतिहासिक संकेतों को यहाँ सिद्धपीठ मान लिया गया। राजा गोविन्दचन्द्र तथा मयनावती की कथा के अनुसार ये राजा गोपीचंद द्वारा भूमि खोदकर गाड़ दिये गये थे, जहाँ से इनके शिष्य काण्हपा ने इन्हें मुक्त किया था।[१] भर्तृहरि गोरख के शिष्य थे और गोपीचन्द काण्हपा के शिष्य थे। गोरख के गुरुवचन की सिद्धि, राजा भरथरी का निश्चय तथा गोपीचन्द के परिचय को मैनावती के प्रतीक रूप में मान लिया गया, जो गोरख की शिष्या, भर्तृहरि की बहिन तथा गोपीचन्द की माता थीं। योगियों ने मैनावती को मैनागिरि मान लिया और उसे पृथ्वी का माथा समझ लिया। वाराही को आकाश का पोत मानना राघवानन्द की सिद्धान्त पंचमात्रा के अनुसार 'दन्त वराह का मुलक-मुलक खेल आवे'[२] के संदर्भ से अभिज्ञात होता है, जिसे निपट ने उत्तर में 'वाराह के माथ ढहाना है' शब्दों द्वारा संकेतित किया है। चन्द्रगिरि गोरख की जन्मभूमि होने के कारण योगियों के चन्द्र की ज्योति मान लिया गया है। सोहं वायु की नाभि योग की वह आरंभभूमि है, जिसे गोरख ने 'पवन का थंभा' कहा है, और जो उस कदली वन की ओर संकेत करता है जहाँ से गोरख मच्छीन्द्र को वापिस लाये थे। गोरख ने 'निरंजन देवता पाणी का जामन' कहा है कदाचित् इसी आधार को लेकर निपट ने उत्तर में 'पानी का मूल निरंजन के है दीद माहीं' कह दिया है, पर पानी के साथ समुद्र की लांबी का प्रश्न नया है। यह जालंधरनाथ का सूचक है। जालंधरनाथ के

---

[१] नाथसम्प्रदाय : (द्वितीय संस्करण) हजारीप्रसाद द्विवेदी पृ० २०५-२०६।

[२] योगप्रवाह : पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल।

उड्डियान देश का एक भाग संभल[१] है; संभी शब्द उसी दिशा की ओर संकेत करता है। जालंधर नाथ संभलपुरी के सिद्ध राजा इन्द्रभूति के बहिनोई तथा संभलनगर की योगिनी बहिन लक्ष्मीकरा के पति थे। निपट महाराज ने उदैगिरि को सूर का तेज कहा है। उदैगिरि से उदौनाथ[२] का संकेत है, जो महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार द्वारा मान्य नाथसम्प्रदाय की गुरु परंपरा में मच्छीन्द्र के गुरु माने गये हैं। सृष्टि नियन्ता आदि पुरुष माया के उपरान्त 'राग' कंचुक से आबद्ध है और देह-रस से जीवित है। प्रश्नोत्तर में 'गणेश की स्वाबी' का संकेत अवश्य ही कौतूहलपूर्ण है। 'गोरख गणेश गुष्टि' से गणेश का सम्बन्ध योगियों से देवता के रूप में स्पष्ट हो चुका था। सन्त ज्ञानेश्वर के छोटे भाई सोपानदेव ने 'पंचीकरण' ग्रन्थ में 'गणपति निरंजन' का वंदन किया है।[३] उनका यह भी कथन है कि पहला चक्र मूलाधार है, गणेश वहाँ रमता है। हठयोग की क्रिया भी मूलाधार चक्र से आरम्भ होती है, और कबीर ने[४] भी इसका देवता गणेश माना है और यहीं से शून्य में स्थित अमृतकुंड में अर्थात् मन रूपी सरोवर अथवा मानसरोवर में जाने की क्रिया होती है।[५]

निपट निरंजन और आलमगीर के प्रश्नोत्तर में गुरु की मान्यता की बात भी प्रस्तुत की गई है। गुरु वह है, जो योगसाधना करता हो। जो सूर्य अर्थात् पिंगला नाड़ी का मोल कर सकता हो, ॐ को तौल सकता हो, जो शरीर में लघुत्व की सिद्धि प्राप्त कर पृथ्वी से उठकर अधर भूल सकता हो साधनालीन पूत हो बाँझ माया को पढ़ा सकता हो, जिसके शरीर में पंचभूत आत्मज्ञान की ओर उन्मुख हों, सोऽहं के धागे का जो सूत कातता हो, योगासन ही जिसका घर हो, जो परमज्ञान की प्राप्ति कर चुका हो, जहाँ बिना सूर्य-चन्द्र के ब्रह्म का प्रकाश सतत चमकता हो, जहाँ योगी की माता क्षमा हो, पिता सत् हो, जिसकी उन्मनि धूल सूक्ष्म मार्ग की राह पर चलाती हो और जो ब्रह्ममय हो, वही सच्चा गुरु है।[६]

---

[१] नाथसम्प्रदाय : हजारीप्रसाद द्विवेदी (द्वि० सं०) पृ० ८६।

[२] भारत इतिहास संशोधन मंडल, पूना : चतुर्थ सम्मेलन वृत्त, पृष्ठ, २०।

[३] डॉ० प्रभाकर माचवे : हिन्दी और मराठी का निर्गुण सन्त काव्य पृ० १६५।

[४] कबीर और कबीरपंथ : केदारनाथ द्विवेदी, पृ० १२३।

[५] निपट निरंजन : पद, ३२ अत्रैव

[६] अत्रैव, निपट निरंजन : पद ४४ :

भक्तकवि मानपुरी

पुरी सम्प्रदाय के षड्दर्शनज्ञाता खेमपुरी के शिष्य निर्गुणसगुण के समर्थक मानपुरी रागरागिनियों के गायक भक्तकवि हैं। उनके राम और कृष्ण पूर्णब्रह्म हैं जो कहीं **निर्गुनिया साहब** (३२०) **अलखनिरंजन** (४११) **सहज** (३६०) के रूप में कहीं **जनम जनम के मीता, राम लछमन सीता,** (३०७) **राम राजा राजीवलोचन** (६०) **नन्दनंदन** (१३२) **कुंवर कन्हैया** (१३३) **कान्हा लंगर** (१४१) **मनमोहना** (१३६) **कानुड़ा** (६) **अम्बा** (१६) **शंभु** (२६) **आदिनाथ** (४) **आदिभवानी** (२३) **गणपति** (२८) कहीं **अल्ला** (१६) **खुदा** (१७) नामों से वर्णित हैं। बीजाक्षरों को एक राग में बाँधकर मानपुरी कहते हैं **'अब मैं अक्षर एक पढ़ो हैं'** चाहे उसे 'अकार'[१] कहो या 'अलिफ'। शुद्ध, सात्विक प्रेम ही भक्ति का रूप है, अनुरक्ति और आसक्ति उसकी शक्ति है, तथा विश्वास उसका शील है। प्रेम के संयोगपक्ष (२६०) (२६८) (३०४) (४८०) तथा विरहणी भक्ति (११५) नेहरा जोर बिरहनी छकी (२८०) के वियोग पक्ष में शृङ्गारात्मकता सजीव हो उठी है, हर्ष-विषाद, लालसा-आकुलता के भावों के साथ आत्मनिवेदन और आत्म-समर्पण की भावना प्रबल हुई है। विभाग की दृष्टि से **साजन झूलत मोही झुलावत** (१६८) में सावनतीज के हिंडोले का आनन्दातिरेक है तो **गरजत बरसत सावन आयो** (१६६) में विह्वलता का उद्दीपन है। मिलन और विरह जिस वेला में एक दूसरे को छू लेने में लालायित हो मचल उठते हैं वह 'होली' है। होकर ले लेने में ही होली की सार्थकता है। मोहन रूप और नवल किशोरी का रासमंडल तथा होली का रंगोत्सव उल्लास की चरम सीमा है। **रंग भरि डाली पिया केशर भर पिचकारी से हरि रंग भींजा तिन चीन्हा, रस बस कीन्हो नारी** की रंग-गुलाल लीला में

'प्रभु रंग रंगीलो रसिक रसायन पागे
पल पल फागु होत नयन मों'

केवल रंग ही नहीं भरता, वरन् रसिक हृदय की रंगलहरी गा उठती है :—**'गोकुल में हरि रंग बरसे, भींजत फाग भई सुभई'** अकल कला के इस आनन्द-सन्दोह में कोई गोपीकान्त से 'मान' करे तो मानपुरी समझाते हैं :—

---

[१] 'अकार उकार मकार ओंकार, प्रणव हा साकार सुरेख रे'
—ज्ञानेश्वर

[२] 'अकार उकार मात्रा इनके परे बताया'
—कबीर

"पिय अपने सो मान न कीजै
येति बात मान ले मोरी
बिलम न कीजै उमर थोरी'
"मान गुमान छोड़ दे बावरी प्रीतम के रंग रंग"

'एकाकी न रमते' की इच्छा देख कोई कहे 'हौ नहिं बोलौं संकुच की मारी, सासु ननदिया जागे' तो भक्त कवि कहते है 'मानपुरी होरी खेलियो पिया संग, रहसि रहसि अर्धंग' तब तो विश्व के रंगोत्सव में ऐसा रंग मचा कि प्रेम की उमंग में 'प्रभु के रंग रंगी तन मन भयो अपंग' । भरम दूर हो गया, करम जाग उठे । देश काल की मर्यादा तोड़ यह एक लोक की होली तीन लोक तक फैल गई । रागपरक इन गीतों का आनन्दोल्लास निर्गुण सन्त कवियों की आध्यात्मिक कल्पना में सजीव हो उठा । मानपुरी ने गाया :—

'सुन हो लाल अब होरी आई
पंच रंग चुनरी देहु रंगाई
तुम हि करो केसरिया बागो
इन नैनन मां रहे बस माई ।' फिर तो
'सात पाँच की बनि मिलि मिलि आई रंग मचो दिन रात'

ग्यान ने गुलाल रूप ग्रहण कर लिया, अनहद कहीं, डफ कहीं बीन की ध्वनि में गाने लगा :—

'लाल ही लाल भई सब बनिता
लाल ही लाल गुपाल
मानपुरी लालन की लाली
देख भई हो निहाल'

'सहज सहज परम पद' पहुँच गया । जीव अपंग, अर्धंग अंशांशी न रहकर पूर्णब्रह्म बन गया । आत्मद्रष्टा ने ज्ञान और ध्यान की आँखों से देखा :—

'आपहि पुरुष आप ही नारी
आपहि आप उजियारा'

भक्त कवि मानपुरी ने इस विराट् विश्व में परब्रह्म की सत्ता को 'पुरुष' रूप में पाया और जड़चेतन सत्ताओं को पत्नियों के रूप में । आनन्द का पर्यवसान ब्रह्मानन्द में हो गया । सांख्यदर्शन के अनुसार यह प्रकृति और पुरुष

का खेल है, इसी वर्णन के फलस्वरूप **'कपिल मानपुरी भये'**[१] की उक्ति प्रचलित हो उठी ।

सन्त अनन्तनाथ

'अनन्त भजनों में रंग भरो, सन्तन की निज बानी' से स्पष्ट है कि ज्ञान-मार्गी सन्तों की वाणी मे इन्होंने भक्ति का रंग भरा है । सन्त अनन्तनाथ के स्वरचित पदों में **एका जनार्दनी**[२] तथा **जनी जनार्दनी**[३] शब्दों से ज्ञात होता है कि अनन्तनाथ जनार्दन स्वामी के शिष्य एकनाथ की शिष्य-परम्परा में आते हैं । डॉ० विनयमोहन शर्मा ने इन्हें 'अनन्त बुआ' जानकर उनके चचेरे भतीजे का पुत्र समझ लिया । इनकी अधुना प्राप्त जीवनी से यह सिद्ध नहीं होता । डॉ० विनयमोहन शर्मा ने अनन्त महाराज के एकनाथ से अनुग्रह प्राप्त करने की संभावना भी बतलाई है;[४] परन्तु दोनों के जीवनकाल में लगभग ३०० वर्षों का अन्तर है ।

अनन्तनाथ के परब्रह्म निर्गुण सगुण से परे हैं । धार-निवासी डॉ० गजानन शर्मा ने अपने शोध-ग्रन्थ 'हिन्दी निर्गुण भक्ति-काव्य' में औपनिषदिक विचार-धारा में लिखा है :—'उपनिषदों में अनेक प्रकार के विरुद्ध धर्मों का उल्लेख किया गया है; सन्तों ने भी अनेक प्रकार के परस्पर विरोधी धर्मों की स्थिति का उल्लेख किया है । औपनिषदिक परंपरा में अनन्त महाराज ने परम तत्व की स्थिति सम्बन्धी विरोध प्रकट किया है । इनका विश्वास है कि वह घट-घट में व्यापक भी है और उससे अलग भी ।[५]···महाराष्ट्र के सन्त अनन्त ने भी वेदों की साक्षी देते हुए परमात्मा को गुणातीत और गुणों का साक्षी माना है ।[६] बात यह है कि सन्त अनन्तनाथ ने 'मानव देह' को पुण्य-प्रताप माना है । ये परमात्मा को सत् चित् आनन्द स्वरूप मानते हैं । आनन्द की अनुभूति के लिये निर्गुण से सगुण रूप ज्यादा प्रभावपूर्ण होता है । इनका पद है :—

---

[१] अत्रैव पृ० ११ तथा पृ० ७९।

[२] देखिये पद संख्या, १३०, १३१, १९९, २१२, २१९, २२६, २८६ ।

[३] देखिये पद संख्या २९५ पृ० ३४१ तथा सं० ३०० पृ० ३४२ ।

[४] डॉ० विनयमोहन शर्मा : हिन्दी को मराठी सन्तों की देन, पृ० २७४ ।

[५] अप्रकाशित ग्रन्थ पृ० ४६४ तथा पृ० ४६७, उदाहरण जो घट माहीं, व्यापक सो ही घट-घट मों अगसो । पद—२६६ जग सो न्यारो, जग अभिलासी । पद—२८५ ।

[६] गुनातीत हे गुन को साखी भाको वेद पुरान । पद—३०० ।

'अनन्त माही अनेक लीला सगुनपनो में निरगुन की
परमातम प्रभु अलख लखा वे नित्य नयी नित् सत् चित् को'[१]

अनन्तनाथ तो गुणातीत की गुण लीला पर मुग्ध हैं। इनका मन निर्गुण सगुण के गुणत्व पर आश्रित हो विश्रान्ति प्राप्त करता है :—**'सगुन निर्गुन गुनपनों से जब बनो है मन विश्रामा'**[२] पूर्णत्व के दर्शन भी तभी सम्भव हैं। जागृत में सगुण रूप के दर्शन होते हैं, सोते में तो वह स्वप्न हो जाता है अतः **गुण, सेज पर नींद न आवे'** इनके लिये अभिप्रेत है। इनको तो सगुण की चटकी लगी है :—**'सतगुरु सांयीं अलख जगावे गुन सगुन परि चटकी रे'** [पद १६१—पृ० ३१०] इन्होंने मुक्ति को त्याग कर भगवान् से भक्ति लड़कर ली है—**'भगती दीन्हीं मुगती त्यज के अनन्त लर के करमायो'** [पद २३३, पृ० ३२७] जागृति, स्वप्न, सुषुप्ति के साथ तुरीय का आनन्द भी इनका इष्ट है :—

'प्रणव प्रभाती आतम तुर्य सरसती को संग लीन्हो' पद—३४१ इनके प्रेम और इनकी भक्ति में जोग-भोग, ज्ञानाज्ञान दरश, द्दष्टा, दर्शन, ध्यान, ध्यातपना सभी का भाव है, यहाँ तक कि 'भाव भरोसा' तथा 'प्रेम परोसा' का भी महत्व है। मिलन-सुख और विरह-वेदन दोनों का आनन्दानुभव है :—किन्तु मिलन से विरह इष्ट है। **'मीन तलफे नित पानी मों'**[३] पद पढ़ते-पढते मानपुरी के 'पानी मों मीन प्यासी' तथा 'देखो री पानी प्यासा' एवं समर्थ गुरु रामदास के पद 'पानी में प्यासा मुवा रे अल्लम पानी में प्यासा मुवा' की याद आ जाती है। इनके पदों में प्रपत्ति तथा शरणागति की भावना भी पायी जाती है :—उदाहरणार्थ :—

(१) आनुकूल्य संकल्प— पद १४२, २१२ २१६
(२) प्रातिकूल्य वर्जन— पद ३१, २५४, २६६, २६३
(३) भगवान् की रक्षा में विश्वास— पद २४३, २४४, २४६
(४) गोप्तृत्ववरण— पद २३६, २४२, २५५, २६६, २८२
(५) आत्मनिवेदन— पद २३८, २४०, २६३, २७५
(६) कार्पण्य प्रपत्ति— पद ४४, २७८, २४, ३०, २१७, २२६

मनःप्रबोध, हृदय संबोधन के पद भी इन्होंने लिखे हैं। समता दर्शन,

---

[१] अनन्तनाथ :—पद १४५, अत्रैव पृ० ३०८।
[२] वही : पद ३४८, पृ० ३५४।
[३] अनन्तनाथ : पद संख्या २९६ पृ० ३४२।

शान्तिस्वरूप, सन्त महिमा, सद्गुरु आदि के पद भी रुचिर बन पड़े हैं। इनकी हिन्दी काव्य रचना में कौशल दिखाई देता है, यद्यपि कहीं-कहीं छन्दोभंग का दोष खटक जाता है। अन्त में डॉ० विनयमोहन शर्मा के इस वाक्य से इनका काव्य-परिचय समाप्त करेंगे—अनन्त महाराज ने गेय पदों के अतिरिक्त चौथाई छंद का भी प्रयोग किया है, जिसे संभवतः इस छन्द का प्रयोग करने वाले ये प्रथम मराठी सन्त कवि हैं।'

भक्त कृष्णदास

भक्त कृष्णदास औरंगाबाद के चौराहा मुहल्ले के निवासी थे। अपने कई छन्दों में इन्होंने 'सद्गुरु' का वर्णन किया है। समर्थ गुरु रामदास का संकेत इनके इस पद में मिलता है—**'सावधान कर सावधान कर मंडवे बीच पुकार'** परन्तु इन्होंने अपना मुरशद मानपुरी महाराज को माना है, यद्यपि इनके समय में लगभग २०० वर्षों का अन्तर है। इनका तत्संबंधी आरती-पद भी दिया गया है। हरिगुण गाने वाले को इन्होंने हरिजन कहा है। जन्म, देश, काल, भाषा की सीमाओं से परे वे सत् रहनी तथा कथनी को प्रधानता देते हैं। श्री भागवत्, गीता, महाभारत के श्रीकृष्ण इनके इष्ट हैं। रामलीला तथा रामनाम का माहात्म्य इन्हें प्रिय है। इनका पद है :—

प्रीत बिना रस प्रेम कहाँ सो पाइये।
अनुभव बिन आनन्द कहाँ सो लाइये॥[१]

शुद्ध मन, चेत मन, अखंड मन को बारंबार ये प्रबोध देते रहते हैं। विनय के पद भी इनके सुन्दर बन पड़े हैं। कलियुग के कष्टसंकटों का वर्णन बड़ा ही सजीव है। ऐसा लगता है कि भक्त कृष्णदास का जीवन बड़ी कठिनाई में से बीता होगा। पद के अतिरिक्त इन्होंने 'गज़लें' भी लिखी हैं, जो कवाली के रूप में आज भी भक्तों द्वारा चौराहे के मन्दिरों में गायी जाती हैं।

श्री विनायकानन्द सरस्वती

संन्यासपूर्व इनका नाम ब्रह्मचारी विनायक बुवा टोपरे वेरूळकर था। इनका कुल मल्हार स्वामी की शिष्य-परंपरा में आता है। इनका पद है :— **'मल्हार स्वामी जो वेरूळासी आहे'**। वेरूळ अर्थात् 'एलोरा' के घृष्णेश्वर की स्तुति तथा सुप्रसिद्ध 'कैलासवर्णन' इनकी सुन्दर रचनाएं है। भाषा में माधुर्य

---

[१] सन्त कृष्णदास : पद—५२, पृ० ३८२।

तथा ओज है। मात्रिक और वर्णिक छन्दों में हिन्दी रचनाएँ इनकी मधुर हैं। यथा :—

'गोविन्द नमो सच्चिदानन्द।

नील कमल दल शामल कोमल निर्मल गोकुल चन्द।'[1]

हिन्दी के ये स्तोत्र बड़े ही भक्तिपूर्ण, सरस तथा सुमधुर हैं। कविता में कवि ने यमक के बल पर अपने नवीन-नवीन नामों की उद्भावना की है; यथा :—विनायक, बाल विनायक, लक्ष विनायक, सिद्धि विनायक, कवि नायक शशिरविनायक। मराठी, हिन्दी, संस्कृत की कविताओं के अतिरिक्त इन्हें अंग्रेजी का भी अच्छा ज्ञान था; परन्तु अंग्रेजी के प्रचलन, प्रसार, अन्ततोगत्वा उसके प्रभुत्व तथा वैपरीत्य की निन्दा भी करते हैं।[2] आपकी समाधि घृष्णेश्वर मन्दिर और शिवालय के बीच में स्थित मल्हारस्वामी की समाधि के निकट है। 'ब्रह्म-सरोवर' इनका मराठी का महान् ग्रन्थ है, जो अब तक अप्रकाशित है।

सन्तभूमि औरंगाबाद के पाँच परिचित तथा प्रसिद्ध सन्त और भक्त कवियों की इस हिन्दी-सन्त-वाणी का संचयन, संकलन, संपादन तथा प्रकाशन प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता, गर्व और हर्ष का अनुभव हो रहा है। एकनाथ संशोधन मन्दिर औरंगाबाद ने जन्म से ही मुझे इस सत्कार्य के लिये प्रेरणा दी है और मेरे प्रेरणास्रोत हैं तत्कालीन जिलाधीश श्री सेतु माधवराव पगड़ी, सेशन्स जज श्री बलवन्त राव घाटे, प्रिन्सिपल श्री गणेश नागेश थत्ते तथा सुप्रसिद्ध वकील श्री लक्ष्मणराव कुलकर्णी। मराठवाड़ा विद्यापीठ के कुल-सचिव श्री म० भि० चिटणीस के सत्परामर्श से मैं सदैव उपकृत रहा हूँ अतः उनके प्रति मैं अपनी विनम्र कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। श्री स्वामी लछमनगीर ने निपट निरंजन के पद्यों के संग्रह करने में, श्री बाबूराव छत्रपति ने मानपुरी के पदों के संग्रह करने में, मिलिन्द महाविद्यालय के ग्रन्थपाल श्री वडजीकर ने अनन्तनाथ के भजनों के संग्रह करने में, श्री गोवर्धन लाल अवस्थी ने कृष्णदास की रचनाओं के संग्रह करने में तथा श्री लक्ष्मणराव कुलकर्णी ने विनायकानन्द सरस्वती की कविताओं के संग्रह करने में जो उदार सहायता दी है यह ग्रन्थ उसी का प्रतिफलन है। मैं उनका हृदय से आभार मानता हूँ। श्री मधुकर बापूराव विटेकर, त्रिवेन्द्रम्, प्रा० पांडुरंग बाहेती, उमर्गा, श्री दयाशंकर शर्मा,

[1] श्री विनायकानन्द सरस्वती, पद—१६, पृ० ४२०।

[2] अ० विनायक बुवा टोपरे का मराठी-हिन्दी कविता संग्रह पृ० २४।

औरंगाबाद तथा श्री के० एच० गंगवरो जिन्होंने इसके लेखन आदि में अपना श्रमदान दिया है वे मेरे छात्र साधुवाद तथा धन्यवाद के पात्र हैं। मराठवाड़ा विद्यापीठ के उपकुलपति डॉ० नाना साहब तावडे का स्नेहपूर्ण प्रोत्साहन तथा एक हज़ार रुपये का प्रकाशनार्थ अनुदान मेरी निधि है, जिसके बल पर यह 'औरंगाबाद की हिन्दी-सन्त-वाणी' ग्रन्थ प्रकाशित और प्रस्तुत किया जा सका—उनके प्रति मेरा सबहुमान सम्मान निवेदित है। सुतराम्, महाराष्ट्र के हिन्दी-सन्त-काव्य पर किये गये डॉ० विनयमोहन शर्मा के गवेषणात्मक अनुशीलन कार्य की सन्निधि और अनुसंधि के निवेश को लेकर यह आंचलिक अनुसंधानात्मक लघु प्रयास 'औरंगाबाद की हिन्दी-सन्त-वाणी' उन्हीं के द्वारा प्राप्त निदेश और निर्देश का परिणाम है। मैं विनयावनत हो यह कृतज्ञता-ज्ञापन इस धर्मक्षेत्र से उस कुरुक्षेत्र की ओर संप्रेषित करना चाहता हूँ। इस साध और साधना की सुरभारती सुशीला के द्वारा जीवन की सन्ध्या में जो सत्कार प्राप्त हुआ है वह मेरा सौभाग्य और उनका सौहार्द है। अन्त में, प्रकाशक रामनारायण लाल बेनीप्रसाद, प्रयाग, उन परम स्नेही परिवार तथा उन कार्यकर्त्ताओं के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकाशित कर अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहता हूँ, जिनकी कृपा से यह विशालकाय ग्रन्थ आज हिन्दी साहित्य संसार को प्रस्तुत किया जा रहा है। अलम्

औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
संवत्सरारंभः शाके १८८९
संवत् २०२४,

विदुषां वशंवदः
भालचन्द्र तैलंग

सिद्धयोगी निपटनिरंजन

१. जीवन-परिचय   २. सन्त-बानी

सिद्धयोगी निपटनिरंजन
(भक्ति विजय ग्रन्थ से साभार उद्धृत)

निपटनिरजन की समाधि
(मराठवाड़ा विश्व विद्यालय के समीप)

सिद्धयोगी निपटनिरंजन

का

जीवन-परिचय

साहित्येतिहास में नाम-संकेत

'निपट' नाम का सर्वप्रथम उल्लेख हमें औरंगजेब के समकालीन कवि कालिदास त्रिवेदी द्वारा सं० १७५५ में संकलित 'कालिदास हजारा' में संख्या ७२ पर मिलता है। इसमें सं० १४८० से लेकर सं० १७७५ तक के २१२ कवियों के एक हजार चुने हुए कवित्त संग्रहीत हैं। इसी आधार पर शिवसिंह सेंगर ने अपने 'शिवसिंह सरोज' में कवि संख्या ४७० पर 'निपट' का नाम लिखा है। डॉ० ग्रियर्सन ने कवि संख्या १२६ पर निपटनिरंजन कवि का नाम-संकेत किया है। आचार्य भिखारीदास ने संवत् १८०३ में रचित 'काव्यनिर्णय'[१] में जिन कवियों की वाणी से ब्रजभाषा जान लेने के लिये कहा है उनमें सेनापति के बाद 'निपट' का नाम लिया है। 'निपट' का नाम उन 'जस के जहाज' १७५ कविन्दन के नामों में भी आता है, जिन्हें सुजानचरित[२] के कवि 'सूदन' ने अपना प्रणाम पुरस्कृत किया है। श्रीवास्तवकुल 'गोकुल' हरिजनदास ने अपने आश्रयदाता नृप महाराज दिग्विजय सिंह 'भूपविजय' की स्मृत में 'दिग्विजय भूषण'[३] नामक ग्रन्थ में 'निपटनिरंजन' के दो छन्दों का उल्लेख किया है। एक 'विकल्प' अलंकार के वर्णन में तथा दूसरा 'प्रथम उल्लेख' अलंकार के उदाहरण में। इनके एक छन्द में 'निपट निरंजन जू' शब्द का प्रयोग मिलता है। शिरगाँव मठपति भीमस्वामी ने अपने ग्रन्थ 'भक्तलीलामृत'[४] में 'निपटनिरंजन औरंगाबाजेंत' कहकर उनके जीवन की

---

१. काव्यनिर्णय : भिखारीदास, पृ० ६

२. सुजानचरित : सूदन, १९८० का० ना० प्र० सं० पृ० ६

३. दिग्विजयभूषण : गोकुलप्रसाद 'बृज', २०१६, पृ० ११५, १३८, १३६

४. भक्तलीलामृत : भीमस्वामी

दो चमत्कारपूर्ण घटनाओं का उल्लेख किया है। महीपति कवि द्वारा शाके १८६४ में लिखित 'भक्तिविजय'[१] ग्रन्थ के ७वें अध्याय में 'तंव निपट-निरंजन ते समर्थी' लिखकर उनकी एक चमत्कार-कथा लिखी गयी है, और उसी के आधार पर एक काल्पनिक चित्र भी दिया गया है। श्रीमध्वमुनीश्वर ने सन्तनामावली में 'निपटनिरंजन सूरदास मलूक'[२] कहकर इनका नामोल्लेख किया है। श्री मध्वमुनीश्वर की निपटनिरंजन के साथ भेंट करने का उल्लेख 'श्री सन्त अमृतराय चरित्र'[३] में कई बार आया है। देवगिरि के प्रसिद्ध भक्त कवि मानपुरी के पद में निपटनिरंजन का नाम, उनके हरिपदध्यान तथा उनके औरंगाबाद की गुफाओं के समीप के आवास का संकेत निम्नलिखित पंक्ति के इन शब्दों में मिलता है :—

'निपटनिरंजन वास गुहा मों हरिपदध्यान अपार'[४]

निपटनिरंजन के पदों में कहीं 'निपट', कहीं 'निरंजन', कहीं 'निपटनिरंजन' तथा कहीं 'निपटनिरंजन जू' नाम मिलता है। निपट निरंजन के आगे लगा हुआ 'जू' शब्द तो साफ बुन्देलखंडी है, जो उनके जन्मस्थान का द्योतक है। बुन्देलखंड में अब भी 'रामनिरंजन','अलखनिरंजन' आदि नामाभिधान प्रचलित हैं। अतः ये मराठी के निरंजन[५] नामक सन्तकवियों से भिन्न हैं। निपटनिरंजन उनके पंथ का नाम था; घर का दिया हुआ नहीं था; उनका नाम अज्ञात हैं— अतः यह कथन भ्रामक है।[६] निपटनिरंजन उनका नाम था और वे बुन्देलखंड के रहने वाले थे। आज भी उनकी जीवनी पर कई दन्तकथाएँ प्रचलित हैं।

जन्म संवत्, जीवनी तथा उनकी चमत्कार-कथाएँ

संवत् सोलह सौ असी, था अगहन का मास।
बुन्देलखंड द्विज गौड़ में, निपट भये प्रकास ।।

---

१. भक्तिविजय : महीपति, ७वाँ अध्याय, ओ० वी० २१-३५ तक तथा साथ में दिया हुआ चित्र
२. मध्वमुनीश्वरांची कविता, सन्त नामावली, पृ० १५२, अभंग ५२४
३. श्री अमृतराय चरित्र : विष्णु बालकृष्ण जोशी, पृ० २६, ३८, ४७
४. मानपुरी-पद
५. हिन्दी को मराठी सन्तों की देन : डा० विनयमोहन शर्मा, भूमिका [ञ]
६. लोकसत्ता : दिवाली अंक, १९५८ ले० म० ना० सहस्रबुद्धे, पृ० १८९

इस दोहे के अनुसार निपटनिरंजन का जन्म संवत् १६८० विक्रमीय है, परन्तु इनका जन्म शिवसिंह सरोज कवि संख्या ४७० के अनुसार संवत् १६५० वि० तदनुसार सन् १५६३ ई० में कहा जाता है। डॉ० ग्रियर्सन ने इसी आधार पर इनका जन्म सन् १५६३ ई० लिखा है।[1] स्व० नलिन विलोचन शर्मा ने अपने 'साहित्य का इतिहास दर्शन' ग्रन्थ में इसी संवत् को स्वीकार किया है।[2] डॉ० रामकुमार वर्मा ने इनको अकबर का समकालीन मानकर इनका जन्म संवत् १५६६ तथा आविर्भाव काल संवत् १६३० कहा है।[3] शिवसिंह ने इन्हें तुलसीदास जी की समता का सन्त माना है[4] और कदाचित् इसी आधार पर परशुराम चतुर्वेदी ने इन्हें उनकी समता का सन्त न कहकर गोस्वामी तुलसीदास का समकालीन मान लिया हो।[5] किन्तु सर्वेक्षण ३८६ के अनुसार डॉ० किशोरीलाल गुप्त की यह टिप्पणी स्पष्ट है कि 'निपट निरंजन औरंगजेब के शासनकाल में (सं० १७१५—१७६४) हुए, ग्रियर्सन का समय अशुद्ध है।'[6] मध्वमुनीश्वर (सन् १६८६—१७३१) तथा औरंगजेब (सन् १६१८—१७०७) के समकालीन होने के कारण निपट निरंजन का जन्म उपरोक्त जन-प्रचलित दोहे के अनुसार संवत् १६८० तदनुसार सन् १६२३ में मानना शुद्ध होगा। महर्षि शिवव्रतलाल ने 'सन्तमाल'[7] ग्रन्थ में इन्हें दौलताबाद का रहने वाला गौड़ ब्राह्मण कहा है, परन्तु 'दिग्विजय भूषण' में लिखा है कि निपटनिरंजन का जन्म बुन्देलखंड के चंदेरी गाँव में हुआ था जो ओड़छा की रियासत में है। यही उचित भी है। डॉ० भगवती-प्रसाद सिंह ने अपने सम्पादित ग्रन्थ 'दिग्विजयभूषण' में यह भी लिखा है कि 'बाल्यावस्था में ही पिता के निधन हो जाने से इनके पालन-पोषण का

१. डा० ग्रियर्सन : संख्या १२६ पृ० ५६३, शिवसिंह सरोज (१६२६) पृ० ४३८
२. स्व० नलिन विलोचन शर्मा : साहित्य का इतिहास दर्शन, सं०३८४, पृ० १६३
३. डॉ० रामकुमार वर्मा : हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० ५६३
४. डॉ० बड़थ्वाल : योग प्रवाह, २००३, पृ० ४१
५. परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की सन्त परम्परा : पृ० ४६७
६. डा० किशोरीलाल गुप्त : सर्वेक्षण : हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास, पृ० १३५
७. शिवव्रतलाल : सन्तमाल, मिशन प्रेस, इलाहाबाद, पृ० २६१, २६३

आर माता पर पड़ा। संयोगवश इसी समय इन्हें साधुओं का सत्संग प्राप्त हो गया, उन्हीं के साथ ये दक्षिण चले गये और औरंगाबाद के समीप एकनाथ के मन्दिर में रहने लगे। कुछ दिनों के बाद वहीं इन्होंने अपनी एक अलग कुटी बना ली। यहाँ से ये देवगिरि गये।[1] 'विकल्प' अलंकार के उदाहरण में उद्धृत निपट निरंजन के इस पद में 'रावरो' शब्द बुन्देलखंड के आश्रय-सम्बन्ध की ओर संकेत करता है :—

> भूख लगै, प्यास लगै शीत अरु घाम लागै
> मो पै नाहिं मिटै प्रभु मिटै तो मिटाइए।
>
> चाहे देह दीजै, चाहै लीजै आपनी को
> 'निपटि निरंजनजू' अनत न डुलाइए।
>
> रावरो भिखारी ह्वै कै कौन पै हौं माँगौं भीख
> भीख यह माँगौं मोपै भीख न मँगाइए।
>
> साधुन औ सिद्धन को सन्त औ महन्तन को
> जौ लौं जीवै जीव, तौलौ जीविका तो चाहिए।[2]

ऐसा लगता है कि सन्त निपटनिरंजन को जीविकावश इस ओर आना पड़ा। कहा जाता है कि संवत् १७२० वि० में अपनी चालीस वर्ष की आयु में पूज्य माता को साथ लेकर वे औरंगाबाद आये और औरंगपुरे के एकनाथ मंदिर में जीविकोपार्जन हेतु तारकसी (तानिये-चपड़िये) अर्थात् जरी कलाबत्तू का काम, जिसके लिये चंदेरी प्रसिद्ध है, करने लगे। एकनाथ मंदिर के प्रतिष्ठापकों के इस पत्रक से यह सिद्ध भी होता है।[3] मंदिर में रहने वाले किरायेदारों की रसीदों से भी यह प्रमाणित होता है। दो-चार वर्ष के बाद इन्होंने बेगमपुरे में एक छोटा-सा घर बनवा लिया और २०-३० मजदूरों को

---

१. दिग्विजय भूषण : ६० निपट, पृ० ५४
२. तत्रैव : विकल्प अलंकार, पृ० ११५
३. 'आलमगीर बादशहाचे राजवटीतं हे मंदिर श्री सखाराम गणपत म्हसके यांनी बांधले व श्रीविजय पांडुरंगाची मुर्ति अनागोंदीहून आणून तिची प्राणप्रतिष्ठा करविली। हे मूलपुरुष भगवत् भक्त होते। ते श्रीमन्त असून तानिये चपड़िये धंद्याचा, त्यांचा कारखाना होता।'

—पत्रक दिनांक ५-३-६२ ले० सो० तु० म्हसके मालिक श्री एकनाथ मंदिर

लेकर छोटा-सा कारखाना चलाने लगे। संवद् १७३४, सन् १६७७ में उनकी माता का देहान्त हुआ। माता के अन्तिम संस्कार के लिये उन्हें किसी से सहायता नहीं मिली और वे स्वतः माता के शव को अपनी पीठ पर लादकर नाले के समीप ले आये और चितारूढ़ कर उसका दाह-संस्कार करने लगे। देखते-देखते श्मशानवैराग्य सजग हो गया। माता के शव की राख को विभूति मानकर उन्होंने उसे अपने अंगों पर लपेट लिया और पहाड़-सिंहपुरे में कुटी बनाकर साधु-स्वरूप वे वहाँ रहने लगे। उनका छन्द है :—

माता का उपदेश भया, हमने फकीरी लिया
शहर को छांड़कर जंगल मन भाई है।
राखे न पास छदाम, जपना अलख नाम
ये नाले में चारों धाम गोकुल दिखाई है।
नैनों में नमाज रुजू, आंसुओं का करै वज़ू
आहों की कल्मा भजूं, जो पाई सो छिपाई है।
कहैं निपटनिरंजन सुनो आलमगीर
पहाड़सिंहपुरे में अजीब पादशाही है।

आलमगीर को संबोधित करते हुए पहाड़सिंहपुरे का निर्देश विचारणीय है। ओड़छा के राजा वीरसिंहदेव की रानी अमृतकुँवर से जुझारसिंह, पहाड़सिंह आदि पाँच सन्तानें, रानी गुमान कुँवर से हरदौल, भगवन्तराय (जिनके पुत्र दतिया-नरेश शुभकरण थे) आदि चार सन्तानें तथा रानी पंचम कुँवर से दो सन्तानें थीं।[1] पहाड़सिंह राजा वीरसिंहदेव के तृतीय पुत्र थे।[2] ओड़छानरेश पहाड़सिंह का यह 'पहाड़सिंहपुरा' संवत् १७०८ तदनुसार सन् १६५१ के लगभग बसाया गया। तदनन्तर वहाँ सुनेरीमहल का निर्माण कराया गया, जो आज भी स्थित है और जहाँ आज भी सुनहरे रंगों से बनाये गये कलात्मक बेलबूटे दिखाई देते हैं। पास में एक नाला बहता है जिसके कारण हरीतिमा छायी रहती है और यत्र-तत्र गायें चरती-फिरती नजर आती हैं। निपटनिरंजन ने इसीलिये इसे गोकुल कहा है। इस 'गोकुल' शब्द के प्रयोग से पहाड़सिंह के उस गो-प्रेम की याद आ जाती है, जिसका संकेत

---

१. बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास : गोरेलाल तिवारी, पृ० १४०
२. जेठ जुझारराइ रनबीर, पुनि हरदौल बुद्धि गंभीर
प्रबल पहारसिंह रनकाल, बाघराज दिन दुर्जन काल .....
—वीरसिंहदेवचरित : केशवदास पंचम प्रकाश, छन्द १३,१४.

किसी भाट के गोंड़वाने की गायों के जोते जाने के अत्याचारों के दुखद घटना के वर्णन में मिलता है; अन्तिम चरण है :—

वीरसिंहजू के वंश प्रबल पहाड़सिंह।
तेरी बाट हेरती हैं गौएँ गोंडवाने की।

'पहाड़सिंहपुरा' उत्तर और दक्षिण तथा दिल्ली और दौलताबाद के ऐतिहासिक सम्बन्ध का स्मृतिचिह्न है। 'अजीब पादशाही' शब्द मुगल सम्राट् तथा बुन्देलाधिपतियों के गुप्त-प्रकट सन्धिविग्रह के संकेतों का सूचक है। 'पहाड़-सिंहपुरा' तथा 'सुनेरी महल'[१] दोनों शाहजहाँकालीन हैं;[२] कारण कि राजा पहाड़सिंह की मृत्यु मुगल सम्राट् शाहजहाँ की मृत्यु से तीन वर्ष पहले हो चुकी थी।[३] निपटनिरंजन के औरंगाबाद आगमन का समय तथा उनके आश्रय-

1. The Soneri Mahal in Pahadsinghpura, a suburb of Aurangabad was erected by a Bundelkhand Chief, who accompanied Aurangzeb into Deccan. The building is in stone and lime and has a high plinth, but is now in ruins. It is said to have obtained its name सुनहरी महल from the paintings of gold, which at one time decorated it.
—Aurangabad Gazetteer, P. 598

२. खानजहाँ के विरुद्ध आजम खाँ के नेतृत्व में जुझारसिंह तथा पहाड़सिंह दोनों भाई लड़े थे और शाहजहाँ द्वारा मई सन् १६३० में दोनों को 'राजा' की उपाधि दी गई।
—हिस्ट्री आफ शाहजहाँ, बनारसी प्रसाद सक्सेना, पृ० ८३
'सन् १६३२ में दौलताबाद लिया गया और पहाड़सिंह, विक्रमाजीत तथा पहाड़ी के बेनीदास को पारितोषिक दिया गया।
—बुन्देलखंड का इतिहास, पृ० १४६

३. बुन्देलखंड के इतिहास के अनुसार पहाड़सिंह चौरागढ़ फतह करके दौलताबाद तक बढ़ते गये और यहाँ पर उन्होंने 'पहाड़सिंहपुरा' नाम का गाँव बसाया जिसकी आमदनी ओड़छा राज्य को मिलती है। यह घटना सन् १६५१ के लगभग की है। वही पृ० १५१
राजा पहाड़सिंह की मृत्यु सन् १६५४ अथवा सन् १६६३ में

दाता ओड़छानरेश राजा पहाड़सिंह की मृत्यु का समय एक ही पड़ता है। निपटनिरंजन का शरीर बड़ा ही सुन्दर, सुगठित और स्वस्थ था। उनके जीवन की एक घटना इस प्रकार कही जाती है कि एक समय निपट जुना बाजार से अपनी कुटिया की ओर जा रहे थे। नाले के पास उन्हें रेवड़ी वाले का खोमचा दिखा, उनके दिल में आया कि थोड़ी-सी रेवड़ी इसमें से क्यों न खा ली जाय ? उन्होंने मन को समझाया कि अगर तू रेवड़ी खायगा तो तुझे जूते भी खाना पड़ेगा। और ऐसा ही हुआ। इस प्रसंग का यह छन्द है :—

मन मूरख निरख रहा नैनन सों रसना बस ललचाय रहा है।
तू मान कही फल पावै सही जेल पीवने को वह जाय रहा है॥
'निपट' झपट कर हाथ बढ़ाय के रेवड़ी ले चट खाय रहा है।
देख अरे मन, कहा न मान्यो सिर पर जूते खाय रहा है॥

इन्होंने पयाहारी और निराहारी रहकर योगाभ्यास किया। कई वर्षों बाद निरंजन वन में कुटी के पास लक्ष्मीनारायण वृक्ष के नीचे इन्हें दत्तात्रेय ने दर्शन दिये, तब इन्होंने यह पद गाया :—

गुरु दत्त निरंजन वन मों।
क्या भूल रहे निरगुन मों॥

जरा मुकुट सीस लटक कण्ठमाल, तिरसूल सों।
ध्यान दिगम्बर गदा कमंडल कुंडल जोति करन मों॥
पूत विभूत बीच वदन, शोभित मृग छाला।
चन्द्रभाल झलक मुखमंडल कुंडल जोत करन मों॥
चारवेद तन रूप खड़े जो निसिदिन जोत रमाया।
मायानंदी कामधेनु सम, चौबीस नाम दरसन मों॥
रंग रूप कुछ नहीं ब्रह्म कूं सुरत बनावत गहरी।
दादू दास गुरु दत्त चरन मों रमत रहो यहि बन मों॥

बतायी जाती है। मुगल-सम्राट् शाहजहाँ की मृत्यु २२ जनवरी १६६६ के दिन हुई।

—मुआसिल उमरा, भाग—१. पृ० २२८ तथा वही बुन्देलखंड का इतिहास, पृ० १५१।

गुरु दत्त निरंजन वन मों।
क्या भूल रहे निरगुन मों ।।३।।

गुरु दत्तात्रेय ने तब पूछा :—

कौन ? तुम्हारी बोली कैसी ? कौन तुम्हारी जात।
कौन तुम्हारा मौन बोलो ? आये किनके साथ ?

निपटनिरंजन ने उत्तर दिया :—

मौन हमारी बोली दादू शब्द हमारी जात।
वेद वचन ये मौन बोलो आये हमारे साथ ।।४।।

इस उत्तर में निपट ने जप की अन्तिम परिणति निःशब्द मौन पर आस्था बतलाई है और मौन तथा निरक्षर पद्धति की ओर संकेत किया है। सार शब्द का बोध मौन द्वारा ही होता है। इसी शब्द के साथ गुरु की संगति होती है। गुरु दत्तात्रेय ने ही इन्हें देवगिरि में आकर सन्तमंडली में सम्मिलित होने का आदेश दिया जहाँ इन्हें चर्पटनाथ के दर्शन हुए।

गुरु-शिष्य परम्परा—देवगिरि में ही निपटनिरंजन को चर्पटनाथ के द्वारा विषैले जीव-जन्तुओं का महाप्रसाद दिया गया, जिसे उन्होंने भिपट कर खा डाला और अपने शरीर की साधनाशक्ति का परिचय दिया और यहीं चर्पटनाथ ने अपना गुरु प्याला निपटनिरंजन को पिलाया।

'सहज समाधि' मों मुद्रा जो लागत।
पीवत हैं जो ब्रह्मरस प्याला,
तन मन अँखियाँ दूध भई,
तब तीनहुँ लोक भयो उजियाला।
जात पांत कछु भेद न जानत,
प्रेम जगत् की है एक माला।
'निपट निरंजन' चर्पट मौला,
जूठा पिलाय दियो प्याला ।।५।।

सहज समाधि, खेचरी मुद्रा, दृष्टि प्रकाश आदि से स्पष्ट है कि यह योगपरक महासुख का प्याला था जिसे गुरु चर्पटनाथ ने पिलाया था। चर्पट मौला शब्द जाति-पाँति के अभेद को विशेषतया हिन्दू-मुस्लिम जाति के

अभेद को सूचित करता है, इसी भाव के समर्थन में निपट निरंजन ने अपने आपको 'नाथ नबी' या 'नबी के नौकर' कहा है। इनके गुरु चर्पटनाथ थे। यह पद्य इस गुरु-परम्परा का स्पष्ट प्रमाण है :—

जय जय जय गुरुदेव चर्पटनाथ,
चरण शरण नाथ शरण में लीजिये।
जीव ब्रह्म का जो भेद दिखाय दियो अभेद,
बिना गुरु कोरे वेद पुराणों को पूजिये।

चाहे चारों धाम जावे अड़सठ तीरथ न्हावे,
गुरु प्याला नहीं पीवे चाहे अमृत पीजिये।
निपट के घट पट खोल दीनों चटपट,
धन्य गुरु चरपट आसीस हू दीजिये ॥६॥

निपटनिरंजन जनश्रुति के अनुसार गोरख का अवतार भी माने जाते हैं।

उक्ति है :—

भीष्म पिता सेना भये, मनु भये पीया पीर।
कपिल मानपुरी भये, गोरख निपट शरीर ॥

निपटनिरंजन मानपुरी के युग्म का नाम स्मरण डा० केतकर ने भी किया है। ये मध्वमुनीश्वर, अमृतराय, दासोपंत आदि के समकालीन थे। इनके शिष्य का नाम निरंजन था पर यह शिष्य-परम्परा उनके आगे नहीं चली।

अत: ये निपट निरंजन निरंजनी सम्प्रदाय के कदापि नहीं हो सकते; यह केवल नामभ्रम है। इनकी गुरु-शिष्य परम्परा इस प्रकार है :—

चर्पटनाथ → निपटनिरंजन → निरंजन

चमत्कार-कथाएँ

निपटनिरंजन के नाम पर दो दन्तकथाएँ प्रचलित हैं। एक कथा है :—

देवगिरि देव पाया, सन्तन अभाव जहाँ
महाप्रसाद खाया जो जग से निराला है।
गोम, बिच्छू, साँप, गिरगिट, खकड़ा मिलाय
कढ़ाई मों लिपकाई, घुमाई गुरुप्याला है।
सन्तन में बारी बारी, सबको चढ़ी खुमारी
भयभूल को निवारी 'चर्पट' मौला है।
'निपट' के पट खुले, निपट लियो है सब,
गुरु कृपा भई जब तीन लोक में उजाला है।

इस छन्द में 'निपट' से अर्थ है (१) नि+पट अर्थात् जिसके माया के पट खुल चुके हों अथवा 'निपट', (२) जिसने विषैले जीवों को पकाकर बनाये गये देहविशोधनार्थ महाप्रसाद को कढ़ाई तक साफ पोंछकर खा लिया हो। कवि नारायण विरचित 'श्री गुरुलीलामृत'[१] में निपट महाराज के हस्तिनापुर से औरंगाबाद आने की कथा मिलती है और उसमें गुरु मच्छनाथ के औरंगाबाद पधारने पर उनसे उनकी प्रथम भेंट का उल्लेख मिलता है। मूलकथा का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है :—

गत अध्याय में कथा यहाँ तक हुई कि श्री गुरु मच्छनाथ औरंगाबाद पधारे। अब इस ग्राम में जो हुआ उसे सज्जन समझें। ग्राम का नाम खड़की, बस्ती जहाँ थोड़ी। बादशाह औरंगजेब की दृष्टि में एक चमत्कार दिखाई दिया। व्याघ्र का पीछा जम्बूक कर रहा है। अर्थात् जरामरणादि से कातर मन (जम्बूक) गुरु-उपदेश-प्राप्त जीवात्मा व्याघ्र का अनुसरण कर रहा है। यह देख वह मन में विचार करने लगा कि यह स्थान प्रसिद्ध है। ऐसे स्थल को देखकर ही आलमगीर ने यहाँ अपनी राजधानी बनाई, ग्राम का नाम औरंगाबाद रखा और शहर को विस्तीर्ण किया। यहाँ महासिद्ध निपटनिरंजन हैं,[२] बेगमपुरे में उनका स्थान है, पर्वत पर जाकर वे तपश्चर्या

---

१. श्रीगुरुलीलामृत : मच्छनाथचरित : कवि नारायण विरचित हस्तलिखित ग्रन्थ; प्राप्तिस्थान किशनराव कुलकर्णी, शेंदुवाड़ा, अध्याय १६, पद, २, ३६
—मिलाइये 'निति-निति सिआला सिंहेसम जुझअ'—चर्यापद ३३

२. 'महासिद्ध निपटनिरंजन। बेगमपुरे समीप स्थान' ···६

करते हैं। वे योगाभ्यासी हैं, परम दक्ष हैं, श्रीराम के चरणों में ध्यान लगाते हैं और उन्हें नित्यानित्य अपरोक्ष ज्ञान प्राप्त है। हस्तिनापुर में एक धनिक साहूकार रहता था। उसकी रंभा उर्वशी के समान सुन्दर कन्या थी। निपट हस्तिनापुर में भिक्षाटन करते थे। उस साहूकार की रूपवती कन्या को ऊपर की मंजिल पर देखा तो उन्हें श्रीराम के स्वरूप की झलक सामने नजर आई और वे ध्यानमग्न हो उसे देखने लगे और कहने लगे कि श्रीरामस्वरूप के समान यह स्त्री मुझे दिखाई देती है। भिक्षाटन के हेतु नित्य इसी प्रकार उस रामरत्न को वे अपने नेत्रों से देखने जाते और रामस्वरूपिणी उस कामिनी को आनन्दपूर्वक देखते रहते। एक दिन उस कामिनी ने निपट-निरंजन की वन्दना की और पूछा 'तपस्वी ! आपके मन में जो इच्छा हो मुझे बतलाइये'। निपट ने उस स्त्री को उत्तर दिया 'मेरी कुछ भी इच्छा नहीं है माता, तेरे रूप में श्रीराम के स्वरूप का आभास मुझे मिलता है।' ऐसे ही कई दिन बीत गये। उस स्त्री को ससुराल लाने के लिये पति-घर से बुलावा आया। निपट भी विचारमग्न हो उसी के साथ-साथ निकल पड़े। जहाँ-जहाँ वे मुकाम करते, निपट वहाँ-वहाँ ठहर जाते। उसी मार्गक्रम से वे भी औरंगाबाद आ पहुँचे। उस स्त्री का मन आशंकित हो उठा; भला, लोग क्या कहेंगे ? एक साधु स्त्री के साथ ! मुझे दूषण लगेगा। यद्यपि ये निष्काम हैं, किन्तु लोग तो शंका करेंगे। यह बुरा काम है। मुझे जारिणी कहेंगे। अब मैं क्या करूँ ? निपट मेरा पीछा नहीं छोड़ते हैं। उद्विग्नमना वह सुन्दरी मन ही मन उन्हें कोसने लगी। एक बार समय और एकान्त देख हाथ जोड़कर वह निपट से पुनः बोली 'जो भी आपकी मनोकामना हो उसे पूर्ण कर डालें; परन्तु अब दिन-रात कभी भी मुझसे यहाँ न मिलें। मैं ससुराल में हूँ। मनोकामना पूरी कर तृप्त हो जाइये।' फिर निपट ने उस स्त्री से कहा 'तुम्हारा रूप रघुनाथस्वरूप है, तुम्हें देखते रहने का हेतु यही है, दूसरा कुछ नहीं।' इन शब्दों को सुनकर वह निपट से बोली 'धन्य, धन्य, तुम्हारे समान पूर्ण साधु मेरी दृष्टि में कभी नहीं आया, परन्तु साधुवर ! मेरी इतनी ही विनती है कि आप श्रीराम के स्वरूप में प्रीति लगायें, कामिनीरूपी इस मायानगरी की गलियों में चक्कर न लगायें। नारी अविद्या की खान है, वह आत्मप्राप्ति के मार्ग में अटका देने वाला रोड़ा है। यह नारी तो लोगों को दिया दिखलाकर महानरक का रास्ता पकड़ा देती है। असत्य, धृष्टता, अतिलोभ, माया, मूर्खता, निर्दयता, अशुचि आदि दोष स्त्री के अंगों में सहज निवास करते हैं। यहाँ परमार्थ की

सिद्धि कैसी ? तुम्हें सीताकान्त यहाँ कैसे मिलेंगे ? अब स्त्री के रूप का मोह छोड़ शीघ्र ही जानकीनाथ की शरण में जाइये । आमरण भी मेरे पास रहेंगे तो अयोध्यानाथ की भेंट यहाँ नहीं होगी । मेरे घर में तो कामदेव का बसेरा है, यहाँ सीतानाथ की प्राप्ति न हो सकेगी । रघुवीर की प्राप्ति के लिये तो एकान्तवास चाहिये, तुम तो वह सब छोड़ मेरे पीछे लग गये हो । लोगों में यह निन्दनीय है, बड़ी लोकनिन्दा होगी । निपट लंपट, जारकर्मी, कपटी, कहलायेगा। ऐसा करने से गली में लोगों की मार तक तुझे खानी पड़ेगी । इस कारण सदा उस रघुवीर के गुणगान का विचार करते रहना सर्वोत्तम है । सच, नाम-स्मरण करते रहने से ही ताड़िकान्तक राम की भेंट हो सकेगी ।' ऐसे सुबोध वचन सुनते ही निपट ने तत्काल उस स्त्री को प्रणाम किया और शहर से दूर बाहर पश्चिम दिशा में पहाड़ी पर एकान्त स्थल देखकर वे वहाँ नित्य श्रीरामचन्द्र का जप-तप करने लगे । निपट के इस पूर्ण सद्भाव को देखकर सन्तुष्ट हो श्रीरघुनन्दन ने उन्हें अपने दर्शन दिये और निपट को पूर्णकाम कर दिया । ऐसे योगेश्वर निपट से मध्वमुनीश्वर मिले और इस भेंट से दोनों को परस्पर बड़ा आनन्द मिला ।[1] यह भेंट मानो वसिष्ठ और वामदेव की थी; अंगिरा-पुत्र और भार्गव की थी, उमाधव और रमाधव की थी । दोनों ने परस्पर नमन किया, एक दूसरे से क्षेमकल्याण पूछा और दोनों ने श्रीराम के चरणारविन्दों में शरणागति प्राप्त की ।[2]

औरंगाबाद में जब निपटनिरंजन रहने लगे तो उनका परिचय सभी सन्तों से होने लगा । निपट महाराज की कीर्ति बड़े वेग से यत्र-तत्र फैल गई । इसे सुनकर रंजीर और जंजीर नामक दो योगी इस ओर आये और निरंजनवन के एक वृक्ष के नीचे ठहरे । सब लोगों के हृदय में इन दोनों को जानने की बड़ी इच्छा हुई । ये दोनों योगी समीप के नाले में उतर कर अघोर क्रिया करने लगे जिससे लोग इनके प्रभाव को देखकर भौंचक्के रह जायँ । उन्होंने अपने पेट की अंतड़ियों को मुख से निकालकर नाले के जल में धोना शुरू कर दिया । लोगों की भीड़ की भीड़ यह सब देखने के लिये वहाँ एकत्रित हो गई । और ये दोनों भी अहंकार में आ गये । योग में अहंकार

---

१. ऐसा निपट योगेश्वर । तयासी भेटे मध्वमुनीश्वर ।
   भेटी होता परस्पर । आनंद बहुत झाला ।।३४।।

२. हिन्दी को मराठी सन्तों की देन : डॉ० विनयमोहन शर्मा ; पृ०१८७

सबसे बड़ा शत्रु है। अकस्मात् दोनों की श्वास क्रिया अवरुद्ध हो गई और निकली हुई अँतड़ियाँ बाहर से भीतर न गईं। दोनों योगियों की ऐसी स्थिति देख लोगों ने उनको निपट महाराज की शरण में जाने को कहा। दोनों निपट महाराज की शरण में आ गिरे। शरणागत देख महाराज ने उन पर दया की और उन योगभ्रष्ट योगियों को पुनः सावधान और स्वस्थ कर दिया। तत्पश्चात् उन दोनों योगियों ने महाराज से प्रार्थना की कि वे उन्हें ब्रह्मानंद का आनंद अनुभूत करा दें। निपट महाराज ने शीघ्र ही बावली के ऊपर बाँस की एक छड़ी से एक लकीर खींच दी। उसी समय एक भूकम्प-सा हुआ और जमीन फट गई। रंजीर और जंजीर से तब कहा गया कि वे भीतर जाकर ब्रह्मानंद को प्राप्त करें। दोनों रंजीर और जंजीर भीतर चले गये। बहुत देर हो जाने के बाद महाराज ने उनको बाहर आने को कहा। किन्तु उन्होंने वहीं रह कर इस ब्रह्मानन्द को लूटते रहने की इच्छापूर्ति के लिये प्रार्थना की। महाराज ने उन्हें वैसी ही अनुमति दे दी। आज भी उन दोनों योगियों की पादुकाएँ नाले के समीप बनी हुई हैं।

शिरगाँव मठपति भीमस्वामी ने भक्त लीलामृत में एक घटना का वर्णन इस प्रकार किया है :—

निपटनिरंजन, औरंगाबाजेंत। होते मोठे संत बागे मध्यें ॥
गाँव मध्यें जावें रस्त्यांत फिरावें। कोणी देतां घ्यावें धान्यपीठ ॥
येके दिसीं मेख नाळाची पायांत। शिरे अकस्मांत तये वेळीं ॥
विदेहस्थिति देहभान नाहीं। समाधिस्थ पाहीं चाळीयळे ॥
माळीण पाहोनी म्हणे पायाअंत। गेळें तें त्वरित काढा आधीं ॥
देहावरी आळे आणि बोळीयळें। प्रारब्धी टाकिळें म्हणती देहे ॥
जयाचे सत्तेनें पायाअंत गेळे। तोच हें काढीळ तरी काढो ॥
ऐसें बोळोनीया आळ बागेअंत। होतां समाधिस्त देव आळे ॥
पायांतीळ मेख उपडोनी काढिळी। रक्तधार आळी हये वेळीं ॥
हस्तमात्रें पाय बरा करुनीं गेळे। ऐसे सन्तळीळे भीम गाये ॥

चर्पटनाथ ने इन्हें योगसिद्धि का मार्ग दिखाया, और तब से आप योगाभ्यास करने लगे। अपने वन के एकांत में वृक्ष के नीचे ये कोपीन धारण करके धूनी तापते और साधना करते। धीरे-धीरे इनकी आँखों में मस्ती छाने लगी, शरीर की आकृति बदलने लगी। गुप्त होकर प्रकट हो जाता,

जलादि के ऊपर पैदल चलना, सूक्ष्म शरीर से सर्वत्र विहार करना इन्हें प्रिय लगने लगा। कभी-कभी इनकी विदेह स्थिति हो जाती। गाँव में जो कुछ धनधान्य मिलता उससे ये सन्तोषपूर्वक जीवन निर्वाह करते। एक दिन जब ये गाँव में जा रहे थे तब घोड़े के नाल की कील आधी इनके पाँव में घुस गई पर इन्हें कुछ भी मालूम न पड़ा। अचानक रास्ते में एक मालिन की दृष्टि इनके पैर पर पड़ी। पैर को लहू-लुहान देख वह बोली, "महाराज आपके पैर में नाल की कील घुस गई है, अतः कील को निकाल लो।" महाराज का ध्यान उस ओर गया और महाराज यह उत्तर देकर आगे चलते बने कि जिसने कील पैर में घुसाई है वही यह कील निकालेगा। पैर टेकते-टेकते ये अपनी कुटिया में आये और समाधिस्थ हो गये। कहा जाता है कि भगवान् ने स्वतः आकर समाधिस्थ अवस्था में इनके पैर की वह कील निकाल डाली और अपने हाथ से पैर का जख्म धोकर साफ किया। इस प्रसंग का संकेत हिन्दी के निम्नलिखित दोहे में भी मिला है :—

माई निपट, करतार को भाई बैल की चाल।
जिसने पग में ठोंक दी वोहि निकाले लाल।।

दूसरी चमत्कारपूर्ण घटना का संकेत इस पद में पढ़िये :—

मन्दिर खुदा न जावे, मजीद तो देव न आवे।
बाम्हन कलमा पढ़े न, न मंत्र पढ़े काजी है।।
बाम्हन सन्ध्या करे, मुसलमान वजू करे।
एक तो पूरब, दूजा पच्छिम बिराजी है।।
मन्दिर मजीद तोड़, बनाया बैतुलखला।
हिन्दू औ मुसलमान दोनों भाई राजी है।।
कहैं 'निपट निरंजन' दो आलमगीर कैसे।
दुबिधा में दोनों फँसे ऐसे बड़े पाजी हैं।।

एक समय निपट महाराज का विचार हुआ कि भक्ति करने का अवसर सबको देना चाहिये। इस हेतु महाराज ने एक स्थान पर भगवान् की चतुर्भुज मूर्ति स्थापित कर दी और वहाँ एक देवालय स्थापित कर दिया। महाराज देखते हैं कि ऐसे स्थान पर दर्शन हेतु हिन्दू लोग तो आते हैं; किन्तु यवन नहीं आते। निपट महाराज ने वह चतुर्भुजी मूर्ति अपने बाग में ले जाकर रख दी और उस स्थान पर एक मसजिद बनवा दी। देखते हैं उस स्थान पर मुसलमान

तो आते हैं; परन्तु हिंदू नहीं आते। तब महाराज ने मसजिद को वहाँ से हटाकर एक शौचकूप तैयार करा दिया। देखते क्या हैं, आप ही आप सभी वहाँ आते हैं। शौचकूप में पाखाना फिरते हैं। निपट महाराज की यह करतूत पठान हाकिम के कानों तक पहुँची। पठान हाकिम ने इसे अपने धर्म पर आघात समझा और निपट महाराज को बुलवाया। महाराज को देखते ही पठान हाकिम ने पूछा—"मसजिद हटाकर तुमने वहाँ शौचकूप बनवाया है ?" निपट महाराज ने इसका कारण बतलाया कि जब वहाँ देवता की स्थापना की तो यवन लोग वहाँ नहीं जाते थे और जब वहाँ मसजिद बना दी गई तब वहाँ हिंदू लोग नहीं आते थे; किन्तु जब से वहाँ शौचकूप बनवा दिया गया तो हिन्दू यवन दोनों वहाँ स्वतः आते जाते हैं। मनुष्य की बुद्धि ही ऐसी निम्न और हीन है कि नरक में वह भेदातीत हो जाती है। मैं क्या करूँ ? इन शब्दों को सुनकर पठान हाकिम के मन में बोध आया और वह भी निपट महाराज का भक्त बन गया। भीमस्वामी ने भक्त लीलामृत में इस घटना का वर्णन इस प्रकार किया है।

"श्री राम—

निपट निरंजन औरंगाबाजेंत। आले रस्त्याअंत येके दिनीं ।।
म्हणती सर्वां भक्ति लावावी म्हणून। चतुर्भुज आणुन मूर्ति येके ।।
देवालय केलें दर्शनासी यावें। बोलाविती भावें सर्वत्रांसि ।।
हिन्दु मात्र येती अविंध न येती। तेव्हां म्हणती चित्तीं ऐसें नव्हे ।।
मूर्ति बागमध्यें नेवोनी ठेवली। मशीदच केली तेथें मग ।।
बोलाविता येतो अविंध आनदें। न येतीच भेदें हिन्दु तेथें ।।
सर्व येती ऐसा उपाय योजावा। भेदचि न सावा ऐसें करूं ।।
मोडोनी मशीद केला शौचकूप। जाती आपें आप सर्व तेथें ।।
गांवींचा पठाण हाकीम तयासी। कोप यावा ऐसी युक्ती केली ।।
मशीद मोडोनी केला शौचकूप। बोलावीतें बाप सिद्धराया ।।
म्हणे कूप केला मशीद मोडोन। कायजी कारण सांगा याचे ।।
देव केला तेथें न येती यवन। मशिदींत जाण हिन्दु न ये ।।
मग शौचे कूप केला तेथें येती। भेदातीत होती नर्क द्वार ।।
आम्हीं काय यासी करावा उपाय। नर्क जाता प्रिय जनालागीं ।।
बहुतचि बोध पठाणासी केला। तोही भक्त जाला संतवाक्यें ।।
मग बागेअन्त भजन करीत। येवोनी बैसत भीम म्हणे ।।"

महीपति कवि द्वारा रचित तथा शाके १८६४ में लिखित भक्तिविजय ग्रन्थ* के ७वें अध्याय में निपटनिरंजन का उल्लेख २०वीं ओवी से लेकर ३५ ओवी तक मिलता है। घटना का उल्लेख इस प्रकार है—भक्त कबीरदास काशी में भक्ति-परायणा जनाबाई को चक्की चलाते देख शोक में रोते जा रहे थे। इसी अवसर पर वहाँ एकाएक निपट महाराज प्रकट हुए और उन्होंने कबीर से पूछा कि तुम्हारे रोने का कारण कौन सा है? तब कबीर ने रोने का कारण बतलाया कि आकाश और पृथ्वी की इन चक्की के पाटों के बीच में जगत् के प्राणी पिसे जा रहे हैं, यही देख मैं रो रहा हूँ। निपट महाराज ने कबीर को इस प्रकार समझाया कि यह तेरा ख्याल बिलकुल गलत है। सब सृष्टि ईश्वर से बनी है। अतः जो रामनाम लेता है उसे किसी प्रकार का भय नहीं रहता। वह तो मानी के पास बचे हुए अनाज के दानों के समान इस पिसने से बच जाता है। उक्त घटना का भक्तिविजय ग्रन्थ में एक काल्पनिक चित्र भी दिया गया है। घटना इन शब्दो में है :

श्रीगणेशाय नमः श्रीकृष्णाय नमः

ऐका सन्त चरित्र ग्रन्थ सार। हाचि पयोब्धि क्षीरसागर॥
नाना दृष्टांत हे जलचर। सप्रेम जीवनो धांवती॥१॥
आवडीच्या लाटा उसळती। ज्ञानाकाश भेदू पाहती॥
भाविक मेघ धांवोनि येती। जीवन पीती कथानक॥२॥
मग संसार तापें करून। संतप्त झाले होते जन॥
त्यांवरी वर्षती जाऊन। स्वानन्द जीवन ते वेळीं॥३॥
श्री पांडुरङ्ग कृपाचन्द्र थोर। तो उदयासी येतां साचार॥
मग या सागरासी अपार। सप्रेम भरतें आवरे ना॥४॥
कीर्तन प्रसंग पर्वकाळीं जाण। जो या ग्रन्थ सागरीं करील स्नान॥
त्याचा भवरोग दारुण। जाईल जाण निश्चयेंसी॥५॥

---

*महीपति : भक्तिविजय (शाके १८६४) ७वाँ अध्याय, २०-३५। निपट निरंजन का इस आशय का दोहा इस प्रकार है—

"चक्की तो चलती रही, कीला गया अकास।
साधु सन्त ऐसे बचें, कीले मानी के पास॥"

मिलाइये कबीर, कमाल तथा मलूकदास का इसी आशय का प्रचलित दोहा।

माघील अध्यायीं कथा पवित्र । संतीं उठाविला कबीर पुत्र ॥
पुढे काय वर्तले चरित्र । श्रोतीं पवित्र परिसावें ॥६॥
एके दिवशीं कमाल तात । रात्रीं चालला बाजारांत ॥
श्री राम भजन प्रेमयुक्त । करीतसे तेधवां ॥७॥
वीणा घेउनियां करीं । मंजुळ स्वरें कीर्तन करी ॥
श्री राम रूप आठवूनि अंतरीं । सप्रेम भरीं गातसे ॥८॥
मोह ममता मानाभिमान । दुराशा टाकून निजमन ॥
सांडोनि अहंता मी तूं पण । श्री राम चिंतन करीत से ॥९॥
तों एक वाणीण बाजारांत । दळीत बैसली असे तेथ ॥
तें दृष्टीं देखोनि कबीर भक्त । द्रवलें चित्त तयाचें ॥१०॥
उभा ठाकूनि ते अवसरीं । दीर्घ स्वरें रुदन करी ॥
देखोनि हांसती नर नारी । नवल करिती ते धवां ॥११॥
एक पुसती कबीरासी । कां गा येथें रुदन करिसी ॥
कोणें गांजिल आहे तुजसी । सांग आम्हांसी ये वेळे ॥१२॥
ऐसे बोलती लोक अपार । परी कोणासी ने दी प्रत्युत्तर ॥
म्हणे माझ्या दुःखाचा परिहार । यांचेनि साचार नव्हे कीं ॥१३॥
शिणल्या पासीं सांगतां दुःख । तरी अधिकचि वाटे संताप ॥
दर्दुरें मित्र केलिया सर्प । सौख्य अणुमात्र नेदीच ता ॥१४॥
मद्यपियासी विवेक नीती । चतुर पंडित न पुसती ॥
रोगियापासोनि औषध नघेती । तार्किक जैसे सर्वथा ॥१५॥
नातरी तृषा लागतां अपार । चातक न पीती नदीचें नीर ॥
कीं चन्द्र उदयावीण साचार । चकोर तृप्त होतीच ना ॥१६॥
कीं खळ अज्ञान असतां श्रोता । प्रेम उल्हासें न वदेचि वक्ता ॥
की पान्याचे मोतियां सर्वथा । राजहंस चिता न आणिती ॥१७॥
कीं मतंग देखोनि दुरून । द्विज न देती आशीर्वचन ॥
को निंदका पासीं एकांत जाण । चतुर सज्ञान न सांगती ॥१८॥
तेवीं माया लोभी अज्ञान नर । कबीरासी पुसती विचार ॥
परो तो नेदोच प्रत्युत्तर । रुदन करी अनुतापें ॥१९॥
नाना परीचे त्रिविध जन । एक मेकांसी बोलती वचन ॥
कबीरासी वेड लागलें म्हणून । उगाच रडतो बाजारीं ॥२०॥
तंव निपट निरंजन ते समयीं । अवचित आले तये ठायीं ॥
कबीरासी पुसती लवलाहीं । किमर्थ शोक मांडिला ॥२१॥

नेत्र उघडोनि जंव पाहे । तंव ज्ञानसागर पुढें उभा आहे ।।
मग धैर्य धरूनी लवलाहे । बोलता जाहला ते समयीं ।।२२।।
म्हणे यासी सांगतां साचार । कांहीं करितील परिहार ।।
ऐसें म्हणोनि भक्त कबीर । बोलता जाहला तेधवां ।।२३।।
सद्वैद्यासी व्यथा सांगता जाण । रोगियाचें उल्हास युक्त मन ।।
कीं मायेपासीं सासुरवासिण । दुःख सांगतां न वंची ।।२४।।
कीं संशय वाटला चित्तासी । तो सच्छिष्य सांगे श्री गुरूसी ।।
तेवीं कमालतात निपट यासी । सांगता जाहला तेधवां ।।२५।।
कबीर म्हणे सद्गुरु मूर्ति । अनुताप जाहला माझे चित्तीं ।।
कृपावंते पुसिलें प्रीतीं । तरी सांगतों रीति ते ऐका ।।२६।।
जातें फिरतां देखिलें जाण । त्या माजीं पीठ होताती वण ।।
तैसीच गती मज कारण । भवचक्रांत पडलीया ।।२७।।
म्हणोनि भय वाटलें देख । अट्टहासें मांडिला शोक ।।
तुम्हावांचूनि भवदुःख । कोण निवारील आमुचें ।।२८।।
ऐकोनि निपट बोले त्यासी । व्यर्थ कां उगाच शोक करिसी ।।
जाते फिरतां देखोनि तुजसी । अनुताप चित्तासी वाटला ।।२९।।
तरी येच विषयीं विष्णु भक्ता । संशय निरसीन तुझा आतां ।।
आधार टाकूनि भोंवतें फिरतां । काळ चक्रीं पीठ नाहीं होती ।।३०।।
खुटियांसी कण लागोनि राहिले । ते कालचक्रीं पीठ नाहीं जहालें ।।
तेवीं श्रीराम भजनी जे विनटले । ते काळेंग्रासिलें नाहींत कीं ।।३१।।
तूं तर सत्वधीर वैराग्यशील । शांति क्षमेचा होसी अचल ।।
आणि स्वप्नीचें भय देखोनि तळमळ । व्यर्थ कासया करितोसि ।।३२।।
ऐसी ऐकोनियां मात । कबीर जाहला सावचित्त ।।
प्रेमभावें आलिंगित । एकमेकांसी ते धवां ।।३३।।
येरयेरांसी नमस्कार । प्रेमें घालिती वैष्णव वीर ।।
मग कबीर तेथोनि सत्वर । आश्रमासी पातला ।।३४।।
नाना परीचें प्रबंध कवित । नित्य हरीचे गुण वर्णित ।।
आनन्दभरें प्रेमयुक्त । नित्य करीत कीर्तन ।।३५।।

दिल्लीश्वर औरंगजेब के प्रथम परिचय का उल्लेख इस चमत्कार घटना से प्राप्त होता है :—

निपट निरंजन जीवन्मुक्त ज्ञानी, दिल्लेश्वरा कोणी निवेदिले ।
त्यांनीं स्वार यासी आणाया धाडिले, बागेमध्यें आले यांजपासीं ।
गुंफेंत जोंधळ्या मृन्मय पात्रांत होते हे भक्षीत तये वेळे ।
राउताची हांक ऐकता वैसेचि, येथी बाहेरचि खात खात ।
दाढी पोटावरी वोघळ पाहिले, कुश्चिळ दाविलें रूप त्यासी ।
अभक्तां संतांचें माहात्म न कळे, थु ऐसें बोलिलें तोंडावरी ।
सिद्ध बोलीयले तुमच्या तोंडांत थु, यो आमुच्या मुखांत नको तुम्हा ।
ऐसें बोलताचि राउताच्या मुखीं, जळांश निशेखीं नाहीं होबे ।
जिव्हाच ते कोरडी जाहाली ते काळीं, शरण तये वेळी येती यांसी ।
दया आली मग मोकळे ही केले, पांई ते लागले तये वेळीं ।
मग सिद्ध गेले आपुले झापडींत, स्वार होवोनी स्वस्थ रहाते जाले ।
अस्तमानीं राहे प्रहर दिवस, गेले हे दिल्लीस योगसिद्धी ।
मशिदींत मध्य कोनाड्यांत गेले, जावोनी बैसले तये वेळीं ।
पाशाह कुराण पढावया आला, अकस्मात् यांला पाहाताहे ।
विचारितां नाम निपट सांगती, बोलाविलें प्रीती म्हणून आलो ।
पाशाहाने तेव्हां केला चमत्कार, सांडोनी कलिवर मक्के गेला ।
तेथे सात सिद्ध होते त्या नमन, बद्री वृक्ष जाण होतां तेथे ।
निपट ही गेले त्या वृक्षी देखील, बोरें खाती वहिले आनंदांत ।
पाशाह प्रसाद मागतांचि म्हणत, देऊं मशिदीं चाल आतां ।
गेला शरीरांत पाहे कोनाड्यांत, बैसले हे खात बोरें तेथ ।
बोराचा प्रसाद देतां लोटांगण, घालोनिया म्हणे ईश्वर हा ।
मग सुख गोष्टी तेथें बोलोनीया, पत्र घेवोनिया तया स्वारा ।
आले बागे अंत पत्र दिल्हें त्यांसी, गेले ते दिल्लसी तये वेळीं ।
पाशाहासी सर्व थुक्याचा वृत्तांत, सांगतां सिद्धातें म्हणें धन्य ।
ऐसी संतलीळा गातो जे ऐकती, ते ही धन्य होती भीम म्हणे ।

'भक्तलीलामृत' के इस उद्धरण का भावार्थ ऐसा है कि जीवनमुक्त ज्ञानी निपटनिरंजन महाराज की सिद्धियों की चर्चा दिल्लीश्वर के कानों तक जा पहुँची । उन्होंने निपट महाराज को बुलवाने के लिये सवार भेजे । जिस समय वे सवार महाराज के द्वार पर पहुँचे उस समय महाराज मिट्टी के बरतन में ज्वार की श्रीकणी खा रहे थे । राजदूत की आवाज सुनते ही महाराज खाते-खाते बाहर निकले । दाढ़ी और पेट पर गिरे

भोज्याश्र के छींटों को देख इन अमस्त सवारों ने घृणाभाव से उनके मुंह पर थू-थू करना शुरू कर दिया। निपट महाराज ने इस थूत्कार को देखकर कहा कि "अच्छा। ये थूक तुम्हारे मुंह में न आकर मेरे ही मुंह में रहे।" इतना कहते ही इन सवारों का मुख थूक से शून्य हो सूखने लगा। आर्द्रता के अभाव से जीभ तालु से चिपकने लगी और वे सवार उसी समय महाराज के पैरों पर गिर गये। सिद्धयोगी निपट महाराज ने इन्हें क्षमा कर दिया और वे अपनी कुटी में चले गये। सवार भी स्वस्थ होकर दिल्ली की ओर वापिस चल दिये। सूर्यास्त का समय था। दिल्लीश्वर मसजिद की तरफ चल दिये। निपट महाराज भी इसी समय वहाँ आकर बैठ गये। मुगल बादशाह कुरान पढ़ने के लिये तैयार हुए। औरंगजेब द्वारा नाम पूछने पर निपट ने अपना नाम 'निपट' बतलाया। औरंगजेब बादशाह स्वत: भी सिद्धि-सम्पन्न था। उन्होंने अपना चमत्कार कौशल बतलाया। यह विदेह होकर तीर्थस्थान मक्का चले गये। निपट महाराज भी वहाँ चल दिये और बेर खाते हुए बेर वृक्ष पर दृष्टिगत हुए। बादशाह औरंगजेब ने इनसे बेर का प्रसाद माँगा। निपट महाराज ने कहा कि मसजिद में चलिये, मैं प्रसाद दूंगा। मसजिद में पहुँचते ही बादशाह क्या देखते हैं कि वहीं बैठे-बैठे निपट महाराज बेर खा रहे हैं। बादशाह ने बेर का प्रसाद निपट महाराज से प्राप्त किया; और औरंगजेब और निपट महाराज से सुखपूर्वक वार्तालाप हुई। तदनन्तर यथासमय वे दोनों राजदूत सवार दिल्ली आ पहुँचे। उन दोनों ने बादशाह औरंगजेब के सम्मुख अपने मुख थूक का पूरा वृत्तांत कह सुनाया और दोनों ने महाराज निपटनिरंजन का परिचय पत्र दिया।

इसी प्रसंग का उल्लेख इस हिन्दी के छन्द में इस प्रकार बतलाया गया है कि एक बार औरंगजेब और निपटनिरंजन में कायासिद्धि की परीक्षा का प्रश्न उपस्थित हो गया। निपटनिरंजन महाराज से यह कहा गया कि वे औरंगजेब को मक्के के बेर का प्रसाद खिलवायें। निपटनिरंजन महाराज अपनी काया औरंगजेब के पास छोड़ विहंगम मार्ग से मक्का आये और शीघ्र ही बेर का भुक्का लाकर उन्होंने औरंगजेब के सामने उपस्थित कर दिया। औरङ्गजेब ने स्वाद से तो इन बेरों को पहिचान लिया किन्तु इसकी दुबारा परीक्षा करने के लिये उन्हें पुन: मक्का से बेर लाने को कहा। दोनों अपने सूक्ष्म शरीर को लेकर मक्का पहुँचे। औरङ्गजेब ने जब निपट महाराज को तोते के रूप में बेर के वृक्ष पर बैठ फलों को खाते हुए देखा तो वे भी बाज

पक्षी का रूप धारण कर उन कुतरे हुए बेर के फलों को बड़ी श्रद्धा से वहाँ खाने लगे।

हज्ज के लज्जत बेर लाय में न लागी बेर
जाय आवे करे सैर लखे यहाँ काया है,
मक्के की नमाज राज रूह से करे रिहाज
सूक्ष्म शरीर बाज तोता मन धाया है।
हज्ज की मीनार मक्का ले निहार बेर झुक्का
तोते ने कतर फेंका चून चून लाया है,
कहैं निपटनिरंजन हाप्यो है आलमगीर
झूठे ही मंजिल तीर तय कर पाया है।

इस घटना की स्मृति में आज भी निपट महाराज के स्थान पर बेर का प्रसाद ही चढ़ाया जाता है और वही प्रसाद सबको बाँटा जाता है। निपट निरंजन ने बाह्याडम्बर, कोरी तीर्थयात्रा, व्यर्थ के धार्मिक करों का मजाक उड़ाया है। मक्के में जाकर बिना हाथ के स्पर्श किये बेर लाने की इस घटना का संकेत पुनः इस छन्द में करते हैं :—

बिना ही हलक बिसमिल्ला और अल्ला करे,
बिना ही नजर नूर नुक्ते को ही देख तू,
बेजबान कलमा पढ़, बेकान हो कुरान सुन,
बिना ही शरीर खुद खुदा को परख तू।
बिना पैर मक्के जाना, बिना हाथ बेर लाना,
बिना सीस सिज्दा करना होवे तब शेख तू,
कहैं 'निपटनिरंजन' सुनो आलमगीर !
कौन तबक पीर, दिल की दिल्ली देख तू॥

सम्राट् औरंगजेब ने अपना दरबार दक्षिण में स्थापित करना चाहा और औरङ्गाबाद को आबाद करना चाहा। मुगल सम्राट् अपने लस्कर-लवाज के साथ आने लगे तो सुनेरी महल के समीप, जिसे ओड़छा-नरेश पहाड़सिंह ने बनवाया था तथा दतिया-नरेश राजा शुभकरण की स्मृति में स्थापित सुकरनपुरा के पास शाही तम्बू गाड़ दिये गये और वह सारा स्थान शाही सौकत से सम्पन्न कर दिया गया। निपटनिरंजन ने जब इस तपोभूमि पर उस शान-शौकत को देखा तो कहा :—

कहीं तो बनात की कनात लागी जंगल में
कहीं तो नित ही लगत भरे दरबार हैं।
कहीं तो द्वारे बाजे दमामे नगारे ढोल
कहीं तो दंगल में हजारों हाथी तयार हैं।
कहीं तो आलमगीर आलम में पादशाह
'निपटनिरंजन' के कई ताबेदार हैं।
भूला क्यों गँवार अब उतरेगा कैसे पार,
एक राम नाम सार, सब झूठा संसार है।।

और जब हाथी पर बैठे हुए औरंगजेब को नवखंडे से इस ओर आते देखा तो निपटनिरंजन ने पादशाही की सच्ची व्याख्या करते हुए कहा :—

लश्कर लवाज संग डफ ढोल चतुरंग
हाथी पे ही नौरंग तशरीफ लाई है।
शंभु को सूली चढ़ाया, बेटी को यहाँ भगाया
मुराद को मरवाया, मारा दारा भाई है।।
बाप को तो कैद किया, सरमद का सर कटाया
फकर को न दूर किया, फकीर आजमाई है।
कहैं 'निपटनिरंजन' सुनो आलमगीर
तसबी की तलवार ये ही पादशाही है।।

कहा जाता है कि जिस समय औरंगजेब निपट महाराज के स्थान के समीप आये उस समय उन्हें बड़ी जोर से ठंड देकर बुखार चढ़ गया। वे गुदड़ी ओढ़े हुए थे। उन्होंने तुरन्त कहा :—

अरी गोदड़ी बावरी, राखो शीत शरीर।
निपट परिच्छा लेन हित, आवत आलमगीर।।

निपट ने अपने बुखार के जाड़े को अपनी गोदड़ी को दे दिया और स्वयं बाहर निकल आये। औरङ्गजेब को देखते ही उन्होंने कहा :—

अहंकार के हाथी पर, चढ़ आया तू शाह।
चरपट का चौखट यहाँ, शाहों के भी शाह।।

फिर देखा कि शाहंशाह तो लश्कर-लवाज के साथ हाथी पर सवार हो मिलने आ रहा है। शीघ्र ही निपट महाराज भी पास के परकोटे

की दीवार पर चढ़ उसे हाथी के समान चला लाये और सामने आकर बोले :—

दाबा पादशाहन का करे तू आलमगीर,
हम तो फकीर एक नाम के आधार है।
बुखारी में जीता जहान बातन में हैरान
गुमावो गुमान तो जहान ताबेदार है।
घूम आयो नवखंड देखा होगा कई पाखंड
गोदड़ी ने लिया ठंड सवारी दीवार है।
कहै ''निपटनिरंजन' सुनो आलमगीर
ए दिल्ली दरबार नहीं फकीर दरबार है ।।

जहाँ शाहंशाह औरंगजेब के इस स्थान पर शाही तम्बू गड़े हुए थे वहाँ सामने एक ओर हनुमान टेकड़ी और दूसरी ओर वहीं गोगापीर का स्थान था। उसी रात्रि तम्बू में सोते-सोते औरंगजेब ने स्वप्न में देखा कि उक्त दोनों उच्च स्थानों के देव हनुमान और गोगापीर में दंगल हो रहा है। निपट निरंजन ने प्रातः औरङ्गजेब से मिलने पर स्वप्न के कौतुक पर पूछा :

कौन कौन करिष्मा देखे यहाँ पादशाह
जंगल में दंगल सुमंगल दिखाई है।
पीरन के पीर गोगापीर मति धीर महा
हनुमान टेकड़ो सुकनपुर भाई है ।।
सुनेरी महल मुकबरा की करे बड़ाई
देख इस गिरि बीच लेना जो सुहाई है।
कहै 'निपटनिरंजन' सुनो आलमगीर
खुदी की नजर छांड़ो तो सारी खुदाई है ।।

औरङ्गाबाद के बेगमपुरे के समीप गोगापीर, हनुमान टेकड़ी, सुकनपुर[1] (शुभकरणपुरा। जिसे दतिया-नरेश राजा शुभकरण के द्वारा बसाया गया था, सुनेरीमहल जिसे ओड़छा-नरेश पहाड़सिंह ने पहाड़सिंहपुरा में बनाया था,

---

१. राजा शुभकरण का राज्यकाल सन् १६५६-१६८३ तक रहा। ये औरंगजेब के साथ सामूगढ़ (आगरा) के युद्ध में दारा के साथ लड़े थे। इनके पिता का नाम भगवानराय था।

मुकबरा,[1] जिसे बीबी राबिया दुर्रानी की स्मृति में आजमशाह ने सन् १६५६ के लगभग बनवाया था, सभी इस देवगिरि के बीच शोभायमान हैं, जिनका ऐतिहासिक और भौगोलिक महत्त्व है। यदि इन सभी स्मारकों का यथार्थ दर्शन औरंगजेब कर लें तो उनका अहं और उनकी भेदबुद्धि का परित्याग संभव हो सकेगा।

एक समय उनके किसी मुसलमान दरबान को शरारत सूझी। उसने एक थाली में बकरी का मांस काटकर निपट महाराज को तोहफे के रूप में पेश कर दिया। कहा जाता है कि ज्योंही निपट महाराज ने उस पर दृष्टि डाली तो वह बकरी का मांस प्रफुल्लित फूल के रूप में परिणत हो गया और उसे लौटा कर पुनः पेश करा दिया; तब निपटनिरंजन ने यह कहा :—

भेजा दरबान हाथ शाही तोहफा शाहंशाह
देवे क्या तुझे इनाम फकीर तो नंगा है।
यही जान फूल कू लौटाय दिया मेहरबान
जाने तो सारा जहान कैसा नवरंगा है॥
दिल की देखो बुनियाद, खुदी में खुदा की याद
पूरी न होगी मुराद दिन जो ना रंगा है।
कहैं 'निपटनिरंजन' सुनो आलमगीर,
दिल होय चंगा तो कटोरी में गंगा है॥

पुनः कहा :—

महमद नूर नर जानत जहान सब,
दोजख बहिश्त दोनों जिसने बनाया है।

---

1. The Makabara raised by Prince Azamshah to the memor yof his mother Begam Rabia Durrani, the w'fe of Aurangzeb, stands in the suburb of Begampura and was erected between the years 1650 and 1657 (Circa 1707 V.)

—Aurangabad Gazetteer, Page 594.

फ्रेंच यात्री थेवेनाट ने, जो यहाँ सन् १६६७ में आया था, यह मकबरा देखा था।

सांचा तन चोथा है तबक़ जान
तूने तबक में क्या फकीर को पठाया है ।।
नूर नबी ने है नूर सबका बनाया एक
बकरी हलाल करे किसने बताया है ।
कहैं 'निपटनिरंजन' सुनो आलमगीर
जाने ना पराई पीर क्यों हराम कहाया है ।।

तोहफे की इस शरारत को देख औरंगजेब खुद निपट महाराज के पास आये और उन्होंने औरंगजेब को स्थूल दृष्टि से न देख सूक्ष्म दृष्टि से देखने की सलाह दी :—

शाह दस्त दोउ जोड़ के कर सलाम सिर टेक ।
कहैं 'निपट' अपनी नजर लखियो अगम अलेख ।।

आलमगीर औरंगजेब ने सिद्ध योगी निपट महाराज के सत्संग से लाभ उठाया और उन्होंने निपट को जागीर देनी चाही, तो निपट ने अपना उत्तर इस दोहे में दिया :—

आलमगीर क्या देत है, आलम को जागीर ।
चर्पट का पंजा यहाँ, दूजा देख फकीर ।।

इस उत्तर पर वे बड़े सन्तुष्ट हुए और निपटनिरंजन को अपने साथ दिल्ली ले जाना चाहा, किन्तु निपट ने यहीं रहने की इच्छा प्रकट की, जैसा कि निम्नलिखित पद्यों से प्रकट होता है :—

हम तो फकीर खुद मस्त हैं खुदा पै फिदा
रहे जग से जुदा कछू लेना है न देना है,
शाहो के भी शाह नही हमें कुछ परवाह
चेला चाटी की न चाह, ताना है न बाना है ।
मन ही मों नहाना धोना पवन का खाना पीना
आस का ओढ़ना और पृथ्वी का बिछौना है,
कहैं निपट निरंजन सुनो आलमगीर
सुनेरीमहल बीच सोना ही तो सोना है ।।
टूटा सा प्याला भला फाटी सी लँगोटी भली
वो भी जहाँ देखो चोथड़ों से लदी है,

जहाँ लगे भूख तहाँ अन्न का निरूप हमें
जहाँ लगे प्यास तहाँ नाला और नदी है।
गैफ के है फर्श और गैफ के खजाने बहु
खासा है मन सब आसन ही गद्दी है,
कहैं 'निपटनिरंजन' मन ही मों मगन रहो
करना तो फकीरी दुनियादारी वही है ।।
कोई तकियों में मस्त कोई गदियों में मस्त,
कोई महल में मस्त कोई रागरंग मस्त है,
कोई दरबार में कोई सरदार में
कोई बाजार में कोई गाँव गाँव मस्त है।
कोई मन में है मस्त कोई धन ही में मस्त
कोई विषयन में मस्त प्रेम मस्त कोई है,
कहैं निपटनिरंजन सुनो आलमगीर
कोई काऊ में मस्त हम याहू में मस्त हैं ।।

स्थूल और सूक्ष्म शरीर के इस रहस्य की चर्चा करते हुए निपट ने पुनः प्रश्न किया :—

मन माया आदम नहीं, और न था शरीर।
कहैं निपटनिरंजन जी, कहाँ थे आलमगीर ?

इस प्रकार मक्का और हज की गुलामी परमार्थ सोपान के लिये उतनी आवश्यक नहीं है जितनी कि अन्तर्यामी, घट घट में रहने वाले खुदा की भक्ति आवश्यक है। उनका दोहा है :—

नमाज रोजा लौंडी भई मक्का हज्ज गुलाम।
निपट घट में खुदा बसै नित उठ करो सलाम ।।

अन्तस्साधना से बाह्य भक्ति स्वतः प्राप्त हो जाती है। औरंगजेब और निपटनिरंजन की इन चमत्कार कथाओं के वर्णन-संकेत इस छन्द में भी प्राप्त होते हैं :—

नरतन नर भयो पशु पंछी तरु भयो
घोरा का सरूप कहा हाथी को दिखायो है।
फूल ही के फूलो कहूँ भर रहो भूलो कहूँ
पवन हो भूल्यो कहूँ जल हू बहायो है ।।

पंछिन मों बोनत मच्छर हु किलोलत है
जो जाही बर्न बोले ताही बर्न सो बनायो है।

साहेब रचायो ठाठ आप लीला आप नट
प्रगट गुप्त तो निपट ठौर ठौर छायो है।।

औरंगजेब तदनन्तर दिल्ली लौट गये किन्तु निपटनिरंजन महाराज के हृदय में यही इच्छा लगी रही कि औरंगजेब के समान अधिकारी, जिज्ञासु रहस्यवादी व्यक्ति का पुनः समागम प्राप्त हो। उन्होंने कहा :—

बैठे रहो करार से, मन में राखो धीर।
बिनती करो साहेब से, कि लौटे आलमगीर।।

बार-बार निपटनिरंजन औरंगजेब के प्रेम में यही कहते रहे :—

करनी करे करार से, मन नहिं जब तक धीर।
साहेब हमरे पास हैं, निपट ही आलमगीर।।

सिद्धयोगी सन्त कवि निपटनिरंजन के शिष्य का नाम निरंजन था। जिस दिन निपट महाराज को अपना यह भौतिक नश्वर शरीर छोड़ना था, उस दिन उन्होंने अपने शिष्य निरंजन को समीप बुलाकर अपनी समाधि लेने की सूचना दी। निपटनिरंजन महाराज को ऐसा लगा कि कोई पूछ रहा है ?

कहाँ से आये ? कहाँ जाओगे, कौन तुम्हारी दिक्षा
कौन तकिया तख्त बोलो ? किनके हो तुम शिष्या ?

निपट ने तत्काल उत्तर दिया :—

जहाँ से आये वहाँ जावेंगे, सोऽहं पद की दीक्षा।
तकिया तो निरंजन हमरो चर्पटनाथ के शिष्या।।

समाधि के समय निपट महाराज की आयु ११५ वर्ष की थी। वे अपनी नियत कोठरी में चले गये और भीतर जाकर उन्होंने कोठरी को कुंडी लगा ली और यथासमय समाधि ले ली। निपट ने कहा :—

रोम रोम चर्पट बसें, जित देखूं तित नाथ।
चरनन में यह शीश है शीश पे गुरु का हाथ।।

सहज समाधि मौन की, पवन पवन में लीन।
निपटनिरंजन अस्त में, गुरु दर्शन मोहिं दीन।।

मरण समाधि लग गयी, ब्रह्मपुरी की बाट।
चरपट ने चटपट कियो, निपट को औघट घाट ॥
अगहन बदी एकादसी, गुरु सुमिरन की बाट।
चर्पट ! निपट की निपट ली, निपट निपट की बाट ॥

उनके शिष्य निरंजन ने उजागर किया :—

'सत्रह सौ पंचानबे, प्रमोद विक्रम जान।
अगहन बदी एकादसी, निपट भये निर्बान ॥'

तथैव :—

काल युक्त संवत्सर शक सोला सै साठ।
अगहन बदी एकादसी, निपट मुक्ति की बाट ॥

अर्थात् शाके संवत् १६६०+काल (त्रिकाल) ३=१६६३ इस प्रकार निपटनिरंजन का समाधिकाल सन् १७३८ है, जिसके अनुसार विक्रम संवत् १७९५[1] तथा शाके संवत् १६६३ ठीक बैठता है। अन्त में निपट महाराज के प्रति लिखे गये इस पद्य से उनका जीवन-परिचय हम समाप्त करेंगे :—

नख शिख कटा देखे, शीश भारी जटा देखे,
जोगी कनफटा देखे, छार लावें तन में।
मौनी अनबोल देखे, सेवरा सिर छोल देखे,
करत कल्लोल देखे बनखंडी बन में ॥
गुणी देखे वीर देखे जती और मती देखे,
माया भरपूर देखे, भूल रहे धन में।
आदि अन्त सुखी देखे, जन्म ही के दुखी देखे,
निपट से न सन्त देखे, लोभ नाहीं मन में ॥

---

१. कल्याण, गोरखपुर, जनवरी १९५५; सन्त निपटनिरंजन जी; पृ० २२२ जन्म संवत् १६८०, चंदेरी गाँव बुन्देलखंड, देहावसान संवत् १७९५, अगहन कृ० ११, आयु—११५ वर्ष।

आलमगीर औरंगजेब
और
निपटनिरंजन
का
संवाद

[१]

आलम में आलम तू आलम को देख जरा
आलम में जालिमों को आलिम जाम है,
आलम में आनकर आलम इलम नहीं
आलम को पैदा किया उसका यही काम है।
आलम में कई पादशाह हुए होंगे आगे
आलम का आनमुल गैब एक नाम है,
कहैं 'निपट निरंजन' सुनो आलमगीर
आलम में भूला सो ही नमकहराम है।।

[२]

पृथ्वी का माथा कहो आकास का पोत कहो,
चन्द्र की जोत कहो, कहाँ पर ठिकाना है।
वायु की नाभि कहो, गनेश की स्वाबो कहो,
समुद्र की लांबी कहो कहाँ तक जाना है?
पानी का मूल कहो, राग का रस कहो,
सूर का तेज कहो कहाँ पर समाना है।
कहैं 'निपट निरंजन' सुनो आलमगीर,
एता नहीं जाना मरदाना क्या जनाना है।।

[३]

पृथ्वी का माथा मैनागिरि देशमाँहीं,
आकाश का पोत वाराह के माथ ढहाना है,
चन्द्र की जोत जानो चन्द्रागिरि परबत,
वायु की नाभि यह तो रंभा का पेड़ माना है।
पानी का मूल निरंजन के है दीद माँही,
समुद्र की लाँबी सभी रुख का ठिकाना है,
सूर तेज उदैगिरि राग रस पुरुष शब्द,
गनेस की स्वाबी मानसरोवर जाना है ।।

[४]

सपने के जग बीच सपना तू देख रहा,
मेरा तेरा, तेरा मेरा, माया का संदेशा है।
राजा सोही रंक होवे, रंक सोही राजा होवे,
दुनिया बनी तब से यह तमाशा है।
सारे भोग भोगने का भोगता बनेगा कब,
कल की खबर नहीं दिल्ली का अँदेशा है।
कहैं 'निपट निरंजन' सुनो आलमगीर !
काजीजी दुबले क्यूँ सारे शहर का अंदेशा है ।।

[५]

दिल तो दरयाव है लाखों जहाँ मूँगा मोती,
ऐसी दिन रैन खेती क्या लादे ले जावेगा ?
देनेवाला एता देता, जाता नहीं जो समेटा,
तेरा देना सारा खोटा, तू क्या हमें देवेगा ?
जिसने तुझे बनाया, उसी का ही माँग लाया
भिखारी यहाँ भिखारी आया कौन किसे देवेगा ?
कहैं 'निपट निरंजन' सुनो आलमगीर !
बूँद से जो गई वह हौद से न आवेगा ।।

[६]

ऋद्धि और सिद्धि से न आतमा की शुद्धि होय,
परमात्मा को जानने की बुद्धि चाहिये।
पाँच वक्त नमाज के और वक्त शैतान के,
राम औ रहीम में न भेद बुद्धि चाहिये।
अनलहक हो के देख तू आलमगीर,
हाथ कंगन को भला आरसी क्या चाहिये।
"निपट" पीट चर्पट झटपट पट खुले
झुकती है दुनिया झुकाने वाला चाहिये ॥

[७]

पंच विषय पंच और तामें नहीं चौर ठौर,
कैसे कर प्रभूजी के ध्यान को तो ध्याइये।
यह पंच की वासना मिले ना एक कू एक,
पंच को पाँच चीज न्यारी न्यारी चाहिये।
पंच होवे राजी तब क्या करेगा काजी भला,
ए पंचन में से एक हो तो कैसे मनाइये।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
बिन पंचन को मारे कहुँ और न जाइये ॥

[८]

लँगड़ा क्या जाने दौड़ धूप करे,
बहिरा क्या समझत ज्ञान और ध्यान को।
टुंडा क्या जाने ताल मृदंग डफ ढोल,
मुक्का क्या समझे पोथी और पुरान को।
सूम क्या जानत दया और धर्म दान,
पापी क्या समझै माता और बहन को।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर
खुदा को न जाना, क्या जाना शैतान को ॥

[९]

सोचत सोचत सोच रहा शठ,
आयुष की सब ठाठ गही है।
चेत अबै अवसर है महा,
जो गई सो गई जो रही-सो रही है।
न तो भक्ति भई न तो ज्ञान लई,
न तो औघट घाट की बाट सही है।
कहैं "निपट निरंजन" जी सुनो आलमगीर !
भागते भूत की भाँट लही है।।

[१०]

दाता थे सो बंद पड़े फकीर अदालत चढ़े,
चोरो के मरातब बढ़े जाके घर न द्वार है।
दोस्तों को मुश्किल दासन के अंग चिंदी,
बाप की न क्रिया साधी गोधन को करै उद्धार है।
सती कूँ विपत पडे कुट्टनी बैकुंठ चढे,
धर्मी तो जंगल अड़े अधर्मी सरकार है।
कहैं "निपट निरंजन" जी सुनो आलमगीर !
एक बात क्या कहै अंधा धुंध दरबार है।

[११]

जिसने तेरे को पादशाहत अता किया,
उसी दरबार में हम *धरना दे बैठे हैं।
जान का तुझे है खौफ रखा तूने लाखों फौज,
उसी में समझा मौज उसी में ही ऐंठे हैं।।
राज-पाट-बाट झूठ हाथी घोड़े लाखों ऊँट,
कौन बचावेगा तब जब रब ही रूठे हैं।
आलम फना "निपट" कहाँ तू आलमगीर,
तेरे नामधारी वीर कई जमीं लेटे हैं।।

[१२]

सुनो सुलतान जहान कौन है मुसलमान
खुदा की न पिछान, खुदा का जिक्र छेड़ा है।
कलमा पढ़े भराभर; मल्मा तो भरा अन्दर,
सौ सौ चूहे खायकर बोका हज्ज दौड़ा है।
करे नमाज रोजा न रूह का रकान खोजा,
जकात का लिया बोझा जगत बखेड़ा है।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर !
नाँचना तो आवे नहीं आँगन कहैं टेढ़ा है ।।

[१३]

ईसा गये सूली पर मूसा गये तूर पर
जिनकी न पहुँच हुवी चौथे आसमान तक।
नमरूद शदाद फिरोन हमान सब
खुदाई का दावा कर गये नहीं द्वार तक ।।
दारा और सिकंदर पत्ता नही जमीं पर
अकबर बाबर हुमायूं जहाँगीर तक।
कहैं "निपट निरंजन" कहाँ तू आलमगीर,
गिरगुट की दौड़ है तो सिर्फ एक बाड़ तक ।।

[१४]

अजब अनार दोऊ भिस्त के हैं द्वार पर
लखे दरवेश फकीर एक न्यारा है;
ऐन के अधर दोऊ चश्म के है बीच माँही
खसम को खोज जहाँ झलकत तारा है।
उसी बीच फकत खुदा का है तखत खुद
सिस्त से देख जरा जहाँ भिस्त ही सारा है,
"निपट निरंजन" ले मुरशद का अंजन
बे मुरीद आलमगीर दोजख निहारा है ।।

[१५]

कै मक्का में भटकत मदीने में भटकत,
काहे तूर पर जावत फिरत अपना मुख मोड़ ले;
कहीं बगदाद जावे, कहीं अजमेर आवे,
कहीं रौजे में आय कर रोजा यहीं छोड़ ले।
हज्ज औ नमाज रोजा जकात कुरान खोजा,
देखते को देखा नहीं सिज्दे सर फोड़ ले,
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर
मन को तू मूंड़कर खुदा फिर ढूंढ़ ले ।।

[१६]

कुरान पुराण पढ़े भागवत रामायण,
तीरथ बिरत नेम और चारों धाम जाने।
मक्का और मदीना पूजा, नमाज औ रखा रोजा
'निपट' कपट सूझा कैसे इसलाम जाने ?
राम नाम जपना और पराया माल अपना
लेकिन लुभावना तो जीवन का काम जाने।
बगल में छुरी और मुख जपै राम राम,
ऊपर से खूब बनी अन्तर की राम जाने ।।

[१७]

साधू भया साधा नहीं जोगी भया जोग नहीं,
सती भया सत नहीं जती भया कोई है।
मुनी भया, गुनी भया, ज्ञानी भया ध्यानी नहीं,
तपी भया जपी नहीं, गुरु औ गुसाई है।
बिरागी भया त्यागी नहीं, योगी वियोगी नहीं,
पीर भया थीर नहीं औलिया बताई है।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
दिल की सफाई करो यही पादशाही है ।।

[१८]

हिन्दू को काफिर कहैं कबर को पीर कहैं
नर आलमगीर कहै किताब सम्राट का।
जो दम गाफिल होय सो दम काफिर जान
सूनमून बुकमून सोही जान गाँठ का।।
कल्ब को रौशन कर मुरशद के मकतब
उमर गमाया सब तै ने अपने साठका।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर
धोबी का कुत्ता रहा घर का न घाट का।।

[१९]

खुद को ही नहीं जब खुद की खबर कुछ
ऐब की नजर है या रब्ब गीत गावेगा।
अपनी बुराइयों पे अपनी नजर कर
दुनिया में बुरा फिर देखने न पावेगा।।
ऐश में खुदा को भूला तैश में न खौफे खुदा
इन्सान हो के भी वो हैवान कहावेगा।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
दीन से जाय और दुनिया से भी जावेगा।।

[२०]

पढ़ता था नमाज बे नमाज को याद कर
अब क्या पढ़े नमाज बे नमाज पक्का है।
करता था रोजा ताजा तन मन नहीं खोजा
अब क्या करे रोजा महबूब को लखा है।
वजू किये नहीं पाक बाँग दिये नहीं साफ
दूर जाना था मक्के कू गली बीच मक्का है।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
दिल होय साँचा तो चहुँ ओर मक्का है।।

[२१]

बिना ही हलक बिसमिल्ला और अल्ला करे,
बिना ही नजर नूर नुक्ते को ही देख तू,
बेजबान कल्मा पढ़, बेकान हो कुरान सुन,
बिना ही शरीर खुद खुदा को परख तू।
बिना पैर मक्के जाना, बिना हाथ बेर लाना,
बिना सीस सिज्दा करना होवे तब शेख तू,
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर !
कौन तबक पीर, दिल की दिल्ली देख तू ॥

[२२]

अर्श मुअल्ला का तक्त चौथे आसमान बीच,
जहाँ ये खुदा ही फक्त तू ने वहाँ देखा क्या ?
लोहे महफूज बीच रूहैं कितनी है जमा,
होते किस विध फना अहं फहं रोका क्या ?
मलकूत जबरूत लाहूत आहूत में जा,
ऐनुलयकीन हो जा होगा फिर धोखा क्या ?
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर !
बारा बरस दिल्ली रहा भाड़ तू ने झोका क्या ?

[२३]

वाजबूल मुम्कनूल मुम्तनूल आरे फूल
चारो जिस्मों से देख चारों ही तबक तू।
मारेफत शरियत तरीखत हकीकत
हक्क से नाहक्क हो के लेवेना सबक तू।
अम्मारा लवामा मुलेहमा मुतमइना से
चारों नफ़सों को जीत तब आलमगीर तू।
कहैं "निपट निरंजन" मरने से मर पहले
अपनी हस्ती को मिटा छोड़ बक बक तू ॥

[२४]

अव्वरफूल मखलूकात रब्बुल आलमीन
ना हिन्दू ना मुसलमीन कोई जात पात है।
मक्का न मदीना कासी अचल है अविनासी
गुरु चेला ना उदासी अकेला कोई साथ है।
न मात भ्रात तात सुत सास्त्र ना पंचतत्त
परम हंस ब्रह्म सत सब ही समात है।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
ए सारा आलम ब्रह्म वृक्ष के ही पात हैं।।

[२५]

रूह को न रोटी दिया त्रिकुटी पै न पानी पिया,
अनहद जाय सोया महल ऊँचे ताल का।
रात में तो दिन देखा, दिन में ता रात देखा,
नीर बीच नूर देखा जहूर जमाल का।
पवन में गगन देखा गगन मे भँवर देखा,
पिण्ड में ब्रह्मांड देखा मरा देखा काल का।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
जिसका बाप जिन्दा उसे कौन कहे छिनाल का।।

[२६]

पढ़ता था वेद और जानता था भेद बहु
पढ़ता व्याकरण व्यास के समान है।
बुद्धि गणेश देने वाले दाता हैं ये,
जैसे भनंतराज बृहस्पति समान हैं।
शुक ऐसा नाद बंध मदन रूप हंस खेला,
कहता था अष्टपदी जो बल भीम तान हैं।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
एक रति बिन होय जे ते रहित कमान हैं।।

[२७]

एक अचरज की बात कछु कहो नहीं जात,
हाड़ मांस को शरीर वामें रहे प्यारा है।
अजी साहब का नाम सबही के पास रहे,
जीभ ऐसी बसत पानी बीच पखौरा है।
कान मूँद सुनो सब, सून नाक बास नाहीं,
जो आँख मूँद देखो तो जग अँधारा है।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर !
बगल मों बच्चा और शहर में ढिंढोरा है ।।

[२८]

ये जिम्या ऐसी पापिनी सुधि न राखे आपनी,
राम नाम लेने को थोड़ी अलसात है।
खाने को षड्रस कभू न कहे बस बस,
औ झूठी झूठी चुगली को दौड़ी दौड़ी जात है।
जाके जबान होवे शीरी वाके मुलुक गिरैं
ना गरीबी ना अमीरी व ऊँच नीच जात है।
कहैं "निपट निरंजन" जी सुनो आलमगीर !
ये माटी के पुतले में जिम्या करामात है ।।

[२६]

सोने को शरीर तामें लोहे की न लागे कील
नदी के किनारे कब तक इतरावोगे।
बनी न रहेगी सदा बिगड़ जायेगी तेरी,
हाथ पैर छोड़कर धनी पास जावोगे।
भजो भगवंत जासे बने रहे सब तंत
अंत के समय कछू पाछे पछतावोगे।
जस के नगारे धरे रहेंगे आलमगीर,
कछु लादे लिये आये थे न लादे लिये जावोगे ।।

[३०]

सूपन के उतारे हलका ऊँटन को भार होत,
मूसल के उतारे क्या हलका होत गरदा,
लोगन के उतारे कहो नौका का भार जात
कायर के डराने से क्या भाग जावे मरदा।
पांच इंद्रिय वश करे तीरथ व्रत करे,
योग आसना धरे निर्मल होत हिरदा,
कहैं "निपट निरंजन" सुनो हो आलमगीर,
कै झाँटन के उखाड़ने से हलका होत मुरदा ॥

[३१]

कायर क्या जाने रन बीच जाय लड़ैं,
सन्त क्या समझै मान अपमान को।
कुलटा क्या समझत जात और पाँत को,
सती क्या समझै रंग रूपवान को।
पवन क्या जानै वृक्ष और परबत,
पानी क्या जानै महल और मकान को।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
अंधा क्या जानै दरशन भगवान को ॥

[३२]

नर में न नूर हुवा दुविधा न दूर हुवा,
न मनचूर हुवा जावेगा क्या लाहूत में।
माया से न छूट हुवा ब्रह्म सों न भेट हुवा,
न रहा कपूत में और न रहा सपूत में।
आने का न ध्यान हुवा जाने का न ज्ञान हुवा,
मूत ही से भया प्यारे जावे फिर क्या मूत में।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
मन गया चूल्हे में और चित्त गया भूत में ॥

[३३]

मन ही करे विरागी मन ही करत रागी,
मन करे योगी भोगी मन ही उमाड़ता ।
मन ही करत ज्ञानी मन करे अभिमानी,
मन ही में माया ठानी मन सो ही धारता ।
मन ही करे फकीर मन ही करे आलमगीर,
बड़े बड़े रणशूर रण में पछाड़ता ।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो हो आलमगीर,
पहिचानत का चोर जान से ही मारता ।।

[३४]

चित्त में न चित्त दिया मन को न मान दिया,
बुद्धि को न सिद्ध किया चाल में कुचाल के ।
नैन में न नैन दिया बैन को न पैन किया,
मरे में न मरा जाय न जिया जाय मुख काल के ।
भोग में न योग किया न योग में वियोग लिया,
जीव को न शिव किया जीवन यह पाल के ।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
करना सो न किया फिर किया क्या छिनाल के ।।

[३५]

काम सा न बली देखा, क्रोध सा न छली देखा,
मोह सा न कली देखा, आठों याम साथी है ।
इन्द्रिय से न धोखेबाज, मन सा न दगाबाज,
लोभ सा न बट्टेबाज; ये तमाम तो घाती है ।
न वासना सी नागिनी, न तृष्णा सी बाघिनी,
आशा सी डाकिनी न, राधेश्याम रटाती है ।
कहैं "निपट निरंजन" जी सुनो आलमगीर !
जहाँ पर चोरों का डर वहीं शाम होती है ।।

[३६]

कान दिये हरि श्रवन करे,
और ज्ञान दिये गुन रटनन को।
मुख दिये हैं प्रभु का भजन करन को,
नेत्र दिये हैं प्रभु दरशन को।
हाथ दिये कछु दान करें,
और पाँव दिये तीरथ करने को।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर !
एक पेट दिये हैं पत खोने को।।

[३७]

सुनना जो चाहता तो सुन अनहद नाद,
देखना जो चाहे तो दिव्य ज्योति दिख पड़े।
साँस लेना चाहते तो सोऽहम् की साँस लेवे,
सोचना जो चाहता तो ब्रह्म सोच में अड़े।
चलना जो चाहता तो विहंगम मार्ग चले,
जपना जो चाहता तो अजपा जाप जप ले।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
ऐसी साध साधे नहीं सो ही जान हिंजड़े।।

[३८]

मलधारी मूत्रधारी अंग अंग छूत धारी
हम तो है कामी क्रोधी नीद के अघारी हैं,
छत्रधारी, शस्त्रधारी, तकते परायी नारी,
ऐसे ब्रह्मचारी तनूक भूख के अहारी हैं,
तिलकधारी मुद्राधारी गर्व औ गुमान भारी
आशा तृष्णा के पुजारी झूठ के जुवारी हैं।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर !
ऐसे पतित तारे क्या दरबार भिखारी है।।

[३९]

शंकर की सेवा कीन्हीं गणेश के पाय लागूं,
यही के मनाये काज कोई नाहीं सर है,
पीरों को शीरनी मानी कढ़ाई बाबा नानक की,
भैरों और भूपाल अजहूँ न अमर हैं।
नवग्रह के दाने बाँटे बालाजी को दे प्रसाद,
हनुमान को लगाये तेल और सिंदूर है,
कहैं "निपट निरंजन" जी सुनो आलमगीर!
आई हुई मुद्दत को मुद्दत ना कर है।।

[४०]

सूरज का करै मोल, पवन का करै तौल,
पृथ्वी का करे हिंडोल ऐसा नर कौन है?
बाँझ कू पढ़ावे पूत, घट में बोले हैं भूत
पत्थर का काते सूत, वाको घर कौन है?
कौन दिन रात कौन वाको तात मात कौन
धूर को चलावे राह, नील भरा कौन है।
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर!
जाने सो गुरु हमारा हम रहे मौन हैं।।

[४१]

सायर सो सगी और कायर सों सुकाम,
प्यारन पर प्यारे आशिक हैं मरद के।
चातर के चाकर, खवास खूबसूरत के,
रहते आराम बीच आदर और लज्ज के।
पिता के हैं पूत, पड़ोसी परमारथ के,
सगा सगी और चेला चाटी हैं सिद्ध के।
बांता हैं "निपट" से भिखारी सूम के जँवाई
सुनो आलमगीर! बहनोई बेदरद के।।

[४२]

जप तप कर देखे, धरती पवन देखे,
बीस बरस पत्ते खाय कछु ना भई है।
होम हवन वेद पुरान खटपट कर देखे,
जंत्र मंत्र तंत्र किये पत्थर ना पाई है।
जोग तो करत करत तीरथ फिरत फिरत,
काम क्रोध ढलत ढलत जनम गँवाई है।
कहैं "निपट निरंजन" जी सुनो आलमगीर !
गुरु पलक में अलख खलक दिखाई है ।।

[४३]

देखे देखे सब देखे जोग और जंगम देखे,
पोथी और पुराण देखे शास्त्र महाभारत हैं,
भूमि आकाश देखे रवि, शशि प्रकाश देखे,
गुरु व्यास देखे भोग त्याग स्वारथ है।
अवधूत संसार देखे जात और पाँत देखे,
शाह और भिखारी देखे हाथ ही पसारत है,
कहैं "निपट निरंजन" जी सुनो आलमगीर !
जो अपने को देखा नहीं सब वो अकारथ है ।।

[४४]

सत की कोपीन बाँध; छमा हू की छाल ओढ़
सुमत की माला अनुभव भभूत लगावरे,
दया की भिक्षा मांग धीरज की धूनी ताप
इस काया वन हू से नेक फल खावरे,
शीतल सरिता काटे ज्ञान की गुफा बनाव
तामें चित्त मन दे जटा को बढ़ावरे,
कहैं "निपट निरंजन" सुनो आलमगीर,
ऐसा जोग साधे तब ब्रह्मपद पावरे ।।

[४५]

हिम्मत की तलवार है,
धीरज की ढाल है।
लोभ की फाँसी है,
बेरहम का गोता है।।
माया की तोप है,
क्रोध का तो झटका है।
जो कुछ नेकी बदी सहना है,
सो सब सहना है।।
कहत "निपट निरंजन"
जी सुनो आलमगीर
फिर आना है ना जाना है,
फिर एक साहेब का नाम रहना है।

[४६]

अल्ला तो पीर है, मन तो मुरीद है।
तन तो सैयद है, बिचार औलिया है।
हक तो आला है; बेहक मुरदार है।

मुरशिद तो इमान है।
महम्मद दिलपाक है।
मदीना तो पाक है।

बेईमान तुफान है, चोरी तो नालत है।
हया तो दौलत है, बेहया तो खर है।
सबूरी तो फकीरी है, बेसबूरी मकीरी है।
हिरस तो हैरान है, बेहिरस तो औलिया है।
दया तो दौलत है, दर्दवान तो खैर है।
बेदया तो कसाई है, नफरत तो शैतान है।

जारी तो जुलुम है।
महम्मद दिलपाक है।
मदीना तो पाक है।

पुन्य तो पादशाह है, पाप दगाबाज है।
बुद्धि तो वजीर है; सुमति तो काजी है।
अहंकार थानेदार है, स्वास तो सूबेदार है।
हवस कोतवाल है, बेहवस तो कैद है।
दुःख तो मुहल्ला है, काया का सदर है।
लालच का बाजार है, चित्रगुप्त का पहरा है।

और कामदेव तो सुनी है।
महम्मद दिलपाक है।
मदीना तो पाक है।

हाथ हलकारे हैं; पांव तो प्यादे हैं।
जीभ तो जासूस है, वक्त तो कामना है।
नैनों के तो बान हैं; अकल तो बन्दूक है।

मन तो बारूद है।
महम्मद दिलपाक है।
धीरज की ढाल है॥

निपटनिरंजन
के
पद्य

[४७]

आनन्द के कन्द जगवन्दन शिवजी के पुत्र
गौरी के नन्दन धूप दे के नाम लीजिये ।
विघन के हरन, शुभ करन, तारन तरन
जानों यही चरन जुग-जुग जीजिये ।।
देव दरबार गजराज सो शुभ भवन
सिद्ध के काज कर नव निधि दीजिये ।
कहैं "निपट निरंजन" सीस में सिन्दूर जाके
सो गनेस को सुमिरन निसदिन कीजिये ।।

[४८]

बुद्धि के गनेस और ऋद्धि सिद्धि के विधाता,
चतुराई की भवानी जोग कू गोरख सी ।
ग्यान के जे रुद्र बिराग हू को रामचन्द्र
भोग करन कन्हाई सब रोग नीपसी ।।
दान को बली और ध्यान को ध्रुव जैसे
सत को धरमराज धन्वन्तर हकीमसी ।
कहैं "निपट निरंजन" साधे स्वारथ जन
सोवने को कुंभकरन भोजन को भीमसी ।।

[४९]

अकार की आदि धुन, माया की अनादि कहाँ,
ब्रह्म की समाधि कहाँ, केवल ठिकाना है।
देह का नूर कहाँ, बदन का पिंजरा कहाँ,
मन का मुख कहाँ, ज्ञान कौन जाना है ?
गगन का कलेजा कहाँ, गुनी का गुन कहाँ,
शिव का ध्यान कहाँ, जहाँ आना है न जाना है।
कहैं "नपटनिरंजन" ताना है न बाना है,
इतना नहिं जाना, ऐसी तैसी में बिताना है ।।

[५०]

अकार की आदि अनहद ज्ञान मूल नाम
माया की धून चतुर्दल कमल में है।
देह नूर हरि पास गगन कलेजा आकार
गुनी गुन मन मुख षटदल कमल में है ।।
पृथ्वी के भीतर बदन पिंजर जानो
शिव का ध्यान हरि शब्द के कँवल में है।
ब्रह्म की समाधि ब्रह्म कँवल में अछेदीप
कहैं "निपटनिरंजन" गुरु अनुभव में है ।।

[५१]

जब नभ नहीं तब पवन का वास कहाँ ?
जब हृदय नहीं तब शब्द कहाँ आया है ?
जब निरंतर नहीं तब प्रान कहाँ हो रह्यो
जब ब्रह्मांड नहीं तब ब्रह्म का दिखाई है ?
जब गगन नहीं तब हंस कहाँ करे वास
जब अनूप नहीं तब सुन्न कहाँ पाया है।
कहैं "निपटनिरंजन" काया नहीं तो जीव कहाँ
जब जीव ही नहीं तब शिव कहाँ समाया है ?

[५२]

जब नभ नहीं तब पवन निराकार में
शब्द सून्न में से ही ओंकार में आया है।
अविगत प्रान वास निरंजन बीच आय
ब्रह्माण्ड के पैले ब्रह्म सत्तनाम में समाया है।।
गगन के पैलें हंस सहज में वास करे
अनूप के पैले सून्न रंकार पाया है।
"निपट" काया के पैले जीव शिव में ही रहे
जीव नहीं तब शिव निरंजन छाया है।।

[५३]

आने की है बाट कौन, जाने का है घाट कौन,
ब्रह्म का कपाट कौन; कहाँ से जीव आयो है ?
जीव कौन, शिव कौन, शिव का स्वरूप कौन ?
कौन भरमायो कौन, कौन कोन में समायो है ?
नाद छन्द लागे कौन, माया कौन ब्रह्म कौन;
जनम क्यों पायो, क्या षटकर्मन को जायो है ?
कहैं "निपटनिरंजन" ऐ कैसा भव भंजन,
इतना नहि समझन झकमारन नरदेह पायो है।।

(५४)

आने का है घाट एक, जाने का है बाट एक
ब्रह्म का कपाट एक जीव तहाँ समायो है।
जीव एक, शिव एक, शिव का स्वरूप एक,
आप भरमायो आप आप में समायो है।।
नाद छन्द लागे एक, माया एक, ब्रह्म एक,
एक में अनेक, एक एक में समायो है।
कहैं "निपटनिरंजन" मिथ्या जग उलझन,
ये ही बात बूझन नरदेह पाय है।।

[५५]

जब हतो आदि, तब हतो अन्त अन्त,
यह सब खेल खेलबे को दुनियाँ में आयो है।
अकेलो उदासी ताते बोलबे को जग,
जगत् में गुरु जीव एक ठहरायो है।।
कहत "निपटनिरंजन जी" एक मों सकल कला,
दूसरो विचार देख कौन वेद गायो है?
साहेब तो सेवक, सेवक बिन साहेबी साहब,
रचा रूप आपसे कहु का का कहायो है।।

[५६]

सिंधु स्वरूप हले न चले वह
माँझ तरंगन केलि करे हैं।
बाहि को वाही माँ होत कुलाहल
जैसे के वैसे अखंड भरे हैं।।
काहिक वस्तु बिचार करो कहो
कोनकु मारत कौन मरे है।
केवल ब्रह्म विलास करे
कहो कौनकु तारत कौन तरे है।।

[५७]

ब्रह्मा हु न जान्यो मैं सृष्टि का रचनहार,
नारद हु न जान्यो मनमाल मोहन की।
राम हु न जान्यो सीता चोरी गयबे की,
रावन हु न जान्यो लंका के खोवन की।।
शंकर हु न जाने भस्मासुर वर दियो,
भस्मासुर न जान्यो कछु भस्म होने की।
दीनानाथ दीनबन्धु तेरी गति तूही जाने,
कहैं "निपटनिरंजन" ऐसी मति कौने की।।

[५८]

ब्रह्म का है पिता कौन माया की है माता कौन
खाता कौन पीता कौन कहाँ वाको घर है।
निर्गुन की जात कौन सगुन के गोत कौन
ज्योतिन का जोत कौन कौन परात्पर है।।
सिद्धन का वेद कौन योगियों का नाद कौन
वेदन का भेद कौन शास्त्र क्या आधार है।
कहैं "निपटनिरंजन" गुरु का न जाना घर
खर है कि नर या सूकर या कूकर है।।

[५६]

बैठा ऐसा बैठा नहीं, खड़ा ऐसा खड़ा नहीं,
गया ऐसा गया नहीं, आया ऐसा आया कौन,
करा ऐसा करा नहीं, तरा ऐसा तरा नहीं,
खाया ऐसा खाया नहीं, पीया ऐसा पीया कौन।
देखा ऐसा देखा नहीं, सुना ऐसा सुना नहीं,
जिया ऐसा जिया नहीं, सोया ऐसा सोया कौन,
चला ऐसा चला नहीं, 'निपट' निपटा नहीं,
दिया ऐसा दिया नहीं, लिया ऐसा लिया कौन ?

[६०]

ध्रुव जैसा बैठा नहीं गरुड़ सा खड़ा नहीं
नचीकेत सा गया नहीं शुक सा आया कौन ?
राम जैसा करा नहीं प्रह्लाद सा तरा नहीं
भीम जैसा खाया नहीं अगस्त सा पिया कौन ?
भुसुंडी सा देखा नहीं परिछीत सा सुना नहीं
लोमश सा जिया नहीं कुंभकर्ण सा सोया कौन ?
नारद सा चला नहीं "निपट" सा भूला नहीं
बली जैसा दिया नहीं सुदामा सा लिया कौन ?

[६१]

भीलनी के झूठे खाये बेर मित्र सदना से कसाई,
छींपी और नाऊ नामा इनसो कहें मर्म है।
देखे रोहिदास भवन चोखा नीच हू के घर जाय,
ग्वालन संग जीम्यो छत्री को ये धर्म है।।
जैसे हू सेवक और तैसे हू स्वामी हैं दोऊ,
इन की कहा कहे क्रिया हू न कर्म है।
"निपटनिरंजन" अब तारने की ढील कहाँ,
जन्म हू के बेशर्म कछु हमारी भी शरम है।।

[६२]

केतकी केशव कल्याण गुलाब गोपाल लाल,
मालती में वास करे मोहन मुरारी है।
चंपा में चतुर्भुज सेवंती में सीताराम,
चमेली में चिदानन्द सुगन्ध बहु भारी है।।
नारंगी मों नारायण गेंदा मों गोविंद लाल,
केवड़ा में केशव सोहे कुंज कुंजन बिहारी है।
कमल में कमलापति जाईजुई में जगन्नाथ,
जुग जुग के चरणों पै "निपट" तो वारी है।

[६३]

भूमि कहै मैं हूँ बड़ी, शेष कहै सीस खड़ी,
शेष बड़ा वो तो शिवजी के हाथ कड़ा है।
शिव से तो बड़ा वह कैलास जो लेय उड़ा,
रावण से बली बड़ा कांख में ले दौड़ा है।।
बाली से बड़ा राम बाण जो लिया प्राण,
बाण से बड़े श्रीराम जाके हाथ चढ़ा है।
कहैं "निपटनिरंजन" राम से बड़े भक्तजन,
जाके हृदय राम खड़ा सोही जानो बड़ा है।।

[६४]

कहीं देखा भक्त कहीं फिरत विरक्त
कहीं बन्द कहीं मुक्त कहीं गुरु कहीं चेला है।
कहीं राजा कहीं रंक कहीं मोती कहीं शंख
कहीं सुन्न कहीं डंक कहीं बन कहीं मेला है।।
कहीं ब्रह्म कहीं माया कहीं धूप कहीं छाया
कहीं जागा कहीं सोया कहीं मजनू कहीं लैला है।
अजीब तेरी साहेबी अजीब तेरी लीला यह
है तो अकेला मगर खूब खेल खेला है।।

[६५]

कहीं बैठा है तक्त कहीं देखा है खूशवक्त
कहीं नरम कहीं सक्त कहीं राजी कहीं छैला है।
कहीं आशक में चूर कहीं मूसा कहीं तूर
कहीं नार कही नूर कहीं दुरबल कहीं अकेला है।।
कहीं गोपी कहीं कान्हा कहीं भिक्षु कहीं दाना
कहीं जमीं आसमाना कहीं दुला अलबेला है।
छोटे और बड़े सब साहेब के सिफत कहो
है तो वह अकेला पर खूब खेल खेला है।।

[६६]

सीस नीचे पग ऊँचे फँसा था गर्भ गाँठी में
आया रोता, पीता था दूध, सोता था पाठी मों।
रिंगन लागा अंगन में, खाने लगा बाटी में,
फिर आया जवानी में फिरन लगा आटी मों।।
जब आया जरठपन कांपता है साटी में,
चित्त गया चाटी में और दिन गये खाटी मों।
कहैं "निपटनिरंजन" सुन गँवार मन
जनम खोय दियो तैंने यूँही सारी माटी मों।।

[६७]

आया था करार करके दुनिया में बंदगी का,
गंदगी में माया की निशा में क्या 'तू' सोता है।
खाता दूधभात नित पड़ेगा जम का हात,
चेत रे अचेत! क्यों खाये फिर गोता है।।
जिनके वली करतार वोही करे बेड़ा पार,
भव समुद्र है अपार, कोऊ नहीं आता है।
कहैं "निपटनिरंजन" हो गुरु के शरन
मनुष्य का जनम क्या बार बार होता है?

[६८]

जीवनो है अल्प जामें जीव सात पाँच कहे,
करना भी जरूरी है क्या क्या कछु कीजिये।
वेदन का अन्त नही पुराण का पार नहीं,
शास्त्र है अनंत चित्त कहाँ कहाँ दीजिये।।
"निपट" का पट नही सृष्टि का तो तट नही,
ब्रह्म का घूँघट नही काहे पर रीझिये।
लाखन की एक बात तुमको बताऊँ भ्रात
जन्म जो सुधारा चात रामनाम लीजिये।।

[६९]

ये जग मूत ही सो भयो,
मूत का बासन, मूत से पाग्यो।
खेत पर मूत खेती पर मूत
तो में मूत और तू तन पाग्यो।।
अमृत बून्द "निपटनिरंजन"
मूत से मूत जहाँ तहाँ जाग्यो।
तात का मूत और मात का मूत,
अब नारी का मूत समेटन लाग्यो।।

[७०]

एक बून्द मूत लागे वस्त्र को होत छूत
ऐसी जो ये विपरीत करतूत तू ने बिचारी है।
ताको यह पिंड दीन दीन होत है प्रचण्ड
शाह भयो भूप, पादशाह या भिखारी है।।
"निपटनिरंजन" के सुमरन को स्वारथ
अब लगे समेटन को बड़ो अहंकार है।
आदि न पहचाने नारायन भयो चाहत है,
अरे मन तेरो अग्यान कौन पार है।।

[७१]

नहाय के तीलक करे मन्दिर आसन धरे,
छूत छात करे मन मैल तो बसाई है।
जल जो चढ़ावे सो मच्छ कच्छ का जूठा किया;
चंदन चढ़ावे सो भुजंग लपटाई है।।
दीपक तो आगे धरे पतंग सो जाय मरे,
फूल चढ़ावे भँवर सुगन्ध ले जाई है।
कहैं "निपटनिरंजन" सो अच्छे अच्छे भोजन,
सब भये जूठे जब माखी ने स्वाद पाई है।।

[७२]

साच कहूँ झूट होय आपस में फूट होय
बातन की लूट होय कूट होय पाटी को।
उद्यम की हानि होय बोले अपमान होय
बात को तुफान होय दान जात गाठी को।।
तन छुये ताप होय बैरी सो बाप होय
पुण्य किये पाप होय साँप होय काठी को।
घर ही में घोर होय निर्धन पै वैर होय
दिनन को फेर होय मेरु होय माटी को।।

[७३]

घोड़े के चढ़वैये को तो घोड़ा नहीं मिलत
घास के कटवैये तो घर घोड़े बांधत है।
समसीर के बँधै को तो चाकू नहिं मिले
दासी के पुतेर तो समसीर बाँधत है।।
मंडिल के बँधैये को पगड़ी भी नहिं मिले
राँड़ के भड़वे फिरे मंडिल बाँधत है।
झूठ के बोलनहार सभा बीच मान पावे
साँच बोलनहारे तो भूखे ही मरत है।।

[७४]

पैसे बिना बाप कहे पूत नहीं कुपूत है,
पैसे बिना भाई कहै भाई दुखदाई है।
पैसे बिना जोरू कहे भड़वा निखट्टु महा,
पैसे से सगा और समदी सगाई है।।
पैसा न होवे गठ मौत भी न आवे झट,
पैसा होवे नाता चटपट बतलाई है।
पैसे का आदर मान बढ़ावे रोग अभिमान,
"निपटनिरंजन" के अनुभव आई है।।

[७५]

तपी थे सो तप मरे जपी चहूँ दिस फिरे
शराबी सहज तरे जो मुक्ति का द्वार है।
भक्त तो भये भिकारी दुष्ट के संपत्ति भारी
मुक्त हो गया शिकारी आप भये शिकार है।।
नरक में नाती पड़े बैकुंठ तो हत्ती चढ़े,
दानी गिरगुट नृग मृग का उद्धार है।
बैरी को दियो पीयूष इष्ट को अनिष्ट बीज,
कहाँ तक कहे ईश अंधाधुंध दरबार है।।

[७६]

सीता पायो दुःख अरु पारबती वंध्यापन;
नृग पायो नरक अरु गनिका गति पाई है।
वेणु भयो सुखी हरिचंद भयो महा दुःखो,
बली को पाताल सुरग पूतना पठाई है।।
ईश पायो विष विषधर पायो अमृत
पांडु जूके पुत्रन कु महा दुःख दाई है।
अब की सरकार में तो पोल को अचंभा कहा
आदि ही सरकार में तो पोल चालि आई है।।

[७७]

सूम से दस हाथ गांडक से बीस हाथ,
चुगल से तीस हाथ बचना पहाड़ से।
चंडाल से चालीस हाथ पापी से पचास हाथ,
सर्प से साठ हाथ शेर से पहाड़ से।।
तिरिया से सत्तर हाथ कलाल से अस्सी हाथ,
नाहर से नौवद हाथ हाथी के सोंड से।
कहैं "निपटनिरंजन" सौ हाथ सदा बचे रहो,
राँड़ भाँड़ साँड़ और बेसवा लबाड़ से।।

[७८]

घर छोड़े दार छोड़े सारा संसार छोड़े
संकल्प के घोड़े दौड़े कहता यह उदास है।
जिब्या की सचोटी नही इन्द्रिय की कसोटी नहीं
झूठी मूठी लँगोटी में छोटी मोटी आस है।।
देखा देखी लिया जोग घटे काया बढ़े रोग
राम दास बना या तू काम का ही दास है।
कहैं "निपटनिरंजन" मन का लज्जन
षड्रिपु दुर्जन को कहे क्या संन्यास है।।

[७६]

लोभ के बाजार में विचार कर बैठे मन
काम सी दुकान में सयान सब हारयो है ।
मोह से गुमास्ता जु मिले हैं आदर कर
दया सो दीवान जन माया पाश डारयो है ।।
क्रोध कोटवाल तहाँ कुबुद्धि पयादे पाय
मोह काम सोच निज बोलबो बिचारयो है ।
वाणिज व्यापार कैसे होय हो "निरंजन"
कंचन सो शहर इन पंचन बिगारयो है ।।

[८०]

ये मेरे मन्दिर औ ये मेरे महल मुलक
ये मेरी जागीर ये मेरी खेती बाड़ी है ।
ये मेरे सेवक गण दिन रात सेवा करे
ये मेरी सेज की प्यारी सुंदरी ठाड़ी है ।।
ये मेरे हाथी अंबारी दुनिया में नाम भारी
ये मेरे हैं नाती पोती मेरे ही खिलाड़ी हैं ।
कहैं "निपटनिरंजन" सब मेरे मेरे कहे
अंत के समय संग आवे नाहीं काड़ी है ।।

[८१]

राजा और प्रजा रूठे मित्र और भाई रूठे,
पंचाद मों जाति रूठे और क्या बताइये ।
पुत्र और कलत्र रूठे घर में सो त्रिया रूठे,
धनी कंगाल रूठे कहूँ नहीं जाइये ।।
यार और पड़ोसी रूठे गोत्र में तो वाम रूठे,
सब ही कुटुंब रूठे मन में न लाइये ।
कहैं "निपटनिरंजन" सब जग रूठे क्यों न,
पर दीनानाथ तैं तो रूठा नहिं चाहिये ।।

[८२]

जगत से हट कर ब्रह्मपद डट कर
राम नाम रटकर लाखों तरे मुनिया ।
वेद शास्त्र शोध कर आप से विरोध कर
आप ही को बोध कर कोउ नहीं सुनिया ।।
काम क्रोध दूर कर अहंकार चूर कर
मैं मेरी को मार कर पार भये ज्ञानिया ।
कहैं "निपटनिरंजन" जीवन में मरन
आप जो मरे तो पीछे डूब गई दुनिया ।।

[८३]

काठ की नाव को डूबत नहीं लगे बार,
पत्थर की नाव को सहज पार करेगा ।
भरे हैं दरियाव उछलत नहीं लगे बार,
मेहर की नजर से वो भी फिर भरेगा ।।
लोहे की भीत को ढावत नहीं लगे बार,
बारूद के कोठे को कोट जतन करेगा ।
कहैं "निपटनिरंजन" जी वाको भेद वोही जाने,
जो चाहे सो किया और चाहे सो करेगा ।।

[८४]

काठ को फिरे है कहाँ कन्दमूल खाये कहाँ,
जमुना जल न्हाये कहाँ मीलन मो लाला है ।
गाये कहाँ, नाचे कहाँ, बेद पुरान बाँचे कहाँ,
तेरा हिरदा साँचा नहीं क्यों भटका भूला है ।।
तीरथ को जाता है तीरथ तेरे ही हिरदे में,
भूला क्यों गँवार तेरे साथ नंदलाला है ।
कहते हैं ए "निपट" छाँड़ दे सारे कपट,
गुरू से होवे लिपट हिर्दे मों उजाला है ।।

[८५]

न पढ़ो श्रोंनामासी न पढ़ो क ख ग
पढ़ो जो वेदन को सार है।
राम नाम ज्यानो तब ही कछु पछ्यानो
भले से भलाई ना बुरे सो बिगार है ।।
निपटनिरंजन नीके के व्याहार देख
बात परमारथ की जो बातन की सार है।
वेद पाठ, पोथी पाठ पै समज के
पाठ एक राम नाम ही अपार है ।।

[८६]

मरे पढैया बैल, मरे वो अडियल टट्टू,
मरे वो करकशा नार, मरे वो पुरुष निखट्टू।
मरे मित्र वह मरे बखत पर काम न आवे,
पुत्र वो हू मर जाये लाज जो कुल कूँ लगावे ।।
ब्राह्मन वो मर जाय हाथ से मद जो पिलावे,
राजा वह मर जाय वचन दे उसे सतावे।
कहत 'निरंजन' मरे देख इतने ना रोये,
सुख शयनी बन सदा नींद भर जाके सोये ।।

[८७]

सीखे असलोक गीता, सीखे कवित्त छन्द,
जोतिष को सीखे तो मन रहत गरूरी में।
सीखे सब जन्त्र तन्त्र, मन्त्रन को सीख लेत,
पिंगल पुराण सीखे, भये बड़े रारी में ।।
सीखी सब सौदागिरी, बज्जाजी सराफी सीखी,
लाखनको हेर फेर करत अमीरी में।
कहैं "निपट" आपको न जाना शठ,
हर हर बोल न सीखे तो सारी सीख गयी धुरी में ।।

[८८]

सीख्यो है सिलोक और कबित्त छंद नाद सबै,
ज्योतिष को सीख्यौ मन रहत गरूर मैं।
सीख्यौ सौदागिरी त्यौं बजाजी और रस रीति,
सीख्यौ लाख फेरन ज्यौं बह्यौ जात पूर मैं ।।
सीख्यौ सब जंत्र मंत्र, तंत्रनहू सीखि लीन्हे,
पिंगल पुरान सीख्यौ सीखि भयौ सूर मैं।
सब गुन खान भयौ 'निपट' सयानो, हरि
भजिबो न सीख्यौ, सब सीख्यौ गयौ धूर मैं ।।

[८९]

सुन रे पंडत मत करना खंडत व्यर्थ
चार वेद रटत विराट की न घाट जाने।
घट बाहेर सो अंदर घट बीच मंदर
केते घट सिद्ध भीतर सुरति कौन हाट जाने ।।
प्रकृति केते घट केते वायु केते नीर केते
गगन त्रिकुटी केते जीव की न गांठ जाने।
कहैं "निपटनिरंजन" केते जीव केते शीव
क्या आया भाड़ झोकने ब्रह्म की न झांट जाने ।।

[९०]

बातन के कहे ते गोरख तत्व ज्ञान पाये
बातन के कहे ते महेस पुजातु है।
बात्यां के कहे ते भूत प्रेत मुख लेते
बात के कहे ते काला नाग उतरतु है ।।
बात कहे ते जीव कू संतोक होतु
वई बात पातसाहा सों मिलातु है।
"निपटनिरंजन" बिना बात करामात कैसी,
बात कह आवे तो बात करामात है ।।

[६१]

बातन के कहने से गोरख को ग्यान भयो
बातन के कहने से कै एक जीव जात है।
बातन के कहने से देह यह शीतल होय
बातन के कहने से मन आनंद हो जात है।।
बातन के कहने से जीवको सन्तोष होय
बातन के कहने से बादशाह मिल आत है।
कहैं "निपटनिरंजन" बातन में बड़ा फेर
एक बात आवे तो वो ही करामात है।।

[६२]

हाँसी मैं बिबाद बसै, बिद्या बीच बाद बसै,
भोग माहिं रोग पुनि सेवा माहिं हीनता।
आदर मैं मान बसै, सुचि मैं गिलान बसै,
आवन मैं जान बसै, रूप माहिं दीनता।।
भोग मैं अभोग, औ सँयोग मैं बियोग बसै,
पुन्य माहिं बंधन औ लोभ मैं अधीनता।
'निपट' नवीन ये प्रबीनती सुबीन लीन,
हरिजू सों प्रीति सब ही सो उदासीनता।।

[६३]

रति बिन भाई भरोसा न राखे
रति बिन तिरिया सुन न पति को।
रति बिन मित्र भी न कंठ को लगावे
रति बिन जोग सधे ना सती को।।
रति बिन कोई सभा में न बूझे
रति बिन मात पिता ही को फीको।
कहैं "निपटनिरंजन" कोटि करौ खटपट
एक रति बिन पाव रत्ती को।।

[६४]

राम जपे कृष्ण जप कोई तो भी नाम जप
जपे जीव शिव जानो जपे नहीं राव तब।
परासे पश्यन्ति जप मध्यमा वैखरी जप,
जाग्रत में जपे नहीं सपने में जपे कब।।
वेदशास्त्र भगवन्त कहे सारे साधु सन्त
नरतन पाया अन्त भूला गर्भ कौल सब।
कहैं "निपटनिरंजन" नित भोजन भजन नहीं
चार जने कंधे लिये जावेंगे जपेगा जब।।

[६५]

जागते नयन कौन, सुनते श्रवन कौन,
विनास का निवास कौन, और भके कौन है?
पाप कौन, पुन्य कौन, मुवे कोन सोवे कौन,
ऊँच कौन, नीच कौन, जागे सोवे कौन है?
श्रवण के जागे कौन, ब्रह्म का है बीज कौन,
आया सो प्रथम कौन, जीवत मरे कौन है?
"निपट" में बसे कौन, रूप में बिचार कौन,
एक में अनेक कौन, अनेक में कौन है?

[६६]

न क्षोत्र है, न गोत्र है, न पुत्र है न पौत्र है,
न शत्रु, न मित्र, न ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता है।
अनंग है, असंग है, अभंग है, अरंग है,
न गंग न तरंग न ध्यान ध्येय ध्याता है।।
न पास है न दूर "निपट" हाजिर है हुजूर,
सर्वत्र भरपूर न आता है न जाता है।
न काया है, न माया है, न छाया है, न आया गया,
बनवा दिया अमाया ऐसी वाकी सत्ता है।।

[९७]

तुम ही किन्ही इन्द्रियन को चंचलता,
तुम ही कहो इन्द्रिय जीते तो बल है।
तुम ही कहो सुत दारा बिन गती नाँय
तुम ही कहो यह फंदन के गल है॥
तुम ही कहो काया राखे को धर्म है
तुम ही कहो काया राखे बिन फल है।
'निपट' कहैं कोई दूजा साहेब नाँय
नहीं तो तोहे बाँध फाँस लेवे चल है॥

[९८]

ग्यानी हुवा चाहे तो संगत कर साधुन की,
ध्यानी हुआ चाहे तो ध्यान को बढाव रे।
जती हुवा चाहे तो जीवन की रक्षा कर;
सती हुवा चाहे तो इन्द्रिय बस लाव रे॥
भागा जद चाहे तो माँग रघुनाथ आगे,
गावा जद चाहे तो गोविंद गुन गाव रे।
भागा जद चाहे तो भाग बुरे कर्मन से
आवा जद चाहे तो राम शरन आव रे॥

[९९]

काया बटवृक्ष थल तीन गुन ज्ञान जल,
इसी में हरिफल नाम की हरियाली है।
प्रेम प्रीत पात लागे परमारथ के फूल,
काँटा है ना कोई शूल जग से निराली है॥
शील सत्य शाखा है आनंद रूप जाको मूल,
भक्ति में ना रहे भूल हर डाली डाली है।
समता सुगंध मन तत्व की चले पवन,
कहैं "निपट निरंजन" निराकार माली है॥

[१००]

अहंकार लेके संग अपान मिले उमंग,
नासिका घ्रान संग गुदा से होवे गुदा है ।
पाँच पच्चीस संग यह है त्रिगुण'की अंग,
आतमा इनसो अनंग रंग होवे जुदा है ।।
है त्रिगुण तासे भिन्न ऐसो जाने कोई जन,
तन उठावे चरण ग्यान होवे पैदा है ।
कहैं "निपट निरंजन" निरखे न कोई अन्य,
होवे वो चैतन्य जहाँ देखे तहाँ खुदा है ।।

[१०१]

मन का कडासन आसन चढा सहस्र दल
काम क्रोध धूनी खाक चढावे है तन को ।
अगम निगम जाप जपत सोहं आप
अनहत बाजा दिन रात बजावन को ।।
तीन गुन त्रिकुटी पर प्याला पीवे भरभर
जोगी जुगत अमर आवे ना मरन को ।
कहैं "निपट निरंजन" बन में भये बैरागी
रूप नही रेखा देखा घट घट जिन को ।।

[१०२]

चेत चेत चेत नर उमर जाये भराभर,
जानता है सरासर काल आगे आ रहा है ।
करता है मेरा मेरा हो रहा निबेडा तेरा,
बिना ही परमारथ जनम वृथा खो रहा है ।।
महिसासुर को मारे जरासिंधु को पछारे,
रावन सो बली लका खो हाथ धो रहा है ।
कहैं "निपट निरंजन" निपट लोभंदन,
क्यों मनसूबे में ही मसानबासी हो रहा है ।।

[१०३]

अंतःकरण संग ध्यान शब्द कर्ण बैठे कान
वाचा मिले शब्द को मन उजियाला है।
त्वचा भीख जाने, धरे मिलावे उठावे हाथ,
बुद्धि उदान संग ले भूप चक्षु आला है।।
देखे रूप धरे मिल उठावे चरण,
चित्त प्राण लानो रसना पै रसाला है।
रति सुख होवे जब मिल पहिचाने,
आतमराम तो इन सब से निराला है।।

[१०४]

आत्म नात्म विवेक नहीं बंद निवृत नहीं
कार्मोपासना नहीं राम नाम नहीं गायो है।
चित्त स्थिर नहीं मन पवन हाथ नहीं
माया को निस्तार नहीं सद्गुरु न पायो है।।
ज्ञान औ विराग नहीं श्रद्धा औ भक्ति नहीं
जीवन को मुक्ति नहीं विषय लिपटायो है।
कहैं "निपट निरंजन" मनुष देह धारन
सूकर समान वृथा सारे जन्म को गमायो है।।

[१०५]

ऊँट की पूँछ सौं ऊँट बँध्यो,
इमि ऊँटन की सी कतार चली है।
कौन चलाइ कहाँ कौं चली,
बलि जैहे तहाँ कछु फूल फली है।।
ये सिगरे मत ताकी यही गति,
गाँव को नाँव न कौन गली है।
ध्यान बिना सुधि नाहिं 'निरंजन'
जीव न जाने बुरी कि भली है।।

[१०६]

जोग जुगत की गत हैं न्यारी,
सो अनुहत सींगी बाज रही है।
गगन तले दरीयाव भरो है
भीतर चंदर लाज रही है।।
अलख भरा जो खल के
पलक झलक में बिराज रही है।
"निपट निरंजन" नबी को है नौकर
तीनों ही लोक में साज रही है।।

[१०७]

खोज करो कोई तन के अन्दर
जपे अजब की है एक माला।
दसवें मन्दिर तारे हैं लागत
भीतर भूले हैं नाथ गोपाला।।
असल पाक दिल चाक नगीना
अंतकाल की सुलगी है ज्वाला।
" निपट निरंजन " नाथ नबी का
निकसत सुन्दर चन्दर बाला।।

[१०८]

कौन ये जानत नर तन अन्दर
सुन्दर शाम सलौना है नीको।
उलट भेद घर हरि को जानो
पाँच निशान लगाना जती को।।
नउ दरवाजे हैं दसवीं खिडकी
बिराजी है लडकी टेरे पती को।
"निपट निरंजन" दर्शन कर ले
गुरु कृपा से जाय गती को।।

[१०६]

क्या जाने नर तन के अन्दर सुन्दर श्याम सलोना जी।
इडा पिंगला सुसमन बाला इन तीनों कु मिलाना जी।
उलट भेद का मकान जहाँ है पाँच निशान लगाना जी।
नौ दरवाजे दसवीं खडकी उस अन्दर एक लडकी जी।
जोग जुगत की गत है न्यारी अनुहत सींगी कडकी जी।
गगन तले दरयाव भरो है उस अन्दर एक चन्दा जी।
अलख ग्याने खलक भरा है तीनो लोक का बन्दा जी।
जनम मरन का डर नहीं यारो तूर्या तलप बुझाना जी।
'निपट निरंजन' नबी के नौकर अलख खलक में पाया जी।।

[११०]

क्या जाने घर भोंदू अपना गुरु का नाम निशानी जी।
इस तन अन्दर भूले कलंदर फकीर खडा निरबानी जी।
अलख खलक कें अलख सुहावन झलक रही है।
दस दरवाजे लागे झरुखे अलख लिखासो दिवानी जी।
गंगा जमुना सरस्वती और संग लिये तिरबेनी जी।
जनम जनम के धोके धोले उलटे घडे में पानी जी।
चौदह ताल पर महल बनाया तहाँ पुरुष निरबानी जी।
उसी महल में बिजली चमके भूले चन्दा रानी जी।
तीन लोक पर छ। सुहावै तहाँ गुरु असमानी जी।
ये विद्या कोई बिरला जाने जोग जुगत बिन जानी जी।
'निपट निरंजन' चरपट मौला चुप रहना गुरु ग्यानी जी।
नाथ नबी के कदमों ऊपर छोड़ दिये जिंदगानी जी।।

[१११]

बैठा है कै तक्त के ऊपर कै दूला अलबेला है।
कहीं मूसा कहीं तूर पै देखा कहीं गुरु कहीं चेला है।
कहीं नार कहीं नूर है रोशन दुरबल कहीं अकेला है।
कहीं पर छोटा कहीं पर बड़ा है कहीं मजनू कहीं लैला है।

कहीं गोपी कहां कान्हा दाना कहीं गाजी कहीं सेला है।
कहीं जमीन कहीं आसमाना कहीं तालिब कहीं मौला है।
कहीं नरम कहीं सक्त ही रहता कहीं पर छैल छबीला है।
कहीं आशिक कहीं माशुक देखा कहीं सुखी कहीं नेला है।
कहीं जंगल कही बस्ती देखा कहीं उजडा कहीं मेला है।
'निपट निरंजन' एक ही मौला खूब खेल यह खेला है।

[११२]

देखा एक बैरागी हमने अलख निरंजन बन में जी।
काम क्रोध की धुनी लगाया खाक लपेटा तन में जी।
तन का कडासन डाल के आसन भरम के फौज भगावे जी।
सहस्रदल पर चढ कर जोगी अनहत बाजा बजावे जी।
अगम निगम सोहं है जपता घूमै मन की माला जी।
तीन गुन त्रिकुटी के ऊपर भरभर पीवे प्याला जी।
अलख जोत से जोत मिलाकर जोगी बाना देखा जी।
खड़ा जगत् में भिक्षा माँगे भावभक्ति का भूखा जी।
मुकाम पूरा सब घट देखा ऐसा साहब मौला जी।
'निपट निरंजन' रूप न रेखा सोही गुरु का चेला जी।

[११३]

खोज करो कोई तनके अन्दर जपे अजप की माला जी।
दसवें मंदिर ताले लागे झूले नाथ गोपाला जी।
लाल पीला सफेद चरखा तापर श्याम सलोना जी।
ताके पीछे श्याम सलोचन निकसत चन्दा बाला जी।
असल पाक दिल चाक नगीना अन्तकाल की ज्वाला जी।
नाथ नबी का दास गोपाल गले मोतियन माला जी।

[११४]

काया किला येक पल में हिला
उसे यमराजा ने है दिया हिला।

सुखी न हेर शहर को लूटे, किलेदार जब निकल चला।
काया किले के दस दरवाजे, उसे यमराज ने आ घेरा।
किलेदार अक्कल बक्कल हो, निकल किया बाहेर डेरा।
कामदार मुसदी सब उठ गये, रहा नहीं चौकी पहरा।
भाई बंद परिवार कुटुम सब, रोवे देख देख वह चेहरा।
लुटा नगर तब बाजा डपडा, तब अंगन में दिया जला।
सुखी न हेर शहर को लूटे, किलेदार जब चल निकला।
निरगुन मीनारे किला जंजीरा, जमराजा ने दिया कटा।
गुप्त सुरंग दव ढाये जिन्होंने, कौन मोरचे आन थटा।
मनराजा कु पकड मँगाये, शहर तुम्हारा दिया छुटा।
रोनेहारा हटा कुटुम सब थका, मोरचा पीछे को जा हटा।
लुटा नगर तब बाजा ढपढा, सब उठा अंगन में दिया जला।
सुखी न हेर शहर को लूटे, किलेदार जब निकल चला।
पडी किले की असल, फिसल गई फौज पडी धरती में।
कहु सपने की बात, आज न कोई खडा साथ पृथिवी में।
यमराजा की विकट फौज, अब कौन बचावै इस गरदी में।
देखो रब की कला, दर्द दुख गला कि पलख में लिया बुला।
लुटा नगर तब बाजा ढपढा, सब उठा अंगन में दिया जला।
सुखी न हेरे शहर को लूटे, किलेदार जब चल निकला।

निपटनिरंजन

के

दोहे

[११५]

निपट तू झटपट निपट ले, मत होवै हैरान।
चटपट हरि को सुमरि ले, खोल हृदय के कान ।।

[११६]

निपट सूधो चाहिये, कछु तेढ़ो व्यवहार।
लघु चन्द्रमा बीजन को, सब जन करत जोहार ।।

[११७]

इडा पिंगला सुषमना, साधे कुंडल योग।
निपट सब चौपट भया, गया न मन का भोग।।

[११८]

कौन तुम्हारी बोली कैसी, कौन तुम्हारी जात।
कौन तुम्हारा भौन बोलो, आये किन के साथ।।

[११९]

साँचे से भागा फिरे, झूठे को पतियाय।
निपट ऐसे अजान को, कहाँ तलक समुझाय।।

[१२०]

एक झाड दो पंछी बैठे, दोनों का एक नाम।
मुँह साँवरे अंग गोरे, वो नहिं लक्षमन राम।।

[१२१]

सबसे तो मधुकरी भली, भाँति-भाँति का नाज।
दावा काहू का नहीं, बिना विलायत राज।।

भक्तकवि मानपुरी

१. जीवन-परिचय   २. पद

श्री योगानन्द मानपुरी

जीवन-परिचय

'सब दरवन की आद,

तख्त दौलताबाद—पूद १४ मानपुरी

'दौलताबाद' महाराष्ट्र के मराठवाड़ा प्रान्त का वह सुप्रसिद्ध 'गढ़' है, जो अपनी ऐतिहासिक परम्पराओं के साथ-साथ अपनी धार्मिक परम्पराओं का केन्द्र-बिन्दु रहा आया है। सन्तों की सन्निधि से ही यह स्थल यथार्थ रूप में सन्निधि कहा जाता है, चाहे उसे मुसलमानों के शासनकाल में 'दौलताबाद' कहा जाने लगा हो। इसकी धर्मप्राणता का एक प्रमाण और यह भी है कि देवगिरि किले पर ९८ किलेदारों ने किलेदारी की है, जिनमें से एक किलेदार गोसावी था जिसका नाम दौलतगिरि था। दौलतगिरि ने इस किले की किलेदारी ३ वर्ष ५ महीने और ६ दिन की[१]। प्रसिद्ध मुहम्मद तुगलक ने सन् १३२७ ईस्वी के लगभग अपनी राजधानी दिल्ली से दौलताबाद बनाई और यह स्थान 'दौलताबाद' नाम से प्रसिद्ध हो गया। यह देवगिरि ही धीरे-धीरे अपने कूटस्थ महत्व के कारण दौलताबाद बना जो साक्षी है—अपने इतिहास का तथा अपनी धर्मप्राणता का। मानपुरी महाराज ने दौलताबाद को 'तख्त दौलताबाद'[२] कहा है। यह सब धर्मद्वारों का 'आदि' है। ऐतिहासिक होते हुए भी यह वह धर्मप्राण गिरि है, जहाँ कूटस्थ साक्षी ईश्वरः ब्रह्म विराजमान है, जो ध्येय भी है, गेय भी है। नादी-वादी से पृथक्, सगुण-निर्गुण के परे, हिन्दू और मुसलमानों की पकड़ से दूर यह एकान्त गढ़-मन्दिर है, जहाँ चौसठ योनियों का देही अपने परमात्मा का दर्शन करता है, जिसके विषय में उपनिषद् ने कहा है : 'तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः।'

---

१. गोसावी व त्यांचा सम्प्रदाय, भाग १ला।

२. मानपुरी पद संख्या १४।

जीवन-परिचय :—

पुरी, भारती, गिरि, वन, आश्रम, तीर्थ, सागर नाम मूलतः संन्यासियों के होते हैं और ये सभी श्री मच्छंकराचार्य की शिष्य परम्परा के कहे जाते हैं :—

तीर्थाश्रमवनारण्यगिरिपर्वत सागराः ।
सरस्वती भारती च पुरी नामानि वै दश ।।

दौलताबाद के मानपुरी इसी पुरी सम्प्रदाय के हैं। 'पुरी' शब्द की व्याख्या है :—

ज्ञानतत्वेन सम्पूर्णः पूर्णतत्वपदे स्थितः ।
परब्रह्मरतो नित्यं 'पुरी' नामा स उच्यते ।।

पुरी सम्प्रदाय के १६ मठ कहे जाते हैं, जिनमें से ४ बैकुंठी, ४ मुलतानी, ४ गंगादरियाव, ४ दशनामतिलक के होते हैं। मुलतानी चार मठों के नाम ये हैं :—१ माधवपुरी करमखानी, २ हृषीकेश पुरी, ३ रामचन्द्रपुरी, ४ त्र्यम्बक त्रियापुरी। इस पुरी सम्प्रदाय में विद्यानन्द प्रमुख थे। इनकी तीसरी शिष्य-शाखा में किसन चैतन्यपुरी, हरिहर विष्णुपुरी, और केशवपुरी मुलतानी हैं। श्री योगानन्द मानपुरी कदाचित् इसी मुलतानी शाखा के हों। कहते हैं ये कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे और हिमालय में सरस्वती नदी के तीर पर योगसाधन करते थे। शके सं० १५०५ में तीर्थयात्रा के लिये घूमते फिरते देवगिरि में आये और वहीं रह गये।[1] परन्तु अन्तर्साक्ष्य प्रमाणों से यह सत्य नहीं जँचता। मानपुरी महाराज, निपट निरंजन मच्छमुनीश्वर के समकालीन थे। डॉ० केतकर ने बड़ी भक्ति से निपट निरंजन के साथ मानपुरी का नाम लिया है। मच्छमुनीश्वर की कृपा से जब सेंदुरवाड़े में भागीरथी प्रगट हुई थीं और उसे ब्रह्म कमंडलु नाम से अभिषेक कराया गया था तब यात्रा[2] में अमृतराय, देवगिरि (मानपुरी) वेरूळ घृष्णेश्वर, बहिरगाँव शिवनदी (हिरापुरी) निपट निरंजन (औरंगाबाद) इत्यादि के प्रवास का उल्लेख मिलता है।[3] शके

१. कल्याण गोरखपुर) योगांक सं० १६६२ पृ० ८५८।

२. मच्छमुनीश्वरांची कविता पृ० १८६ अभंग ५८३ पृ० १८६ 'मच्छनाथ ये थें यात्रा भरितो नवी। भेटली जान्हवी जन्ममाता'।

३. सन्त अमृतराय चरित्र : एकनाथ संशोधन मन्दिर औरंगाबाद, पृ० २६।

संवत् १६४७ तदनुसार सन् १७२५ के पुरुषोत्तम मास चैत्र शुक्ल में श्री मध्वमुनीश्वर की योजनानुसार अमृतराय ने जड़केश्वर के मन्दिर में जब श्रीमद्भागवत् यज्ञ कराया था तब उस निमित्त जिन महान् सन्तों को आमंत्रित किया था उनके नामों तथा उनके स्थानों का परिचय इस प्रकार मिलता है:— हिरापुरी (बहिरगाँव) मानपुरी (देवगिरि) मल्हार स्वामी (वेरूळ) निपट निरंजन (बेगमपुरा) कृष्णदयार्णव, शिवदिन केशरी (पैठण) निंबराज पुत्र नारायण (पैठण)[1]। औरंगाबाद के इस श्री भागवत् सप्ताह में आगत और उपस्थित हिन्दी सन्तों के विवरण भी मिलते हैं :—यथा 'निपट निरंजन हिन्दी सन्त कवि औरंगाबाद, खेमपुरी गुरु बोरसर, शिवनदी समाधि शके १६५८ आषाढ़, हनुमानगिरि शिवालय ग्रन्थकार हिरापुरी शिष्य वेरूळ, ब्रह्मानन्द स्वामी राजाची पिंपरी, वय तीनशें वर्षे, हिन्दी सन्त कवि हिरापुरी स्वामी शिवनदी बहिरगाँव, ब्रह्मनिष्ठ दीर्घायु समाधि शके १६७८ आषाढ़, मानपुरी हिन्दी सन्तकवि दीर्घायु, ब्रह्मसाक्षात्कारी-समाधि शके १६५२ जेष्ठ, उत्कृष्ट हिन्दी पद्यकार।[2] भगवद्भक्त नैष्ठिक ब्रह्मचारी दिव्यज्ञान योगी सन्त-कवि श्री मानपुरी ने, कहा जाता है कि, खेमपुरी गुरु व हिरापुरी गुरुबंधु के साथ हिमालय में नारद दर्शन व तपश्चर्या से ५०० वर्ष की दीर्घायु प्राप्त की थी। यात्रा में उन्होने ज्ञानेश्वर नामदेव आदि सन्तों से भेंट की और सन्त जनार्दन स्वामी के दर्शन किये और देवगिरि के समक्ष सूर्यकुंड पर प्रसन्न तप किया[3]। उस समय ये प्रौढ़ावस्था को प्राप्त हो चुके थे, काली दाढ़ी जटाजूट से युक्त एक तेजस्वी पुरुष थे। शरीर खूब गठीला और स्वस्थ था और इसी रूप में ये समाधिकाल तक रहे। कभी कोई रोग नहीं हुआ। इन्होंने योगबल से मानों जरा, मरण और व्याधि को जीत लिया था। यहाँ आने पर भी ये कठोर तपस्या करते रहे। किसी के हाथ का अन्न-जल नहीं ग्रहण करते थे, बहुत दिनों तक नीम की पत्तियाँ खाकर व अन्त में कुछ दिनों निराहार रह कर योगाभ्यास किया। इनके योगैश्वर्य को देखकर अधिकारियों ने इनके लिये एक मठ बनवा दिया, जो आज भी जीर्णावस्था में विद्यमान है। बाबा जी ने अपने योगबल से देवगिरि के सह्याद्रि के गर्भ में तप करने वाले कितने ही तपस्वियों और योगियों का दर्शन लोगों को कराया। कहते हैं, आज भी

१. श्री सन्त अमृतराय चरित्र : विष्णु बालकृष्ण जोशी, पृ० ४७।
२. अत्रैव, पृ० १०२।
३. मानपुरी भजन : सम्पादक विष्णु बालकृष्ण जोशी, पृ० १।

उनकी समाधि के समीप दिन-रात को उनके मठ में श्रद्धालु भक्तों को कितने ही सन्त महात्माओं के दर्शन होते हैं। कभी-कभी स्वयं बाबा जी भी हरि-भक्तों को स्वप्न में दर्शन देते हैं। उनके मठ से देवगिरि के किले का एक भाग दिखाई देता है। कहते हैं प्रतिदिन उस पर्वत भाग पर दोपहर को बाबाजी, श्री ज्ञानेश्वर महाराज व जनार्दन स्वामी के दर्शन करते थे। इन्होंने जीवित समाधि ली। उसके बाद ये बुरहानपुर में प्रकट हुए और वहाँ बहुत दिनों तक रहकर इसी भाँति जीवित समाधि ले ली। इसके बाद पुनः ये काशी में प्रकट हुए और वहाँ लीला कर योग समाधि ली। इसके बाद पुनः लगभग १०१ वर्ष पर देवगिरि मठ में आकर सब को दर्शन दिया।[१] इन चमत्कारों से यही सिद्ध होता है कि मानपुरी महाराज ने जरा और मरण को अपने योगबल से जीत लिया था। संलग्न चित्र से भी यही प्रतीत होता है। पं० प्रयागदत्त शुक्ल ने इनके लिये गोस्वामी मानपुरी शब्द का प्रयोग किया है और लिखा है 'स्वामी जी महाराज बहुत दिनों तक नागपुर में भी रहे थे, फिर भी उनका उत्तरार्ध जीवन निजाम के राज्य में ही बीता था। नागपुर के प्रसिद्ध कीर्त्तनकारों के आख्यानों में इनके कई पद गाये जाते थे।[२] इन्होंने योग्य स्थान में समाधि खुदवाई व समाधि पर लगाने के लिये यह पद्य बनाकर दे दिया :—

> पाहा देवगिरी समूळ[३] अवधी[४] साधूजनीं सेविली,
> ते थें मानपुरी पवित्र नगरीं समाधि संपादिली।
> सोळा सें वरि बावनातिल बरा[५] साधार संवत्सरीं,
> ज्येष्ठीं शुद्ध हि पंचमी रवि दिनीं हें बोलिलों उत्तरीं।[६]

इस वृत्त से यह स्पष्ट है कि योगानन्द मानपुरी ने रविवार, ज्येष्ठ शुद्ध ५, शके १६५२ साधार नाम संवत्सर तदनुसार सन् १७३० में जीवित समाधि ली थी। पर समाधि पर 'हें बोलिलों उत्तरीं' शब्द समूह बड़ा सार्थक प्रतीत

---

१. कल्याण (गोरखपुर) योगांक (१६६२) पृ० ८५८, लेखक : वि० बा० जोशी।

२. पं० प्रयागदत्त शुक्ल : हिन्दी साहित्य को विदर्भ की देन, पृ० ३६, ४०। पाठान्तर: ३. सफळ ४. 'अवनी' ५. 'शके षोडश बावनावरि बरी' —मानपुरी भजन : संपादक पं० विष्णु बालकृष्ण जोशी।

६. कल्याण (योगांक) १६६२ लेखक पं० वि० बा० जोशी।

होता है। समाधि के बाद 'मैं बोलता हूँ' कहकर 'उन्होंने अपने योगबल के चमत्कार को प्रकट किया है।

भीष्म पिता सेना भये, मनु भये पीपा बीर।
कपिल मानपुरी भये, गोरख निपट शरीर।।

की जनश्रुति के अनुसार मानपुरी कपिल के अवतार माने जाते हैं। समर्थ गुरु रामदास ने मानपुरी महाराज को 'मोठे ज्ञानी' नाम से सम्बोधित किया है। मध्वमुनीश्वर ने अपनी सन्तनामावली में जहाँ निपट निरंजन का स्मरण 'निपट-निरंजन सूरदास मल्लूक' कहकर किया है, वहाँ मानपुरी महाराज का भी स्मरण 'गोसावीनन्दन मानपुरी' कहकर किया है।[1] मानपुरी ने स्वयं भी अपने इस पद में निपट-निरंजन, मध्वमुनीश्वर तथा अमृतराय का नाम संकेत तथा उनके हरिपद ध्यान, आत्मानुभव और कीर्तनसुख के सम्मुख आदर्श का उल्लेख किया है :—

१—पद : दिंडी

'भगतन के गुनसार, गावो दिननिसि पार।।
निपट-निरंजन वास गुहा मों, हरिपद ध्यान अपार।
मध्वमुनीश्वर शुकशिष्यन को, आतम अनुभव धार।।
अमृतराय जी कीर्त्तन करते, जानत नहिं संसार।
मानपुरी हरिभजन कला मो, देखत जगत असार।।

यहाँ एक संकेत और भी मिलता है कि इस समय निपट निरंजन ने गुहा-वास ले लिया था। निपट निरंजन की जीवनी में हमने लिखा है कि निपट निरंजन की माता की मृत्यु पर ही उन्हें श्मशान वैराग्य हुआ था और वे पहले औरंगपुरा, फिर बेगमपुरा में रह कर वैराग्य लेने के बाद औरंगाबाद की गुफाओं के समीप रहने लगे थे, जहाँ आज भी उनकी समाधि है।[2] यह समाधि स्थान मराठवाड़ा विश्वविद्यालय से लगा हुआ है। मानपुरी भजन के भजन पद संख्या ४०[3] में एक और संकेत मिलता है जहाँ मानपुरी और मध्व-

१. मध्वमुनीश्वरांची कविता : संत नामावली, पृ० १५१, अभंग ५२४।
२. निपट निरंजन : जीवन-परिचय, अत्रैव।
३. पाठान्तर : 'ब्रह्मपुरी जो सरब हरी'
प्रकाशक किसन दामोदर सोमवंशी कासार, दौलताबाद पृ० २१।

मुनीश्वर का नामोल्लेख साथ-साथ हुआ है, पर उन दोनों के साथ सन्त राम-सरन गिरि का भी नाम मिलता है। उक्त पद मानपुरी का है अथवा सन्त रामसरन गिरि का, कहा नहीं जा सकता। परन्तु इन तीनों नामों का उल्लेख एक पद में होना तीनों को समकालीन अवश्य बतलाता है।

—पद राग सोरठ, आदि ताल

आये मेरे जलम जलम के बैरी।
बटुव हात बभूत चढावे, आये झुपरिया घेरी ।।
मानपुरी और मच्छमुनेश्वर काट दिई भव फेरी।
भयो गिरि राम सरन सन्त सों, ब्रह्मपुरी सब हेरी ।।

मानपुरी महाराज के गुरु के सम्बन्ध में ठीक नही कहा जा सकता। पं० विष्णु बालकृष्ण जोशी ने उन्हें श्री मानपुरी नाथ[1] कहा है और लिखा है :—बाबाजी भी ज्ञानेश्वर के नाथपंथ के योगी थे।[2]

गुरु ज्ञानदेव के गुणानुवाद पर उनका एक पद भी मिला है।

३—पद : सारंग सावत आदि ताल

गुरु ज्ञानदेव मन भायो रे।
भूला मन समझायो रे ।।धु०।।
ज्ञान अवतार लियो कलिजुग मों, सोवत जगत जगायो रे।
जनम जनम को सब दुख वासो, वार पार सुख छायो रे ।।
मानपुरी प्रभु तेरे गुण गावे, गावत[3] आनंद पायो रे।

सन्त गुरु ज्ञानेश्वर की परम्परा के आदिनाथ की स्तुति भी मानपुरी ने बड़ी भक्ति से की है।

४—पद : रामकली आदि ताल

तुम कूँ आदिनाथ आदेस।
लीने बहुविधि भेस ।।
आदि अनादि आप ही आपे, ब्रह्मा विष्णु महेस।
हो अग्यां कहा गुन गाऊँ, पार न पावे शेष ।।

---

१. तत्रैव: निवेदन, पृ० १।
२. कल्याण (गोरखपुर) योगांक (१६६२) पृ० ८५८।
३. पाठान्तर : 'ब्रह्म'।

मानपुरी सतगुरु चरनन पर, कीन्हों तन मन पेश ।।

मानपुरी महाराज ने मराठी में भी कई पद लिखे हैं। इस मराठी पद में श्री गुरुनाथ का स्मरण इन शब्दों में किया गया है :—

मानपुरी ला अनुभव ज्याला।
श्री गुरुनाथ चहुँदिस भरला।[1]

पंढरपुर के कानुड़ा के दर्शन भी मानपुरी ने किये थे, इस दर्शन के पूर्व उन्होंने भीमा नदी (ज्ञानगंगा) में स्नान किया था। उनका प्रसिद्ध पद है :—

५—जी ग्यान-गंगा आजी अन्हाया।

पूरण सतगुरु पाया ।।धु०।।
निरमल हो के हरिगुन गाया, आवागमन चुकाया ।।१।।
जनम जनम को मैल बहाया, ध्यान अखंड लगाया ।।२।।
मानपुरी चरनन चित लाया, सतसंग मन भाया ।।३।।

पुनः,

६—भोर भयो अस्नान करो जी।

श्री सतगुरु के पाँय परो जी ।।धु०।।
गुरु दरसन करि हरि गुन गावे, भवसिंधु छिन माँहि तरावे ।।
येकहि देव येकहि पूजा, येक भाव अब चित्त धरो जी।
मानपुरी प्रभु जहाँ तहाँ पूरन, स्वरग नरक दुबिधा बिसरोजी ।।

मानपुरी ने मराठी भाषा में दर्शनार्थ यह पद गाया :—

७—पद : यमन कल्याण आदिताल

अरे हरि झडकरि दर्शन दे रे ।।धु०।।
व्याकुळ मी तुज वाचुनी झालो, लवकरि धावुनि ये रे ।।
पावन हे ब्रिद वाहसि देवा, करि धरुनि मज ने रे।
मानपुरी पद पंकज आता, ठाव निरन्तर दे रे ।।

स्वयं स्नान करने के बाद भगवान् कानदेव के भी स्नानान्तर सोलह शृंगारयुत दर्शन मानपुरी महाराज ने किये :—

८—आज अचरज देखे सखी री।

सुन सखि, कानदेव रहत नगोड़ी।

---

१. मानपुरी के मराठी पदों के लिये देखिये :—संहिता विभाग।
प्रतिष्ठान (मराठी साहित्य परिषद्) मार्च १९५९, पृ० ३८, ४१।

न्हाय धोय अंग्य अंग्य सोलह सिनगार किये
ले दर्पण मुख जोये ।
तिलक मिटो नैनन के पानी, आज अचरज देखे री ।।[१]

पुनः गाया :—९—पद : काफी ताल बिलंदी

कानुडा उभा उभा अब ।
मुरली नेक बजाव ।।धृ०।।

मुरली माँहि सलोना टोना, श्रवण सुनन को चाव ।।
तन, मन, धन, भूला घरधंदा, सुन मुरली को भाव ।
मानपुरी मन मगन भयो अब, मधुरी तान सुनाव ।।

'विठ्ठल' के दर्शन के साथ-साथ मानपुरी ने पंढरपुर की वारकरी-आषाढ़ी यात्रा का भी वर्णन किया है ।

१०—पद : राग मल्हार, ताल झंपा

पंढरपुर मों बरसत पानी ।
घनघोर हरिनाम गरजत वाणी ।।धृ०।।
भई भीड़ भीमतीरा, भेटत महावीरा,
तर गयो मूरख मान गुमानी ।।१।।
आठ पहर आनंद झर लागी , प्रेम के बूंद से भींजत ज्ञानी :
मानपुरी गुरु की छवि निरखत, बोलत घट घट विठ्ठल वाणी ।।२।।

ऐसा लगता है कि यह यात्रा मानपुरी महाराज ने आषाढ़ी एकादशी को की थी और उन्होंने व्रत भी रखा था ।

११—पद : राग इमन कल्यान अड़ताल

आज हरि सुमिरन येकादसी ।
दरस पारनो द्वादसी ।।धृ०।।
येकहि ब्रह्म जहाँ तहाँ पुरुष, गुरु परसादे लाँघसी ।।१।।
भगति बिना भगवंत न भेंटो, मिथ्या साधन साधसी ।
मानपुरी प्रभु तबहीं रीझो, दासी हो कै ना दासी ।।२।।

---

१. हिन्दी को मराठी सन्तों की देन, पृ० ७९ ।

यत्र-तत्र पूछने पर मानपुरी की शिष्य-परम्परा[1] इस प्रकार बताई जाती है :—

खेमपुरी
|
मानपुरी
|
हीरापुरी
|
मंगलपुरी
|
ज्ञानपुरी
|
देवपुरी
|
भोजपुरी
|
धर्मपुरी
|
रतनपुरी
|
कुंडलपुरी
|
तेजपुरी—सुलतानपुरी
|
रामपुरी—नारदपुर
|
खुशालपुरी—बारे गाँव
|
दूधपुरी—मानपुरी गाँव
|
दहीपुरी—मानपुरी समाधि

मानपुरी की शिष्य-परम्परा के समर्थन में मानपुरी का यह पद विशेष उल्लेखनीय है :—

---

१. दौलताबाद के एक भक्त सज्जन से यह शिष्य-परम्परा एक पुराने कागज पर इस प्रकार से लिखी हुई प्राप्त हुई थी। अन्त में पाँच नामों के आगे कुछ स्थान विशेष भी दिए हुए थे।

१२—पद : नायकी

हीरापुरी भगत निस ।
खेमपुरी को दास ।।ध्रु०।।
षड्दरसन को सेवक साँचा, गुरु चरनन विसवास ।।१।।
आप तरे औरन को तारे, हिरदे प्रेम प्रकास ।।२।।
कहत मानपुरी अस्तुति करते, पावत मन उल्हास ।।३।।

खेमपुरी गुरु बोरसर शिवनदी समाधि शके १६५८ आषाढ[1] का उल्लेख हम कर चुके हैं। यहाँ पर मानपुरी महाराज ने अपने आपको 'खेमपुरी का दास' कहा है, तथा हीरापुरी को 'भगत' कहा है। अतः यह खेमपुरी-मानपुरी-हीरापुरी की शिष्य-परम्परा संभवनीय है, कि यहाँ यह भी कहा जा सकता है यह-'पुरी'-परम्परा बोरसर शिवनदी, देवगिरि (दौलताबाद) बहिरगाँव शिव नदी में विद्यमान रही। जिस प्रकार मानपुरी महाराज ने निपटनिरंजन, मध्वमुनीश्वर तथा अमृतराय आदि का नामसंकेत अपने पद[2] में किया है, उसी प्रकार खेमपुरी के इस पद में भी मध्वमुनीश्वर तथा अमृतराय का नाम-संकेत मिलता है :—

मध्वमुनीश्वर शुक के भागवत भक्त अपार ।
अमृतनाथ भगतन के सहकारी हरिसार ।।

जिस प्रकार गुरु खेमपुरी तथा उनके शिष्य मानपुरी ने गुरुशिष्य मध्व-मुनीश्वर अमृतराय का नाम-संकीर्त्तन किया है उसी प्रकार तच्छिष्य हीरापुरी ने तच्छिष्य अमृतराय के, कुलदेवता और ग्रामदेवत् अमृतेश्वर की, जिसको स्थापना चैत्र शुक्ल शके १६५१ को हुई थी, स्तुति की और अमृत-तर्पण की भक्तिपूर्वक चर्चा की है :—

पद है :— अमृतेश्वर शिवसाम्ब नमो जी ।।ध्रु०।।
बासजया औरंगाबादी, भक्ती कथा अवलम्ब ।।१।।
सुवर्ण असवित वर्ख दोना, वाटी जो अविलम्ब ।।२।।

---

१. अत्रैव ।
२. अत्रैव ।

पूर्ण भजना रायजींचा करि हरि संकट श्री ग्रम्ब ।।३।।
ग्रमृत तर्पण हिरापुरी दे, शिवनदि चे शिव ग्रम्भ ।।४।।[१]

सन्त कवि हीरापुरी बहिरगाँव शिवनदी तीर की समाधि शके १६७८ (सन् १७५६) आषाढ़ में ली गई। हीरापुरी के शिष्य माळीवाड़ा हनुमान गिरि थे, जिन्होंने शके १७२० (सन् १७६८) में ग्रोवी छन्द में वेरूळ में शिवालय माहात्म्य लिखा।[२] मानपुरी महाराज के १३५ वर्ष बाद ज्ञानपुरी समाधि-स्थित हुए, यह समाधि भी मानपुरी समाधि के समीप आज भी विद्यमान है और वहाँ यह लेख अंकित है :

श्री गुरवे नमः

श्रीमद्देवगिरी जनार्दनपुरी वैकुंठलोकापरी।
जे थें ग्यानपुरी हि मानपुरि सी ध्यावोनिया अंतरी ।।
सत्राशे सत्यांशि श्रावणे शशिदिने श्रीपूर्णिमाऽभ्यन्तरी।
गेले विष्णुपदा शरीर त्यजुनी ते क्रोधने वत्सरीं ।।[३]

अतः खेमपुरी, मानपुरी, हीरापुरी, मंगलपुरी ?—ज्ञानपुरी की शिष्य-परम्परा सुनिश्चित है। मानपुरी के गुरुपद का ध्यान आगे चलकर सन्तकवि औरंगाबाद निवासी कृष्णदास ने भी किया है; उनका कथन है :—

गुरु मानपुरी प्रसादे कृष्णदास छुपाई।
मुरशद मेरा है मानपुरी 'कृष्णदास' खाक पाऊँ ।।

डा० विनयमोहन शर्मा ने यह भी लिखा है कि मानपुरी के कई ग्रप्रकाशित पदों से उन्हें यह भी ज्ञात होता है कि इन्होंने उत्तर भारत की यात्रा ही नहीं की, वहाँ कहीं काफी समय तक ये रहे भी हैं। गंगा पर इनका पद है :—

तेरो हि निर्मल नीर गंगा जु तेरो हि निर्मल नीर।
तेरो जु न्हाइये पाप कटतु है, पावन होत सरीर ।।

---

१. श्री सन्त ग्रमृतराय चरित्र : एकनाथ संशोधन मन्दिर औरंगाबाद, पृ० १७६।
२. मानपुरी भजन, पं० वि० बा० जोशी कन्नड़कर, निवेदन, पृ० १।
३. गोसावी व त्याच्या सम्प्रदाय, भाग—१, गोस्वामी पृथ्वीगिरि हरि-गिर, पृ० १२७।

देस देस के यात्रा आवे, देखन तेरो तीर।
मानपुरी प्रभु तुम गुन सागर, जहाँ तहाँ देखत भीर ।।[1]

अपने उत्तरार्ध जीवन में मानपुरी महाराज देवगिरि पधारे। जनार्दन-स्वामी के एकनाथ महाराज को गुरु रूप मानकर वे जनार्दनपुरी देवगिरि में रहने लगे। उनका मराठी पद है :—

१३—पद : किरवणी ताल धुमा चम्पक

भासला रे गुरु पूर्ण सनातन।
भरूनिया उरला जनी जनार्दन ।।धृ०।।
अपरंपार परम सुखदायक, भवभयहारक स्वानंद कारक ।।
अगणित महिमा न वर्णिता वर्णवेना, दुजे पण साहेना वाचे वालवेना।
आनंद चित्त घन स्वरूप पावले, मानपुरी कृपा बळे निश्चळ लाघले ।।

'देवगिरि' को मानपुरी महाराज ने 'तख्त दौलताबाद' कहा है और इसे भक्तों और बन्दों की इष्टप्राप्ति का धर्म-द्वार माना है। धार्मिक वाद-विवादों को छोड़कर दोनों हिन्दू और मुसलमान यहाँ 'तख्त दौलताबाद' की चौकी देते हैं। उनका पद है :—

१४—पद : कानड़ा, नायकी आदिताल

सब दखन की आद।
तख्त दौलताबाद ।।धृ०।।
गढ़ चौरआसी जाको लागे, सो गढ़ अगम अगाध ।।१।।
बीर मीर मिल चौकी देवे, छोड़ वादविवाद ।।२।।
कहत मानपुरी सब बन्दन की, हासिल होत मुराद ।।३।।

मानपुरी ने अपने पदों में हिन्दू और मुसलमान धर्मों के विद्वेष को बुरा समझा वे तो ईश्वर और अल्लाह को एक ही समझते हैं। अल्ळाह वैसा ही सर्वव्यापक, घट-घटवासी है, जैसा ईश्वर है।

१५—पद : राग ललित आदिताल

अ ल ल ल लीला।
जित तित अल्ला अल्ला ।।धृ०।।

---

१. हिन्दी को मराठी सन्तों की देन, भूमिका, पृ० ज।

जहाँ देखो तहाँ आप हि दिसे, दरस दिखा घर अल्ला अल्ला।
पाक नजर सों देखो यारो, नहिं न बरान हि अल्ला अल्ला।।
मानपुरी साईं हर घट माहीं, तन को मिलो गल्ले गल्ला।

वे अल्लाह को भरपूर यत्र तत्र सर्वत्र देखते हैं। वह परिपूर्ण है। मनुष्य की योनि नश्वर है।

१६—पद : राग बिलंदी

यारो अल्ला भरपूर देखा जहाँ तहाँ।
सिजदा नमाज करों कहाँ कहाँ।।धृ०।।
गुरु को मुरीद आयो, पल मों अग्यान गयो।
परिपूर्ण जान लियो यहाँ यहाँ।।१।।
मानपुरी या नट को देखत है घट घट मों।
अन्तकाल कछु नहीं यहाँ वहाँ।।२।।

संसार पूछता है 'क्या तुमने खुदा देखा है ?' पूछने वाले धोखा खाते हैं। मृत्यु-मुख में जाने वालो ! खुदा बाप है और हम सब उसके ही बेटे-बेटियाँ। खुदा प्रेमस्वरूप है। उसके विरह के प्रेमाश्रु तेरे मन को प्रसन्न करेंगे :—

१७—पद : राग कानड़ा दरबारी ताल झंपा

खुदा देखने की बात मत पूछो।
यों ही फर परे निकल जायगा रे।।धृ०।।

अब तो बाँधता है चिरे बाद ले के।
फिर खाय खिलाय सिर सुलायगा रे।।१।।
बेटा बेटियों का तू तो बाप है रे।
फिर उन काम सों जायगा रे।।२।।
कहे मानपुरी सुख न अश्कों का।
साँचे अश्कों के मन भायगा रे।।३।।

मानपुरी महाराज-दौलताबाद में आकर अपने भक्तों के द्वारा बनाये गये अपने मठ में भजन कीर्त्तन करते रहते। घारेश्वर की शिवमूर्त्ति की स्तुति में उनका पद है :—

१८—पद : राग रामकली आदिताल

लागो धारेश्वर[1] को ध्यान ।
भागो गरभ गुमान ।।धृ०।।
प्रात:काल जब दरसन कीनो, हिरदे प्रगटो ग्यान ।
लिंगाकार आधार जगत, भगत बछल भगवान ।।
अस्तुति करत पार नहिं पावै, मानपुरी अग्यान ।।

धारेश्वर गुफा के समीप ही रासाई चन्दला देवी की मूर्त्ति है, जिसने अपनी करांगुलि पर देवगिरि को उठाकर रख लिया है। मानपुरी ने इस देवी को 'जगत की जननी' शब्द से सम्बोधित किया है।

१९—पद : ललित आदिताल

भज मन अम्बा ।
परिपूरण जगदम्बा ।।धृ०।।
आपहि रूप अरु रूप सुन्दरी, गुन औगुन आरंभा ।।१।।
करन कुमारी[2] जगत की जननी,[3] गगन मंडल को थंभा ।।२।।
कहत मानपुरी येक भाव सों, भगति करो तजि डंबा ।।३।।

कहा जाता है कि श्री रामदेव राय[4] तथा हेमाद्रिपन्त यहाँ स्वयं आकर इनकी पूजा करते थे। तिलचंदला अथवा रासाई चंदला देवी की स्तम्भ-प्रतिष्ठित प्रतिमा नगरकोट पर जल के समीप ही स्थित है। मानपुरी महाराज ने इस जाज्वल्यमान ज्योतिर्मयी देवी के दर्शन के समय पुनः पुनः गाया :—

२०—पद : सोरठ[5] आदिताल

नगरकोट जालपा देवी जागे ।
सब जन चरनन लागे ।।धृ०।।

---

१. मिलाइये 'धारेश्वरावरिल तुंदिल वंदिला हो'—पद—३०० ।
२. 'कर्णकुमारी च्या सुखें'—पद ४०२, पृ० १२० ।
३. 'त्यानंतरें जननि ची तिलचंदला हो' पद ३००, पृ० ८६
४. 'हेमाद्रिपन्त करि पूजन राम भूप ।
यात्रेस लोक मिळती स्तविती अमूप' ।।
—मध्वमुनीश्वर : पद ३००, पृ० ८६ ।
५. पाठान्तर : राग देवगिरि ।

देवगिरी[1] दर्शन की महिमा, नाम लिये भय भागे ॥१॥
देत रिद्धि सिद्धि भगत को, प्रेम गीत रस पागे ॥२॥
मानपुरी कुछ और न माँगे, फिर फिर दरसन माँगे ॥३॥

२१—पद : बिरावर, आदिताल

तेरी जोति मन भावति है।
भावति है, जग जागति है ॥धु०॥

अंबा अकल कला जानि नाहिं जावे, घट घट आप विराजति है ॥१॥
आपहि पुरुष आप ही नारी, ऊजर गाँव बसावति है ॥२॥
मानपुरी तेरे सरनायो, तेरे गुण तू ही गावति है ॥३॥

२२—पद : वीभास आदिताल

अम्बा लौ लागो तेरा,
लौ लागो भो भागो मेरा ॥धु०॥

जागत लो लो, सोवत लो लो, अन्तर बाहर लो लो हेरा ॥१॥
लो लो गुपित प्रगट सब देखा, मगन भयो मन माँहि घनेरा ॥२॥
लो लो नाम सदा गुन गावै, मानपुरी चरनन को चेरा ॥३॥

२३—पद : राग ईमन कल्याण, अड़ताल

आदि भवानी[2] वेद बखानी।
जग मत मानी अन्तरजामी ॥धु०॥

अंडज, जारज, स्वेतज, उबिज, चार ही खानी चार ही बानी ॥१॥
कहूँ लग बरना मो मति थोरी, पार न पायो ग्यानी ध्यानी ॥२॥
मानपुरी कहे बात पुरानी, गुरु कृपा से जात पछानी ॥३॥

२४—पद : खट राग, आदिताल

आदि भवानी[2] के गुन गावे।
तजि अभिमान चरन चित लावे ॥धु०॥

विमुख न हूजे मात पिता सों, भगति करो मो पन बिसरावो ॥१॥
सो नर पूत सपूत कहावै, येक भाव जाके मन भावे ॥२॥

---

१. पाठान्तर : कहा कहौं।
२. मच्छमुनीश्वर पद : ५९६ 'जय जय आदि भवानी....'

कहत मानपुरी गुरु मुख होके, अन्तर बाहेर प्रेम जगावे ।।३।।

२५—पद : ललित, आदिताल

भवानी घर घर शकति घमंड ।
नव दिन नव ही खंड ।।धु०।।

ब्रह्मा विष्णु महादेव धाये, तेरी भगति प्रचंड ।।१।।
जे जन ध्यावै ते जन पावै, भगति मुकति प्रचंड ।।२।।
कहत मानपुरी आदि शक्ति को, जायो सब ब्रह्मण्ड ।।३।।

२६—पद : कानड़ा नायकी, आदिताल

अम्बा तेरे पार न पायो ।
तीन लोक जसु छायो ।।धृ०।।
तू ही माय तु ही बाप, देखि दरस मन धायो ।।१।।
रूप अरूप सकल जगदम्बा, सतगुरु भेद बतायो ।।२।।
मानपुरी आनंदे डोले, जब सों यह पद पायो ।।३।।

२७—पद : कानड़ा, नायकी, आदिताल

अम्बा तेरे भजन बिन ।
मिथ्या सब संसार ।।धृ०।।

कहा भयो नर दौलत पाई, सपनो सो दिन च्यार ।।१।।
घर घर पंडित पोथी बाँचता, बिन अनुभव अँधियार ।।२।।
मानपुरी चौथी भगति बिना, कोई न पोंहचे पार ।।३।।

जगदम्बा रासाई चन्दला के समीप ही एक गणेश की मूर्त्ति है, मानपुरी महाराज ने उनकी भी वन्दना इस पद में की है :—

२८—पद : राग प्रभात

वन्दे गणपति गरीब निवाज ।
सुफल होत सब काज ।।धु०।।

श्री गणनायक निज सुखदायक, भगत बछल महराज ।।१।।
विघ्न विनाशन बुद्धि प्रकाशन, वर दे दासन आज ।।२।।
कहत मानपुरी मंगलमूर्त्ति, देव नमो सिरताज ।।३।।

देवगिरि में प्रतिष्ठापित देव-देवताओं के दर्शन और कीर्त्तन मानपुरी

महाराज ने बड़ी भक्ति से किये हैं। समीपस्थ द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से घृष्णेश्वर महादेव की भी स्तुति इन शब्दों में की है :—

२९—पद : सारंग, आदिताल

देखा जग बन माँहि शम्भु
आदि अनादि स्वयंभु ।।धु०।।

जगत जीव शिव अत्र विराजे, जहाँ तरंग तहाँ अम्बु ।।१।।
जो ताँबे के बहु विध भांडे, गड़ई गडुवा चम्बु ।।२।।
मानपुरी जो जिय पहिचाने, सो नर कीरति थंबु ।।३।।

घृष्णेश्वर महादेव के दर्शन के लिये शिवरात्रि पर बड़ा मेला लगता है, मानपुरी महाराज ने उस शिवरात्रि के समय भी शिवपूजन और शिवभजन किया है :—

३०—पद : यमन, कल्याण, अड़ताल

आज शिवपूजा शिवरात है।
शिव भजन के साथ है ।।धु०।।

सेवक कूं अपनो पद देवै, ऐसा भोलानाथ है ।।१।।
भगतबछल भगवान गुसाईं, सुर नर ताको ध्यात हैं ।।२।।
मानपुरी परमारथ कारण, निसिदिन शिवगुण गात हैं ।।३।।

शिवरात्रि के अवसर पर शिवजी के भक्त को भंग का नशा चढ़ना ही चाहिये। मानपुरी के शब्दों में भंग की तरंग का वर्णन सुनिये :—

३१—पद : राग सारंग, आदिताल

विजया मेरो मन कियो गलतान
ग्यान अमल निरबान ।।धु०।।

लोग ध्यान सदा सतगुरु को, नासो मान गुमान ।।१।।
अगम देस ते आई विजया, घोंटत सन्त सुजान ।।२।।
लहरि पै लहरि उठत सागर में, तैसी तान पै तान ।।३।।
मानपुरी आनंदे डोलै, गगन मंडल मैदान ।।४।।

मानपुरी महाराज ने इन गीतों में देवगिरि तथा उसके समीप प्रतिष्ठित देवी-देवताओं के दर्शन और उनकी स्तुति प्रार्थना में इन पदों की रचना की

है जिससे यह सिद्ध होता है कि मानपुरी महाराज दौलताबाद के सन्त ज्ञानी और भक्त कवि थे। मध्ययुग के सन्तों ने अपने भक्तिपरक पदों में निखिलानन्दसंदोह के ब्रह्म, परमात्मा और भगवान् तीनों रूपों का गुणगान किया है। वे अगुण ब्रह्म की महिमा का वर्णन करते हैं तथा सगुण रूप की गुणावली भी गाते नहीं थकते हैं। अवतार का मुख्य हेतु लीला का विस्तार ही तो है। वे इस लीला में तल्लीन हो जाते हैं। प्रेम-राग, रास-रंग सभी इन कवियों को प्रिय हैं। इनके भगवान् का ध्यान अष्टांगयोगी परमात्मा तक करते हैं। जीवन के दैनंदिन संस्पर्श, समन्वय की अप्रतिहत चेतना, रसात्मकता का आनन्द सभी मानपुरी के पदों में मिलता है। भक्तिरस से ओतप्रोत जीवन का यह लीलाकाव्य बड़ा ही प्रेरणादायक सिद्ध हुआ है। योगमार्ग, ज्ञानमार्ग और भक्तिमार्ग के साथ सूफीमत और उसकी साधना का प्रभाव भी इन पदों में झलकता है। अतः मानपुरी को सन्तकवि न कहकर ज्ञानी कवि और भक्त कवि कहना अधिक उपयुक्त होगा। आचार्य हजारीप्रसाद दिवेदी का यह कथन सर्वथा सत्य है कि "समूचा देश इस सिरे से उस सिरे तक भक्ति की रसमाधुरी[1] में सुस्नात हो रहा था। ये साधक अन्यान्य मुसलमानों के समान कट्टर और विरोधी नहीं थे, इसीलिये भारतीय जनता ने विश्वासपूर्वक इनकी साधना के प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित की।" मानपुरी के पदों में राम हैं, कृष्ण हैं, ईश्वर हैं, अल्लाह हैं। भक्ति के साथ-साथ, नीति के पद हैं, उपदेश के पद हैं। यह रागात्मिका वृत्ति सब में प्रवहमान है। मराठी कवि मोरोपन्त ने इन पदों को सुनकर यही कहा है "विष्णुपदीं विष्णुपदें जरि वाहे रसपदें हि मानपुरी।" रसरूप परमात्मा अपनी रसात्मा के साथ जिस रासमाधुर्य का आनन्द लेते हैं वह वर्णन मानपुरी के पदों में मिलता है। जीवन-रेखा के दो बिन्दु मिलन और विरह जिस उल्लसित अवस्था में एक दूसरे का स्पर्श व आलिंगन करते हैं वही मधुर मदिर वेला 'होली' के नाम से जानी जाती है, मानपुरी के 'होरी' के पद बड़े ही सुन्दर रूप में आज भी गाये जाते हैं। संगीत की राग-रागिनियों में मानपुरी के ये पद बड़े ही सरस और सुरस लगते हैं। भक्ति, भाव और संगीत की त्रिवेणी में स्नान करने का वह आनन्द श्रोतावर्गों को आज भी मिलता है। हिन्दी और मराठी दोनों भाषाओं में इस सन्त, ज्ञानी और भक्त कवि की वाणी मिलती है। यत्र-तत्र

१. हिन्दी साहित्य की भूमिका (१९६३), पृ० ४७।

पंजाबी स्वर "जी", "है जी", "हाँ जी" भी कहीं-कहीं प्राप्त हो जाया करते हैं। Poet of Daulatabad. Mainly a Hindi poet. Critics say the quality of his poems is high. Wrote some padas too.[१]

गायक भक्त कवि होने के नाते मानपुरी ने शास्त्रीय संगीत को अपने पदों का आधार बनाया और कई विभिन्न राग-रागिनियों में अपने पदों को स्वयं गाया और उनके शिष्य भक्त कवि आज भी गाते सुने जाते हैं। भक्त कवि मानपुरी के कतिपय छन्द निपटनिरंजन के पदों में नाम बदल कर समाविष्ट कर लिये गये हैं, परन्तु रचना सरसता और गेयता की दृष्टि से ये मानपुरी के ही पद हैं।[२]

सन्त मानपुरी की सन्तवाणी के पदों का रागसंग्रह

राग अल्या बिलावल अड़ताल

अल्या व जेतश्री	आदिताल
असावरी	आदिताल, अड़ताल, बिलंदी
अड़ाना	आदिताल, बिलंदी
अड़ानी	बिलंदी
आसा	आदिताल
कालंगड़ा	आदिताल
काफी	अड़ताल, आदिताल, बिलंदी
कानड़ा	बिलंदी
	नायकी
	दरबारी ताल झंपा
	आदिताल
	नायकी ताल रूपक

---

१. Milind Mahavidyaly a, Amangabad Magazine, 1958. "Ancient Life in Marathwada", Page 13. Dr. Pinge.
२. कल्याण, गोरखपुर जनवरी, १९५५, निपटनिरंजन, पृ० २२२]

	नायकी आदिताल
कामोद	आदिताल
केदार	...
कौसणी	ताल ध्रुवाचंपक
खट	आदिताल
खमाज	आदिताल
गौरी	आधाताल, आदिताल, सूर फाक्ता, अड़ताल
चिलंदी	आदिताल, बिलंदी आधीताल
छाया	नाटक
जोनपुरी	आदिताल,
जैजवंती	आदिताल
जीवनार	आदिताल
जैतश्री	आदिताल
झिंझोटी	बिलंदी
ढोला	आदिताल, बिलंदी
तोड़ी	झंपा, आदिताल, बिलंदी
देव गंधार	आदिताल
धनाश्री	आदिताल; बिलंदी
नट	ताल रूपक
परज	दीपचंदी, आदिताल
पीलू	आदिताल
पंचम	आदिताल
प्रभात	...
पुर्वी	चौताल, आदिताल
विभास	आदिताल, आधीताल, बिलंदी, सूर फाक्ता
बिलावल	आडाताल, आधीताल, दीपचंदी, बिलंदी
बहार	झुंबरा
बिहार	आल्या आदिताल
बिहाग	
बिहागर	चौताल
बिरावर	आदिताल, बिलंदी, अडताल, आल्या आदिताल, झंपा

बिहागउर	अड़ताल, आदिताल
बंगला	ध्रुवा चंपक, अडताल
बंकावली	आदिताल
बरुवा	आदिताल
बसंत	अडताल
ब्याहाग	आदिताल
बरवा	
भैरवी	आदिताल, अड़ताल
भूपाल	ख्यान आदिताल
मधु माधवी	आदिताल
मारु	आदिताल
मालश्री	आदिताल, आडाताल
मल्हार	अडवाल, सप्तताल, बैताल, झंपा
यमन कल्याण	आदिताल, रूपक, अडताल, बिलंदी
रामकली	आडाताल
रासा	आदिताल
ललित	आधीताल, आदिताल
ललत	...
शंकराभरण	आदिताल
श्याम कल्पन	यमन रूपक
साहनी	ताल झूमर
सोरट	
सोरट	आदिताल, झंपा, अडताल
सारंग	सावत बिलंदी
सारंग	सावतरूपक
सारंग सावत	आदिताल
सारंग ब्रिंदावन	आदिताल
सारंग दरबारी	आदिताल
सारंग गौड़	आदिताल
सारंग गौड़	अडताल
सारंग गौड़	बिलंदी

-सारंग सूर फाक्ता

-सारंग झंपा, रूपक, आदिताल, झड़ताल, विलंबी

हमीर कल्याण हस्तबंद

हमीर कल्याण, सूर फाक्ता

मानपुरी के पद

सतगुरु

३२—पद : बिहागड़ा अड़ताल

जय जय सतगुरु अविनासा
नासो भव फाँसा ॥ धृ० ॥
ग्यान ध्यान बिन दरस दिखायो
सोऽहं परकासा ॥ १ ॥
पर उपकार कहाँ लग बरणूँ
पूर्ण भई आसा ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु आनंद बोधा
हिरदे रहे निबासा ॥ ३ ॥

३३—पद : सारंग आदिताल

देखा सतगुरु नाथ अतीत
लागी वासो प्रीत ॥ धृ० ॥
जाकी सत्ता सब ठौर बिराजे
आई मन परतीत ॥ १ ॥
न आर न पार सदा परिपूरन
सब मीतन को मीत ॥ २ ॥
मानपुरी साई पलक न भूले
गाव निसिदिन गीत ॥ ३ ॥

३४—पद : नट, ताल रूपक

जय सतगुरु जय आनंदकंदा
जय जय परमानन्दा ।। ध्रु० ।।
साहेब साँचा दीन दुनिया का
सब घट पूरन चन्दा ।। १ ।।
देव निरंजन तन मन रंजन
खोयो करम मुकुन्दा ।। २ ।।
'मानपुरी' प्रभु दीन बांधवा
बूड़त तारो गंदा ।। ३ ।।

३५—पद : राग गौरी आदिताल

यो सतगुरु दरियाव ।
गहिरा अगम अपार ।। ध्रु० ।।
चौदा भुवन पेट में जाके ।
ताको सब बिस्तार ।। १ ।।
केतक गावे केतक ध्यावे ।
केतक करत बिच्यार ।। २ ।।
कहत मानपुरी गुरु स्मरण सों ।
सुफल होय संसार ।। ३ ।।

३६—पद : आसा आदिताल

सतगुरु चरनन पर वारी ।
भो भंजन बलिहारी ।। ध्रु० ।।
एक पल में अलख लखावे ।
जस गावे नर नारी ।। १ ।।
कीने पावन पतित घनेरे ।
जीवन मुकत संसारी ।। २ ।।
मानपुरी अब यक भाव सौं ।
आयो सरन तुम्हारी ।। ३ ।।

३७—पद : गौरी-आदिताल

पल भरि बिसरत नाहीं ।
सतगुरु दीन दयाल ॥ ध्रु० ॥
अवगुन भरो सब जब दरसन आवी
कीन्हो पतित निहाल ॥ १ ॥
गयो दुकाल राम गुन गावत ।
सस्ता भयो सुकाल ॥ २ ॥
मानपुरी निसिदिन स्मरत है ।
गुरु के प्रेम की माल ॥ ३ ॥

३८—पद : राग बिभास आदिताल

गुरुजी तारे पतित अपार ।
तुम बिन जग अंधियार ॥ ध्रु० ॥
येकन को ग्यान दियो ।
येकन को ध्यान दियो ।
एकन को निरधार ॥ १ ॥
एकन को दरसन ।
एकन को परसन ।
एकन को परवार ॥ २ ॥
कहत मानपुरी जुग-जुग जागे ।
कीर्ति परम उदार ॥ ३ ॥

३९—पद : काफी आदिताल

गुरुजी बाट बतावे ।
गाँव सजन को दूर ॥ ध्रु० ॥
किस मारग मेरो प्रीतम भेंटे ।
नैनन देख्ये नूर ॥ १ ॥
सब कोई कहत गुरु को पूछो ।
साहेब हाल हुजूर ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु घट मो कैसा ।
अलख रहा भरपूर ॥ ३ ॥

४०—पद : राग कामोद आदिताल

गुरु बिन भूले रे प्राणी।
माया मनमानी ॥ ध्रु० ॥
आपहि आप मोहसागर मों।
बूडत बिन पानी ॥ १ ॥
निरंकार निर्भय अविनासी।
निर्मल निर्बानी ॥ २ ॥
'मान' प्रभु सब घट व्यापक।
बूझत है ब्रम्ह ग्यानी ॥ ३ ॥

४१—पद : परज आदिताल

प्रभु की महिमा कहत न आवे।
सतगुरु अलख लखावे ॥ ध्रु० ॥
मेरु समान दोनागिरि पर्वत।
कवि के हाथ मँगावे ॥ १ ॥
ब्रम्हा बापुरो थकित भयो है।
शेष सहस मुख गावे ॥ २ ॥
मानपुरी ऐसे साहब को।
हिरदे माँहि बसावे ॥ ३ ॥

४२—पद : काफी आदिताल

वाहवा बे गुरु का प्याला।
गुरु का प्याला ॥ ध्रु० ॥
आइस खुमारी तन मन भूला।
मस्त छको मतवाला ॥ १ ॥
नासो अँधियारा भयो उजियारा।
भो भ्रम बाहेर घाला ॥ २ ॥
कहत मानपुरी अलख दरिया मों।
नहीं कोई नदी नाला ॥ ३ ॥

४३—पद : राग कल्याण इमन आदिताल

सतगुरु वाह वाह वाह वाहवा ।
सिफत करूँ क्या तेरी ।। ध्रु० ।।
औगुन भरो मंद मति मेरी ।
अजब रीझ है तेरी ।। १ ।।
जो तुम करो होयगी सोई ।
हमसे कछू न होई ।। २ ।।
कहत मानपुरी सतगुरु भेंटा ।
तन का संशय मिटा ।। ३ ।।

४४—पद : राग सोरट आदिताल

बाबा सस्ता सौदा कीन्हा ।
रोम रोम रंग भीना ।। ध्रु० ।।
जाति पाँति की कौन चलावे ।
सिर दे दरसन देना ।। १ ।।
दुविधा दूर भई अब जिय की ।
जित तित साहब चीन्हा ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु परसादे ।
सुलभ भयो अब जीना ।। ३ ।।

४५—पद : सोरट ताल झंपा

नहीं छोड़ूँ गुरु पाँय पाँय पाँय पाँय ।। ध्रु० ।।
काम क्रोध लोभ के संगे ।
जनम अकारत जाय जाय जाय ।। १ ।।
झूठी काया, झूठी माया ।
मगन भयो गुण गाय गाय गाय ।। २ ।।
मानपुरी आनंदे डोले ।
सहज मिले प्रभु आय आय आय ।। ३ ।।

४६—पद : आदि राग ढोला ताल

पायो परसाद पावन भई री।
दीनानाथ दया करी मोको हरि रंग रई।
ताते जनम मरन चौरासी मिथ्या जानि लई।
जो जो दीसे सो सो परसन ब्रह्मरूप सबई।
आगम अपार अगोचर स्वामी ताते लगन ठई।
कहत मानपुरी गुरु परसादे जहु की राह मिलई।

४७—पद : तोडि आदिताल

आजु को आनन्द मो पै कह्यो न जाय।
कह्यो न जाय ह्यो लह्यो न जाय ॥ ध्रु० ॥
सन्त दयाल दया करि भेंटे।
जनम जनम के सब दुख मेटे ॥ १ ॥
गंगाजल सो चरन पखारो।
ले चरणोदक जान सवारो ॥ २ ॥
भाव - भेट लै सम्मुख ठाढ़ो।
ठोकि पीटि प्रेम सुख बाढ़ो ॥ ३ ॥
कहत मानपुरी कछु न सुहाय।
परसन भये गुरु के पाँय ॥ ४ ॥

४८—पद : राग केदार ताल

सतगुरु दयाल भयो। जित तित नन्दलाल भयो।
तन मन खुसाल भयो। पायो विस्राम है ॥ध्रु०॥
द्वैत भाव जान दयो। एक एक मान लियो।
मान गुमान गयो। इत उत सब राम है ॥१॥
मो भ्रम भागि गयो। चरनन चित लागि गयो।
जो जो कछु दृष्टि परे। सो सो हरिनाम है ॥२॥
मानपुरी प्रगट कहे। हृदय कु कथरा।
सब कहाँ करि हो पथरा। पूजी मथुरा में शाम है ॥३॥

४९—पद : राग सारंग बिंद्राबनी आदिताल

गुरु दयाल भयो तो निहाल भयो।
हाँ जी देखि लियो प्रभु को पल में ॥ध्रु०॥
हम प्रभु सो प्रगटे प्रभु मार हैं।
जैसे भितरे जल में ॥१॥
यों कल को अब जान लियो।
सब दीसत पोकल पोकल में ॥२॥
मानपुरी प्रभु बलि को कुल कीजे।
सबै कुल को कुल गोकुल में ॥३॥

५०—पद : श्री ताल रूपक

औगुन को भरो। तेरो चरनन सो तेरा।
अब साधु संग धरो। तेरो प्रेम रस चाखि के ॥ध्रु०॥
भयो दीन दयाल दास। कियो है निहाल।
काटे भव के जंजाल बनि। बोले बचन भाखि के ॥१॥
मेरे तो एकै बोल। देखो सब ब्रह्म मोल।
रचे है त्रिबिध खेल। देहो कहाँ नाखिये ॥२॥
मानपुरी ऊँच नीचे। तेरी तो अजब रीझ।
लेहे सरनन राखि के ॥३॥

५१—पद : आदिताल आसा

निहाल भयो रे।
सतगुरु नाथ दयाल भयो रे ॥ध्रु०॥
गुरु साहब ने करि बंधिस।
जब से न्यारे नहीं जगदीस ॥१॥
जनम मरन को भो भय दूर।
सब घट सांई है भरपूर ॥२॥
कहत मानपुरी गुरु अगाध।
गुरु की महिमा जानत साध ॥३॥

५२—पद : रामकाली आदिताल

नमो नमो दीन दयाल ।
तीन लोक प्रतिपाल ।।धृ०।।
कामी क्रोध कुटिल कुबुद्धि ।
क्षण मो करत निहाल ।।१।।
अन्तर बाहेर ग्यान प्रकाशो ।
नासो भव-भ्रम-जाल ।।२।।
मानपुरी सतगुरु परसादे ।
निसिदिन रहत खुशाल ।।३।।

५३—पद : सारंग राग आदिताल दरबारी

जिनकी कीरति जग में जागे ।
जुग जुग जगत में ते नर जागे ।।धृ०।।
जनम मरन को मारग त्यागे ।
गुरू से जाय अमर पद माँगे ।।१।।
करि करि भगति अमर भयो प्राणी ।
फेरि फेरि गुरू के पग लागे ।।२।।
मानपुरी कहे गुरु की महिमा ।
गुरु परसाद सकल भय भागे ।।३।।

५४—पद : राग कल्यान वमन आदिताल

भयो मन सतगुरु बंदा ।
छोड़ दिया घर धन्दा ।।धृ०।।
गुरु परसाद साधु की संगति ।
साधु कियो गंदा गंदा ।।१।।
अब तू मुकत फिरे चहुँ दिसा ।
छूट गयो भव फंदा फंदा ।।२।।
कहत मानपुरी बिन गुरु प्राणी ।
जलमही को अंधा ।।३।।

५५—पद : राग बिरावर आड़ताल

भयो मन दुनिया से बेजार।
कोई नहिं मानत हार ॥धृ०॥
सांची कहत तुफान लगावत।
का कीजे करतार ॥१॥
अपने अगुन नाहिं बिचारत।
और के तकत बिकार ॥२॥
कहत मानपुरी सतगुरु पायो।
सुफल भयो संसार ॥३॥

५६—पद : सोरट ताल झंपा

जातो है रे कित कित।
का देख भूला इत इत ॥धृ०॥
तू है कौन कहाँ सो आयो।
नाहीं बिचारे चित चित ॥१॥
जो दिसे सो सब ही सपना।
सांच को मानौ नित नित ॥२॥
कहत मानपुरी सो नर छूटे।
गुरु भगति सो हित हित ॥३॥

५७—पद : सोरट ताल झंपा

अनुभव की बात कहु कहु।
परात्पर सुख लहु लहु ॥धृ०॥
नाहीं वार पार गुन औगुन।
प्रेम मगन होय रहु रहु ॥१॥
रूप अरूप सदा निर्मल हैं।
देह कल्पना दहु दहु ॥२॥
कहत मानपुरी एक भाव सो।
चरण गुरु के गहु गहु ॥३॥

५८—पद : राग मारू आड़िताल

तुके मेरे दोखक छूटे तो मुझे दान दीजो ।।धु०।।

जो करि जोरि दिन होय भाखु ।
बिनती सुनो दे कान दीजो ।। १ ।।

नेक नजरि भरि मो तन हेरो ।
पाउ पद निर्वान दीजो ।। २ ।।

मानपुरी मस्तान के राखो ।
चरनन पास मुकाम दीजो ।। ३ ।।

५६—पद : घनाश्री ताल बिलंदी

ग्यान तूती बनि बनि बोले तुहि तुहि ।
घट घट मों आप जपे सुहि सुहि ।। धु० ।।

समजे ना मूढ जन माया बस भयो मन ।
जाय गमो नहि राम कहि कहि ।। १ ।।

मनो मो जो सुध होय सबद भेद जाने सोय ।
सब सो अग्यान बाबा महि महि ।। २ ।।

मानपुरी कहे सब दिसे सो ब्रह्म ।
सतगुरु बिन मोक्ष मुकति नहि नहि ।।३।।

६०—पद : राग आडानी ताल बिलंदी

तू तो पूरण पावन होसी ।
पतित पना क्यों सोसी ।। धु० ।।

ब्रह्मा विदेह देह के संगे ।
आप कहावत दासी ।। १ ।।

आदि अंत की सुध बिसराई ।
उदर निरंतर पोसी ।। २ ।।

कहत मानपुरी गुरु किरपा बिन ।
जनम मरण दुख रासी ।। ३ ।।

६१—पद : राग [illegible] आदिताल

मेरे तुम बिन और न कोई ।
तुम बिन काज न होई ॥ ध्रु० ॥
जे नर तुम्हारी बात न बूझे ।
भा नाहक उमर खोई ॥ १ ॥
तुम बिन जिय को दरद न जावे ।
भर भर असुंवन रोई ॥ २ ॥
मानपुरी अंतर का जाने ।
पूर्ण सतगुरु सोई ॥ ३ ॥

६२—पद : चाल कानड़ा नायकी, ताल रूपक

उसको कोउ न माने ।
गुण अवगुण जो जाने ॥ ध्रु० ॥
कोई पूर्व कोई पश्चिम जावे ।
सूधो पथ भुलानो ॥ १ ॥
भटकत फिरत गैर नहीं पावे ।
मन मूरख ग्यान बखाने ॥ २ ॥
मानपुरी कहे बिन गुरु प्राणी ।
क्यों कर होत शाहाने ॥ ३ ॥

६३—पद : राग काफी आदिताल

घर घर नाच नचावे ।
येक बिलस्ती पेट ॥ ध्रु० ॥
जे जन पेट कारणे गावे ।
नाहीं ब्रह्म सो भेंट ॥ १ ॥
सब घट एक ब्रह्म नहीं जाने ।
ते नरक सभी पेट ॥ २ ॥
मानपुरी नेह काम होय के ।
गुरु चरन पर लेट ॥ ३ ॥

६४—पद : सोरठ

प्रभु जी तुम तरवर, हम पंछी।
सहज अमृत फल भच्छी ।। धु० ।।

तुम चन्द्र हम चकोर भये हैं।
तुम सरोवर हम मच्छी ।। १ ।।

आतम ग्यान जहाँ तहाँ पूरण।
बस्त अगोचर लच्छी ।। २ ।।

कहत मानपुरी बात गुरु की।
सुनि सूझी लागत अच्छी ।। ३ ।।

६५—पद : देव गंधार आदिताल

प्रभु मोरी आसा हरि लई हो।
जीवन-मुकति दई हो ।। धृ० ।।

आस पास अरु अन्तर बाहेर।
आनन्द भर गई हो ।। १ ।।

एक अनेक अलेख जहाँ तहाँ।
देखत बनि गई हो ।। २ ।।

कहत मानपुरी गुरु परसादे।
भ्रांति तो तरि गई हो ।। ३ ।।

६६—पद : राग-ललीत आदिताल

बोल सुनि सुनि भयो मतवारो रे ।।धु०।।

ग्यान प्रकाश भयो अब देही।
देखा सब पसारो रे ।। १ ।।

जग जगदीश बराबर दीसे।
अब मन थिर हमारो रे ।। २ ।।

मानपुरी कहे सतगुरु स्वामी।
अब जीवन मोही बिसारो रे ।। ३ ।।

६७—पद : राग-रासा आदिताल

पानी में मीन प्यासी।
सुनत सुनत आवै हाँसी ।। ध्रु० ।।
सुखसागर सब ठौर बिराजे।
ढूंडत फिरत उदासी ।। १ ।।
आत्मज्ञान बिना जे नर भटके।
कोई मथुरा कोई कासी ।। २ ।
कहत मानपुरी गुरु परसादे।
नजर परो अविनासी ।। ३ ।।

६८—पद : आसा आदिताल

ग्यान अमल मन माता वे।
माता माता माता वे ।। ध्रु० ।।
गुरु साहब ने प्याला पिलाया।
साईं के रंग राता वे ।। १ ।।
जनम मरन चौरासी चुकी।
भेंटो सतगुरु दाता वे ।। २ ।।
मानपुरी मतवाला हुआ।
निर्गुन के गुन गाता वे ।। ३ ।।

६९—पद : धनाश्री आदिताल

कृपा करी दीनानाथ।
समज गुरु की बात ।। ध्रु० ।।
भव सिंधु मो डूबत तारे।
खेंच लियो धरि हात ।। १ ।।
जोग जग्य जप तप नाहीं।
कीनो पतित सनाथ ।। २ ।।
मानपुरी आनंदे डोले।
मगन कियो तुमरे साथ ।। ३ ।।

७०—पद : राग सारंग आदिताल

पूछे सो सीख न पूछे सो गुरु ।
दो में एक गहो रे साधो ॥ धृ० ॥
जो पूछे तो यह बिध पूछो ।
मैं अज्ञान कहारे साधो ॥ १ ॥
सतगुरु कहे साइं सुन लीजो ।
जी को भेद कहो रे साधो ॥ २ ॥
मानपुरी कहे तो तुम ऊँचे ।
नीचे होय रहो रे साधो ॥ ३ ॥

७१—पद : राग झिंजोटी आदिताल

साँई हरदम ज्यागो ।
ज्या गुरु के पद लाग्यो ॥ धृ० ॥
ऐसो ज्यागो सुख दुःख त्यागो ।
ग्यान गर्भ सो भागो ॥ १ ॥
जो ज्यागो सो दरसन पायो ।
जो सोवे सो अभागी रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी दियो है टटोरा ।
जो ज्यागो सो ज्यागो रे ॥ ३ ॥

७२—पद : राग काफी

शरण आये की लाजे गुरु ।
तू कु निभावे बनेनी ॥ धृ० ॥
कामी क्रोधी पतित उधारे ।
कीजे सब को काज ॥ १ ॥
दीनानाथ अनाथ के स्वामी ।
भगत बछल महाराज ॥ २ ॥
भवसागर में डूबत तारे ।
आय चलियो गजराज ॥ ३ ॥
मानपुरी गुन कहाँ लग बरनूं ।
सांचे गरीब निवाज ॥ ४ ॥

७३—पद : राग-गावरी आदिताल

दान रे सतगुरु सो मांगो ।
दान रे सतगुरु सो मांगो ।। ध्रु० ।।
दान मांगो भव भ्रम त्यागो ।
बार बार चरनन सो लागो ।।१।।
ग्यान ध्यान जलम सम्हारो ।
दुःख त्यजो सुख सो नित ज्यागो ।।२।।
कहत मानपुरी यह जग माहीं ।
भक्ति करे बड़े भागी ।। ३ ।।

७४—पद : विलास-खाल सुर फाकता

ढोल बजाय कहो सब सो ।
बाबा बेगि गहो पग आ गुरु का ।।ध्रु०।।
साईं करो जु गुरु ही के ।
मत कोउ करो बरजा गुरु का ।।१ ।।
सोवत सो उठि जागो भया ।
यहाँ काम भयो जा गुरु का ।। २ ।।
कहत मानपुरी ऐसी चाल चले ।
तब दरसन होय गिरिजा गुरु का ।। ३।।

७५—पद : ललीत आदिताल

हर हर जाप ।
हर हर आपहि आप ।। ध्रु० ।।
छूटी पाप पुण्य की आसा ।
अब आई अनुताप ।। १ ।।
क्रिया करम नेम धरि राख्यो ।
जो बालक बिन बाप ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु शरणायो ।
पाछे वहे बैरी जप जाप ।। ३ ।।

अक्षर बीज

७६—पद : राग श्री सूर फाकता

ॐ नम सिध अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ॥ ध्रु० ॥
ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ च छ ज झ य ट ठ ड ढ ण ॥ १ ॥
त थ द ध न प फ ब भ म, य र ल व श ष ह ळ क्ष ॥ २ ।
कहत मानपुरी पावन अक्षर कु जानत सक्षर ॥ ३ ॥

७७—पद

अलिफ कहे आदि अंत को मूल ।
जा कारण सुक्षम आग ।
एक अलफ बिन और कछू नहीं ।
सब जग अलफ अलफ ही मांही ।

७८—पद : बिहागड़ा अड़ताल

अब मै अक्षर एक पढ़ो है ।
प्रभु मन माहि गड़ो है ॥ ध्रु० ॥
नियरे दूर कहुँ नहीं जावे ।
सन्मुख सदा खड़ो है ॥ १ ॥
नाहि रूप सरूप सहज है ।
अद्भुत ख्याल लड़ो है ॥ २ ॥
कहत मानपुरी दुख सुख भूला ।
ग्यान को अमल चढ़ो है ॥ ३ ॥

७९—पद : राग बिलावल ताल दीपचंदी

साहेब गुरु के चरन मान ।
सब से कीजे अलह सलाम ॥ ध्रु० ॥
तजिये लोक लाजनि दुरायी ।
तब पैये पूरन निजधाम ॥ १ ॥
होय निहकाम प्रेम रस पीजिये ।
जहाँ तहाँ कीजिये दरस तमाम ॥ २ ॥
कहत मानपुरी तन सुख पावे ।
जब दुनिया को होत गुलाम ॥ ३ ॥

८०—पद : राग धनाश्री आदिताल

प्राणिया तू कौन है रे यह जान ।
हिन्दु मुसलमान ।। ध्रु० ।।
कोन सो देव कोन सी पूजा ।
कोन सो आत्म ग्यान ।। १ ।।
नाद बिंद की आदि बिचारे ।
सो न चतुर सुजान ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु रूप नाम बिन ।
सब घट सदा है समान ।। ३ ।।

८१—पद : बंकावली आदिताल

मोहि मियाँ देखि दीदार ।
मोहि मियाँ मोहि मियाँ मोहि मियाँ ।।ध्रु०।।
कोटि भानु सूरती वारो ।
मनमोहन मतवार ।। १ ।।
वार पार सब आपहि साईं ।
घट घट प्राण अधार ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु हर दम नहीं भूले ।
जिकिर करो यार यार ।। ३ ।।

८२—पद : बिरावर आदिताल

यक भाव सो रीझे राम ।
सब से कीजे अलह सलाम ।। ध्रु० ।।
तजिय लोक लाज चतुराई ।
तब पाये पूर्ण निज धाम ।। १ ।।
होय निहकाम प्रेम रस पीजे ।
जहाँ कीजे तहँ दरस तमाम ।। २ ।।
कहत मानपुरी तब सुख पावे ।
जब दुनिया को होय गुलाम ।। ३ ।।

रामभक्ति के पद

८३—पद : राग-प्रभात

भज मन राम ही राम ।
और छोड़ सब काम ॥
भोर भयो तू अब का सोवे ।
ले सतगुरु को नाम ।
बिन हरि भगति सकल जग धंधा ।
कौन काम यह नाम ॥
मानपुरी प्रभु के गुण गावे ।
पावोगे निज धाम ॥

८४—पद : सोरठ आदिताल

राम प्यारे लागो लागो रे पैंयां ॥ ध्रु० ॥
भगत विचारे पार उतारे ।
हम नहिं तुम सो न्यारे रे सैंया ॥ १ ॥
जगत उजारे नेह लगारे ।
अधम मगन करि डारे रे सैंया ॥ २ ॥
मानपुरी धारे वस्य भवा रे ।
गुण गावत जन हारे रे सैंया ॥ ३ ॥

८५—पद : गौड़ सारंग आदिताल

साधो गाइये रिझाइये वे राम को ॥ध्रु०॥
छिन छिन यो तन छीन होत है ।
बिलम न कीजे इस काम को ॥ १ ॥
सुख दुख सो न्यारे होय रहिये ।
तब पाइये निज धाम को ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु पतितन तारे ।
गाय रहिये हरि नाम को ॥ ३ ॥

८६—पद : राग कानड़ा ताल तिलंदी

राम राम गाया तबहि आनन्द पाया ।
बार बार यहि सार सतगुरु बतलाया ॥ध्रु०॥

साधु संग अंग अंग मोरे मन भाया ।
आपहिं मो आप स्वरूप आपहि समाया ॥१॥

खलख था सो अलख भया ।
निहचा जब आया ॥ २ ॥

ग्यान ध्यान तान मन्त्र कर्म धर्म काया ।
मानपुरी वार पार ब्रह्म रूप छाया ॥ ३ ॥

८७—पद : राग गौड़ सारंग आदिताल

भज मन निसिदिन सीताराम ॥ ध्रु० ॥

प्रेम मगन हुये निज गुन गावे ।
तिंन पायो आराम ॥ १ ॥

सुगम उपाव महा सुखदायी ।
कलि जग तारन नाम ॥ २ ॥

मानपुरी हरि नाम गायके ।
हो हिये निस्काम ॥ ३ ॥

८८—पद : गौड़ सारंग आदिताल

अब तुम राम सुमिरन को रे ।
राम सुमिरन के को रे ॥ ध्रु० ॥

यहाँ तू आयो कोन काज कू ।
वहाँ तू कोन हतो रे ॥ १ ॥

सपनो सो संसार दिखावे ।
तेरो कोन सगो रे ॥ २ ॥

कहे मानपुरी तीनों पन बीते ।
केस भये अब धोरे ॥ ३ ॥

८९—पद : विभास सूर फाकता

आवे मन राम पियारा।
राम पियारा सबसे न्यारा ॥ ध्रु० ॥
अंतर बाहेर राम निरंतर।
जानत है कोहि जानन हारा ॥ १ ॥
राम गुसाइँ सब घट माहीं।
राम रूप को वार न पारा ॥ २ ॥
मानपुरी जब देखत जब तब।
रामहि राम सकल संसारा ॥ ३ ॥

९०—पद : अलेहैया आदिताल

राम राजा राजीव लोचन।
सुख दुख मोभ्रम मोचना ॥ ध्रु० ॥
सुन्दर रूप स्वरूप बिराजे।
अब कहाँ को सोचना ॥ १ ॥
गई सो गई अब राख रही को।
अब आपमों तोषना ॥ २ ॥
मानपुरी मन को समझावे।
नाम धनी को घोकना ॥ ३ ॥

९१—पद : राग रासा आदिताल

राम राजा हमारे मन भायो।
सतगुरु अलख लखाया ॥ ध्रु० ॥
नजर सो और होत नहीं कबहुँ।
सब घट आप समाया ॥ १ ॥
जप तप करि सकल जन थाके।
गुरू बिन पार न पाया रे ॥ २ ॥
मानपुरी आनंदे डोले।
ध्यान अखंड लगाया रे ॥ ३ ॥

६२—पद : सारंग गौड़ आदिताल

अब मोहे लागे राम पियारा।
लागे राम पियारा ।। ध्रु० ।।

बिन हरि भगति सकल जग धंदा।
देखा झूट पसारा ।। १ ।।

जे गुनवंत ते धनवंत।
जिन हरि नाम बिसारा ।। २ ।।

कहत मानपुरी सतगुरु भेंटा।
शुद्ध पंथ हमारा ।। ३ ।।

६३—पद : राग गौड़ सारंग आदिताल

अब मो है लाग्यो राम पियारा ।। ध्रु० ।।

बिन हरि भजन सकल जग धंदा।
देखा झूट पसारा ।। १ ।।

जे गुन गावते ते धन आवते।
जिन हरि नाम बिसारा ।। २ ।।

कहत मानपुरी सतगुरु बेटा।
सूधो पंथ हमारा, ।। ३ ।।

६४—पद : ललित आदिताल

इत उत राम रहा भरपूर।
नाहि निकट नहिं दूर ।। ध्रु० ।।

नाहि उदो अस्त दिन राती।
नहिं चंदा नहिं सूर ।। १ ।।

जब देखो तब प्रगट दिसे।
घट घट हाल हुजूर ।। २ ।।

मानपुरी साईं अंतरजामी।
नाहि चतुर नहिं क्रूर ।। ३ ।।

९५—पद : जैवंति आदिताल

राम राम आगे राम पीछे ।
राम की सो राम है ॥ धु० ॥
राम रूप सोई देखे ।
जाके हृदय राम है ॥ १ ॥
भज मन राम राम ।
जासो आखरी काम है ॥ २ ॥
मानपुरी आदि अंत ।
यही पूर्ण धाम है ॥ ३ ॥

९६—पद : राग गौरी अड़ताल

राम मैं झूटा तू साँचा रे ।
तुहि तुहि बोलत वाचा रे ॥ धु० ॥
तेरो पार न पावे कोई ।
बिन सतगुरु मत काचा रे ॥ १ ॥
भली करी मी पण हरि लीनो ।
तुव दरसन हग माचा रे ॥ २ ॥
मानपुरी कुछ कहत न आवे ।
जो कीनो सो आछा रे ॥ ३ ॥

९७—पद : आडानी ताल बिलंदी

जी राम देखा रूप न रेखा ।
कौन करे लेखा ॥ धु० ॥
जाको पार कोई नहीं पावे ।
बहुरूपी बहु भेखा ॥ १ ॥
गुरु परसाद साधु की संगति ।
खत फाटा झगरै का ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु बनी बनी आवे ।
कहु ब्राह्मण कहु शेखा ॥ ३ ॥

९८—पद : यमन कल्यान रूपक ताल

अंतर बाहेर राम बिराजे।
अनहद धुनि नौबत बाजे ॥ धृ० ॥
वार पार पार निरंजन।
अस्तुत करत सहज सुख लाजे ॥ १ ॥
रूप निरख अलख अमूरत।
जाको सत्ता घट घट मों जागे ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु आनन्द सिंधु।
जन, मन, धन सब आपहि छाजे ॥ ३ ॥

९९—पद : परज आदिताल

बिराजत रोम रोम में राम।
जाके रूप न नाम ॥ धृ० ॥
जिहि पखान सागर मों तारे।
तिहि कु भज तू नाम ॥ १ ॥
ध्रुव प्रह्लाद भजन कर जाके।
पायो अति विसराम ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु चेरो तेरो।
हित चित सो बिन दाम ॥ ३ ॥

१००—पद : राग सोरट आदिताल

व्यापक श्री राम घट घट घट।
छोड़ तू दे कट कट कट ॥ धृ० ॥
भिन्न न होवे पट पट पट ॥ १ ॥
आपको आप विचारत बावरे।
काहे को करतरे खट खट खट ॥ २ ॥
कहत मानपुरी एक छोड़िके।
और न वाचा रट रट रट ॥ ३ ॥

१०१—पद : सोरठ आदिताल

साधो राम के दरसन सब माँही।
सब में सब सब माँहीं ॥ ध्रु० ॥
आप को आप जुदा करि मानों।
जो दरपन मों परछाई ॥ १ ॥
भटकत फिरे अन्त नहीं पावे।
गुरु बिन दिन निर्फल जाई ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु अंतर बाहेर।
का कीजे समझे नाहीं ॥ ३ ॥

१०२—पद : कलिंगड़ा आदिताल

राम रंगीला अवगत लीला।
राम रंगीला अवगत लीला ॥ ध्रु० ॥
जो तन मन के बीच बिराजे।
नहीं काला नहीं पीला ॥ १ ॥
एक अनेक और नहीं दूजा।
नहीं कोई कुटुम्ब कबीला ॥ २ ॥
मानपुरी साईं अंतर बाहेर।
भगवत रसिक रसीला ॥ ३ ॥

हरि-स्मरण

१०३—पद : बंकाघली आदिताल

हरि बोलो अंखियाँ खोलो।
करि करि दरसन डोलो ॥ ध्रु० ॥
ग्यान गुरू को सोई पावै।
जो कोई होवे भोलो ॥ १ ॥
जिन देखो तित रूप साईं का।
संपूर्ण नहीं पोलो ॥ २ ॥
मानपुरी साईं बिसरत नाहीं।
जीवहि माही जोलो ॥ ३ ॥

१०४—पद : राग बङ्गाला अड़ताल

हरि के गुण गावो गावो रे।
रिझावो रिझावो रे ॥ धु० ॥
एक छोड़ जिन दूजा धावो।
घट घट अलख जगावो रे ॥ १ ॥
करहुँ भगति अरु प्रेम बढ़ावो।
बहुरि जनम नहीं आवो रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी तो तुम पावो।
गुरुचरन चित लावो रे ॥ ३ ॥

१०५—पद : आसा आदिताल

मो हरि रूप जहाँ तहाँ देखा।
गुरु मुख ग्यान परेखा ॥ धु० ॥
हो जाने कहुँ दूर बसत है।
बहु रङ्ग बहु भेका ॥ १ ॥
सुन्दर रूप अरूप बिराजे।
इत उत नाहीं लेखा ॥ २ ॥
मानपुरी परसाद गुरू के।
खत फाटो झगरे का ॥ ३ ॥

१०६—पद : राग कानड़ा नायकी आदिताल

हरि तुम आछे आतम ग्यानी ॥ धु० ॥
नेह नवो कुबजा सो कीनो।
तोरी प्रीत पुरानी ॥ १ ॥
तुम बिन जीव ऐसो तलफत है।
जैसो मीन बिन पानी ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु तुम सुखी रहियो।
हम तुम हात बिकानी ॥ ३ ॥

१०७—पद : आसा आदिताल

हरि आगे हरि पीछे हरि हरि ।
अंतर बाहेर जाना वे ।। ध्रु० ।।
जनम जनम की भ्रांति नासी ।
जिय से जिय पछाना वे ।। १ ।।
गर्क हुआ कछु रहे न बाकी ।
वार पार भगवाना वे ।। २ ।।
कहत मानपुरी ग्यान अमल सो ।
बिरला नर मस्ताना वे ।। ३ ।।

१०८—पद : परज आदि

हरि को धूंडत फिरत हरि ।
साधु संगति न करी ।। ध्रु० ।।
सुत न जाने रूदु कहा है ।
कैसी भ्रांत परी ।। १ ।।
बहुत अचंबो बाटे तमो मन ।
पल घरि घरि ।। २ ।।
मानपुरी कहिबे की नहिं कछु ।
कुवा भाँगरी ।। ३ ।।

१०९—पद : राग सारंग

हरि नैन मों नूर भरा ।
गुरुमुख ज्यानी परा ।। ध्रु० ।।
अगम अपार जहाँ तहाँ देखा ।
पूरण ब्रह्म खरा ।। १ ।।
जनम मरण चौरयासी चूका ।
अब सो संग करा ।। २ ।।
मानपुरी कछु कहा न आवे ।
सुख दुःख सब बिसरा ।। ३ ।।

११०—पद : काफी आदिताल

हरि की छबि निरखत ।
बिय का धोखा भागा ॥ ध्रु० ॥

जहाँ तहाँ देखो जब तब ताको ।
कहुँ नहीं खाली जागा ॥ १ ॥

अब कोउ दो ज्यान नजरि न आवे ।
ध्यान धनी सो लागा ॥ २ ॥

कहत मानपुरी मगन भयो अब ।
ग्यान गुरू सो लागा ॥ ३ ॥

१११—पद : राग बिलावल आदिताल

हरि की छबि मो मन भाई हो ।
अब हौं करी सगाई हो ॥ ध्रु० ॥

पावन पतित श्रीपति देखे ।
भजगत मगन मिठाई हो ॥ १ ॥

दुःख गने सब जनम जनम के ।
भेटे रघुपति राई हो ॥ २ ॥

कहत मानपुरी भाग्य जगे अब ।
सतगुरु सहज बताई हो ॥ ३ ॥

११२—पद : बिरावर आदिताल

हो हरि जू के हात बिकानी ।
लोक कहे यह भई है दिवानी ॥ ध्रु० ॥

अब मेरो मन समझत नाहीं ।
मोहन मूरत देखि भुलानी ॥ १ ॥

लागी लगन सब लाज गँवाई ।
मन मानो अब दधि को दानी ॥ २ ॥

मानपुरी जब तान सुनाई ।
तबहि से ऐसी मति ठानी ॥ ३ ॥

११३—पद : राग कॉफी आदिताल

हरि के दास कहावत ।
मन में कोट की आस ।। धृ० ।।
राम नाम को परगट बेचे ।
करत भगति को नास ।। १ ।।
माया मोह लोभ नही छूटे ।
चाहत प्रेम प्रकाश ।। २ ।।
कहत मानपुरी तो प्रभु रीझे ।
जो मन होत निरास ।। ३ ।।

११४—पद : रामकाली ताल बिलंदी

हरि छबि माई मो मन भाई ।
जब देखो तब चहु दिस छावी ।। धृ० ।।
अब हौं हरि सो करी सगाई ।
निसदिन अनहद बजत बधाई ।। १ ।।
अंतर बाहेर कुँवर कन्हाई ।
का हरि कहो कछु कहो न जाई ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु हैं सुखदाई ।
ताते प्रेम मगन होइ जाई ।। ३ ।।

११५—पद : बिलावल

हरि मेरे मन माहीं ।
हरि भूक प्यास बिसरी ।। धृ० ।।
जागत सोवत पलख न भूले ।
सुमरन घरी घरी ।। १ ।।
लागी लगन अब नहीं छूटे ।
प्रेम की फाँसि परी ।। २ ।।
कहत मानपुरी भक्ति बिरहिनी ।
बनत रंग - भरी ।। ३ ।।

११६—पद : सारंग आदिताल

हरि की छबि मो मन भाई हो।
अब कहोरी सगाई हो ॥ धृ० ॥
पावन पतित श्रीपति देखे।
आवागमन मिठाई हो ॥ १ ॥
दुःख गये सब जनम जनम के।
भेंटे रघुपति राई हो ॥ २ ॥
कहत मानपुरी भाग्य जगी अब।
सतगुरु सेज बताई हो ॥ ३ ॥

११७—पद : मालश्री आदिताल

हरि कछु दीसत है भगवान।
दीसत है भगवान ॥ धृ० ॥
मुख बिन सतगुरु जो बोला।
सुनि लेनो बिन काना ॥ १ ॥
द्रिष्टी पड़ी अन्तर की जित तित।
किन सो जानी पछाना ॥ २ ॥
कहत मानपुरी सब को दीसे।
अजर अमर निरबाना ॥ ३ ॥

११८—पद : राग मालश्री आदिताल

हरि कोऊ दीसत है अपना।
दीसत है अपना ॥ धृ० ॥
मनहि मो मन पायो।
कै कै कर जतना ॥ १ ॥
जित तित सब प्रभु दीसन लागे।
अजपा जप जपना ॥ २ ॥
मानपुरी कछु कहत न आवे।
गूंगे को सपना ॥ ३ ॥

११६—पद : राग मालश्री आदिताल

हरि ही दिसत है हरि और ॥ ध्रु० ॥
अरध उरध अरु मध्ये हरिहर।
दूजा नाहि न और ॥ १ ॥
येक बिना कछु नजर न आवत।
सोई साहु सो ही चोर ॥ २ ॥
कहत मानपुरी अकथ कहानी।
प्रगटि रही हर ठौर ॥ ३ ॥

१२०—पद : राग बंकावली आदिताल

जहाँ तहाँ हरि रूप देखा।
गुरु मुख ग्यान परेखा ॥ ध्रु० ॥
न्होक्या ने कहु दुरवत है।
बहु रंगी बहुभेखा ॥ १ ॥
सुन्दर रूप अरूप बिराजे।
इत उत नाही भलेखा ॥ २ ॥
मानपुरी परसाद गुरू के।
खत फाटो झगरे का ॥ ३ ॥

१२१—पद : आड़ाना आदिताल

हरि जू की मूरत बिसरत नाहीं।
रमि रही नैनन माँही ॥ ध्रु० ॥
जब देखो तब सहज सलोनी।
भेंटत भरि भरि बाँही ॥ १ ॥
दूर करो तो दूर न जावे।
अपने तन की छाँही ॥ २ ॥
पल भरि जिय सु जुदह न होवे।
मानपुरी को साईं ॥ ३ ॥

१२२—पद : शाम कल्याण यमन ताल रूपक

नहिर गंभीर हरि को सहर ।
आनन्द आठों पहर ।। धु० ।।
हिर बिन ऊँच नीच नहिं कोई ।
नाहिं न अमृत जहर ।। १ ।।
आपहि आप सदा सुख सागर ।
लखे चौरासी लहर ।। २ ।।
मानपुरी हरि संग माँहि ।
रहा तन मन ठहर ।। ३ ।।

१२३—पद : विभास आदिताल

ध्यावो हरि अंतर जामी ।
अंतर जामी सब का स्वामी ।। धृ० ।।
खलक नचावे नजर न आवै ।
घट घट जागे अलख अनामी ।। १ ।।
आप अकेला बहुविध खेला ।
करि करि काम अपनी हकामी ।। २ ।।
मानपुरी गावे सो नर पावे ।
जो सतगुरु करित गुलामी ।। ३ ।।

कृष्णभक्ति के पद

१२४—पद : खट-आदिताल

साँवरी सुरति नैन विसाला ।
जिधर तिधर तुहि नन्दलाल ।। धृ० ।।
कान कुण्डल भाल तिलक दियो ।
उर सोभे तुलसी की माल ।। १ ।।
अब कोई नजर और नहि आवे ।
मोरे मन मानी जैसी बाल ।। २ ।।
मानपुरी को मन हर लीनो ।
जहँ तहँ दिसे कान्ह गुलाम ।। ३ ।।

१२५—पद : रामकली चिलंदी ताल

सैंया तेरी सूरत पर बलिहारी।
अब है सब रूप साई का प्यारी ॥धृ०॥
पल भरि पिया सो होत न न्यारी।
तन मन जोबन वारी ॥ १ ॥
मन मोहन छबि जब सो निरखी।
सुधि बुधि भूली नारी ॥ २ ॥
निसदिन चित सो टरत न टारी।
बिसरत नाहीं बिसारी ॥ ३ ॥
मानपुरी प्रभु अगम अमूरत।
गुन गावत अब हारी ॥ ४ ॥

१२६—पद : यमन कल्याण आदिताल

मनमोहन प्यारे गावो।
ताल मृदुंगा बजावो ॥ धृ० ॥
राग रागिनी ही हौं नहीं जानों।
रस की तान सुनावो ॥ १ ॥
आस निरास न कीजे प्यारे।
आजी मोरे घर आयो ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु वन मन वारो।
प्याला प्रेम पिलावो ॥ ३ ॥

१२७—पद : सोरट

तुम गावोरे मोहन बंसीवाले।
कमलनैन मतवाले ॥ धृ० ॥
अगम अगोचर तान सुनाई।
अनगन जन प्रीती वाला ॥ १ ॥
शामसुन्दर छबि चहुँ दिस छाही।
दरसन दे घर घाले ॥ २ ॥
कहत मानपुरी सुनी सुनावे।
ते नर सब बस आले ॥ ३ ॥

१२८—पद : सोरठ आदितालं

मोहन बंसीवाला हो।
दीन दयाला हो ॥ ध्रु० ॥
जब देखा तब सब घट माँही।
पूरि रहो नंदलाला हो ॥ १ ॥
ब्रिदाबन मो रहस रचौ है।
संग राधिका बाला ॥ २ ॥
आपही गावे आप बजावे।
आपही होत खुशाला ॥ ३ ॥
अगम अपार स्वरूप विराजे।
चितवन मो घर घाला ॥ ४ ॥
मानपुरी प्रभु बनि बनि आवे।
भगतन को प्रतिपाला ॥ ५ ॥

१२६—पद : राग-तोड़ी ताल-बिलंदी

अली री भावे बंसीवाला।
ब्रजवासी नंदलाला ॥ ध्रु० ॥
मोर मुकुट पीताम्बर ओढ़े।
उर सोभ बनमाला ॥ १ ॥
गोकुल पालक तन मन चालक।
करि करि करम निराला ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु मन हरिलीनो।
मोहन मदन गुपाला ॥ ३ ॥

१३०—पद : कॉफी ताल बिलंदी

कान्हा आवे गावे रसीला ख्याल।
सुनी सुनी आवे हाल ॥ ध्रु० ॥
मोर मुगुट कर में जयमाल।
तिलक विराजे भाल ॥ १ ॥
पिताम्बर की धोती पहिरै।
तापर ओढ़े शाल ॥ २ ॥

मानपुरी प्रभु मदन मनोहर।
जब देखो तब लाल लाल लाल ॥३॥

१३१—पद : बिंद्रावनी सारंग

गावे सारंग कान्हा।
सुनि सुनि धुनि मनमाना ॥धृ०॥
मोहनलाल मोहनी डारी।
सब संसार भुलाना ॥ १ ॥
मगन भये वृन्दावनवासी।
मदन मनोहर जाना ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु शामसुन्दर पर।
वारूं तन मन प्राना ॥ ३ ॥

१३२—पद : रामकली आड़ाताल

नन्द के नन्दन मेरो मन लीना।
गावत तान बजावत बीना ॥धृ०॥
संग सखी लिये घर घर डोले।
अबहु चोर दही को चीना ॥१॥
जब ही नजर सो नजर मिलाई।
मो तन हेरि आप हँसि दीना ॥२॥
'मानपुरी' प्रभु अगम अगोचर।
सो अब हो अपने बस कीना ॥३॥

१३३—पद : जैवंति आदिताल

कुँवर कन्हैया मोरे मन भावे।
तान रसीली गावे भाई ॥धृ०॥
मधुर मधुर सुर मुरली बजावे।
सुनि सुनि मन मुरझावे ॥ १ ॥
साहिस ते गीत भाव बतावे।
हित चित हरि ले जावे ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु रंग बरसावे।
भींजत जग सुख पावे ॥ ३ ॥

१३४—पद : इमन कल्यान झपकताल

सरस तान गाइहो सुखदाई ।
मोहन कुँवर कन्हाई ।। ध्रु० ।।

जमुना के नीर तीर मुरली बजाई ।
अनहद धुनि मन भाई ।। १ ।।

जब सो भनक परी कानन मों ।
तब सो नींद न आई ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु सेन नैनन की ।
सहजे सहज लखाई ।। ३ ।।

१३५—पद : राग कल्यान इमन अड़ताल

दीन के बंदन आनन्द कन्दन ।
नन्द के नन्द बहै सुखदाई ।।ध्रु०।।

बारी जी वारी तिहारे बिहारी जो ।
मोरे दया करी सोवत जगाई ।।१।।

मोहनलाल सदा कृपाल ।
दयाल की बात कथी नहीं जाई ।।२।।

मानपुरी सब राम दिसे ।
नहीं राम बिना कछु राम दुवाई ।।३।।

१३६—पद : सारंग गौड़ आदिताल

भई तन्मय सुनि-सुनि हो तान तान ।।ध्रु०।।

बिंद्रावन में बाँसरी बजाई ।
भनक परी मोरे कान कान ।।१।।

चौंक परी सोवत प्यारी ।
मारी बो मो बान बान ।।२।।

मानपुरी प्रभु मदन मनोहर ।
वारौं तन मन प्रान ।।३।।

१३७—पद : सारंग बिलंदी आदिताल

मोहि लियो मनमोहन ने मन।
आनि कियो द्रुम माँहि बसेरा ।।धृ०।।
जोति जगे तिहुँ लोक में जाकी।
द्रिष्टि पड़े सुख होत घनेरा ।। १ ।।
पंडित कोटि भयो पढ़ि पाथर।
मर्म न जानत है प्रभु तेरा ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु दुख जाये सबै जब।
आनि पर गुरू ग्यान को घेरा ।। ३ ।।

१३८—पद : कल्यान इमन अड़ताल

मन मोहन जानि परो रे।
जल थल भरि उबरो रे ।। धृ० ।।
लागी लगन अब कछु न सुहावे।
तन मन गृह बिसरो रे ।। १ ।।
जहाँ जहाँ देखो तहाँ तहाँ ठाड़ो।
सब घट रंग भरो रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी येका येकी।
भेदा भेद हरो रे ।। ३ ।।

१३९—पद : कॉफी आदिताल

मन मोहना मन मोहना।
मन हरि लीन्हा री ।। धृ० ।।
शामसुन्दर की तिरछी चितवन।
चितवन्न मों कछु कीन्हा री ।। १ ।।
गुण गावत कोई पार न पावे।
सो अब सब घट चीन्हा री ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु पलक न भूले।
रोम रोम सुख दीन्हा री ।। ३ ।।

१४०—पद : यमन कल्याण आदिताल

मेरो री मन हर लीना।
का जानो का कीना ।। ध्रु० ।।
मुरली बजावे मोरे मन भावे।
शामसुन्दर रंग भीना ।। १ ।।
ब्रिंदावन मो रहस रचो है।
प्रेमामृत सुख दीना ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु मन मोहन हरि।
गुरू परसादे चीना ।। ३ ।।

१४१—पद : यमन कल्याण आदिताल

मेरो मन भावे कान्हा लंगर हो।
जब तब प्यारो संग रहो हो ।।ध्रु०।।
मधुर सी बीन बजाय भुलावो।
रस बस प्यारो हम पर है हो ।। १ ।।
हित चित चोर लियो छिन माहीं।
मन मोहन मुखचन्द्र दिसत है हो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु मदन मनोहर।
सब घट सोभा सुन्दर है हो ।। ३ ।।

१४२—पद : राग बिभास आदिताल

मन हरि लीनो रे गोपाल।
भक्तन को रछ पाला ।। ध्रु० ।।
मोर मुकुट सिर कानन कुण्डल।
गरे बैजयंती माला ।। १ ।।
तिरछी चितवनि शामसुन्दर की।
मदन मनोहर लाला ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु अंदर बाहेर।
भेंटो दीन दयाला ।। ३ ।।

१४३—पद : राग कॉफी ताल बिलंदी

मोरी माई री गोकुला गुणवंत।
जानत साधु सन्त ॥ धृ० ॥
वेद पुराण सदा गुणवंत।
जानत साधु सन्त ॥ धृ० ॥
वेद पुराण सदा गुण गावत।
पावत नाहीं न अंत ॥ १ ॥
मन मुख नर दरसन नहि पावे।
साधन करत अनन्त ॥ २ ॥
मानपुरी सतगुरु परसादे।
पायो निरभय पंथ ॥ ३ ॥

१४४—पद : विभास ताल बिलंदी

मदन मोहन शामसुंदर ध्याव री।
जनम गँवावे री ॥ धृ० ॥
जो ही जाय सो फिर न आवे।
ताते हरि गुण गाव री ॥ १ ॥
हिलि मिलि काज आपनो कर लो।
बहुरि न ऐसो दाव री ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु अंतरजामी।
करिकरि भक्ति रिझावरी ॥ ३ ॥

१४५—पद : राग कानड़ा आदिताल

लागो री ध्यान वाको।
सुन्दर वर राधा को ॥ धृ० ॥
देखत दृग रस मगन भई प्यारी।
बिसर परे नहीं ताको ॥ १ ॥
नन्द महर की गायाँ चरावत।
पालक जो वसुधा को ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु मन हरि लीनो।
मोहन सुत जसुदा को ॥ ३ ॥

१४६ पद : कॉफी आदिताल

तेरो ध्यान गुपाला।
निस दिन लागो रे॥ धृ० ॥
सुन्दर रूप देखि मन मोहा।
भव भ्रम भागो रे॥ १ ॥
मुरली की धुन सुनि होई बावरी।
सब सुख त्यागो रे॥ २ ॥
मानपुरी हरि की छबि निरखत।
आनन्द जागो रे॥ ३ ॥

१४७—पद : सारंग

हरि प्यारे की रंगा रंगी।
निसि दिन प्रेम पगी॥ धृ० ॥
मगन भई अब सुख दुख भूली।
जब सो लगन लगी॥ १ ॥
शामसुन्दर की मोहन मूरति।
मोहनी डारी ठगी॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु की छबि मोरे।
हिरदे माही जगी॥ ३ ॥

१४८—पद : बहार झुंबरा

डाल गयो मन मोहन फांसी॥ धृ० ॥
आंबवा की डाली कोयल बोली।
बोलत अमृत वचन उदासी॥ १ ॥
सुन री सखी हरि कब घर आवे।
हमरो प्रेम उनके चरनों सी॥ २ ॥
पुरुषोत्तम की छबि निरखत।
तुम ठाकुर हम तुमरे दासी॥ ३ ॥

१४९—पद : ढोला आदिताल

हमरे मंडवा आव नंदलाल ।
अंतरजामी दीन दयाल ।। धृ० ।।
अंबा मोहि कृष्ण वर दीन्हो ।
दूजो वर आयो शिशुपाल ।। १ ।।
पाती सुनत बिलम नहि कीन्हो ।
गरुड़ासन आयो गोपाल ।। २ ।।
मानपुरी निजभाव देखि के ।
हरिभक्तन को करत निहाल ।। ३ ।।

१५०—पद : सारंग बिंद्रावनी आदिताल

कान्हा बिंद्रावन मो अरे अरे कान्हा ।
गावत सारंग तान ।। धृ० ।।
मधुर मधुर धुनि मुनि जन मुनिजे ।
सहज हो लागो ध्यान ।। १ ।।
गोपी ग्वाल निहाल करत है ।
राखन सब को मान ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु तट जमुना के ।
रहम रचे निरवान ।। ३ ।।

१५१—पद : आसा आदिताल

वारी वारी वे मोहन कान्हा ।
नैनन माँही समाना ।। धृ० ।।
मोरे घर आवे बीन बजावे ।
सुनि सुनि धुनि मन माना ।। १ ।।
रूप न रेखा जहाँ तहाँ देखा ।
सब घट व्यापक जाना ।। २ ।।
मानपुरी गावे निम दिन ध्यावे ।
तेरे हात बिकाना ।। ३ ।।

१५२—पद : केदार

लोग कहैं मथुरा में शाम मेरे।
जान मथुराहि शाम में बस्ती है।। धृ०।।
रूप अरूप जान आपुहि को धरे ध्यान।
पल पल छिन छिन अजपा जपत है।। १।।

नैन में दरस बसे। रसना नित नाम रटे।
ऐसो बहुरूपी देख। त्रिभुवन में रहत है।। २।।
माने तो वाहवा। न माने तो चला जाय।
मानपुरी बात बिकट। ऐसी प्रगट कहत है।।३।।

१५३—पद : धनाश्री आदिताल

भली कीनी मदन गोपाला।
ब्रजबासी नन्द लाला।। धृ०।।
बालक पन की प्रीति बिसारी।
नई न प्रीत रसाला।। १।।

रूप हीन कुबजा पटरानी।
हम ब्रज नारी बेहाला।। २।।
मानपुरी प्रभु तुम सो देखियो।
हम जपती जपमाला।। ३।।

१५४—पद : छाया नाटक ताल

अलि री स्यामसुंदर मदन मनोहर मेरे मन के चोर।।धृ०।।
आपन जाये द्वारका छाये।
हृदय कियो कठोर।। १।।
अब तो प्रीति करि कुबजा सो।
जसु छायो चहुँ वोर।। २।।
मानपुरी साईं हम नहीं कपटी।
कपटी नंद किशोर।। ३।।

१५५—पद : कवित्त

ऊधो ऐसी कहो जाय, बहुत बहुत परि परि पाय,
तुम बिन कछु न सुहाय हाय हाय कैसी बनी हो जाव रे।
एक तो पायो वियोग, दूजे लिख पठ्यो जोग,
तीजे सब हँसते लोग भलो कियो प्रीति को निवाह स्याम सावरे।
हमें डारि प्रेम फाँसी, फाँसी जम असुर हाँसी,
एक दुख दूजो हाँसी, कहाँ कहो कैसी करो बरी किन्हीं बावरे।
"मानपुरी" प्रगट कहत बोले चले कछु मत्त,
जहाँ तहाँ परम तत्व तीन लोक में बसे सो बसे गोकुल गाव रे।

१५६—पद : सारंग आदिताल

ऊधो मीठी विदुर की भाजी।
प्रेम प्रीत की ताजी।। ध्रु०।।
भाव बिना खड् दरसन नहिं भावे।
भाजी सो मन राजी।। १।।
तजि अभिमान मोहि सम देखे।
सोहि भगत परकाजी।। २।।
कहत मानपुरी मन मुख हारी।
गुरुमुख जीती बाजी।। ३।।

१५७—पद : धनाश्री आदिताल रूपक

आवतु मधु कर सुनेरे भाई।
जित तित कुँवर कन्हाई।। ध्रु०।।
हमहि नन्द जसोदा हमहि।
हमरे बाप न भाई।। १।।
हम हर घट मों ऐसो रहत है।
जो गुर माहीं मिठाई।। २।।
मानपुरी मधुकर को मोहन।
ऐसी बात सुनाई।। ३।।

१५८—पद : हमीर कल्याण ताल हस्त बंद

द्वारका मों कृष्ण कहिये मो को जित तित दीसे।
अब तो सब ठौर भई मेरे जानो द्वारका ॥ धृ० ॥
अग्यान को ग्यान, अविद्या की विद्या भई।
नैनन मों ये दिसे राजा रंक सारका ॥ १ ॥
चरनन चित लागि गयो भव भ्रम भागि गयो।
देखो स्वरूप रूप अपने करतार का ॥ २ ॥
कहत मानपुरी सब जग जगदीस भयो।
मरम जब पायो आकार निराकार का ॥ ३ ॥

१५९—पद : बसंत अड़ताल

आलि धुनि मृदंग।
जब तब धुनि घट घट मृदंग ॥धृ०॥
तन गोकुल मो वनिता बनी बनी।
खेलत कृष्ण ही कृष्ण संग ॥ १ ॥
फूले फूल भाँति भाँति के।
सब फूलन को एक रंग ॥ २ ॥
मानपुरी हरि को पद हरि ही।
गावत होत न ताल भंग ॥ ३ ॥

१६०—पद : राग बिलावत ताल बिलंदी

मन भावे नन्द को नन्दा रे।
बालक आनन्द कंदा रे ॥ धृ० ॥
गोपिन मों गोपाल बिराजे।
जो पूनम को चन्दा रे ॥ १ ॥
मोहनी मूरति जब सो देखी।
भूला घर को धंदा रे ॥ २ ॥
मानपुरी हरि के गुन गावत।
छूट गयो भव फंदा रे ॥ ३ ॥

१६१—पद : धनाश्री आदिताल

नंद के घुटोना कछु टोना किया रे।
मन मोहि लिया रे।। धृ० ।।
मोहन मंत्र पढ़ि पढ़ि कान्हा।
पान को बीरा भरि हिया रे ।। १ ।।
बिन देखे मोहि नींद न आवे।
जब से तेरो पग छिया रे ।। २ ।।
मानपुरी साईं बिसरत नाहीं।
मनुवा मेरो मरि जिया रे ।। ३ ।।

१६२—पद : राग-देव गांधार आदिताल

जसुधा ढोठा तेरो चोर।
जागत कीनो भोर ।।
जब देखो तब सनमुख ठाड़ो।
हात न लागे मोर ।।
अब तू बारन अपने ढोठे।
नित उठ करतो सोर ।।
मानपुरी प्रभु से समझाऊँ।
का नी करनी हो तोर ।।

१६३—पद : राग-खट-आड़ाताल

सुन री जसोदा ग्वालनी बोलें।
तेरो कान्हा ने मेरा माखन खायो ।।धृ०।।
लाल गोपाल चोर गोरस को।
सोभा आज अचानक पायो ।। १ ।।
अपना ग्यान आप ही भूला।
ठगन यों सों अपटा गयो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु रस बस कीनो।
ऐसा तोही संदेस सुनायो ।। ३ ।।

ऋतु वर्णन

१६४—पद : मल्हार अड़ताल

घमंडी घन आयो।
अगगग गरज सुनावे ॥ ध्रु० ॥
दादुर मोर करत है सोर।
राग हिंडोल जमाये ॥ १ ॥
पिय बिन प्यारी बहुत दुखारी।
पिय को दरसन नही पायो ॥ २ ॥
मानपुरी साईं हरि घट माहीं।
सतगुरु भेद बतायो ॥ ३ ॥

१६५—पद : मल्हार अड़ताल

गगन तो गरजत।
सुनि मुनि मेरो मन डरपत ॥ ध्रु० ॥
सेज अकेली इह अलबेली।
पिया बिन तन मन तलपत ॥ १ ॥
घर घर नारी तलपत लत सारी।
हम दुखिया दुख जलपत ॥ २ ॥
मानपुरी साईं इत मन माही।
जानत नाही तन मन मत ॥ ३ ॥

१६६—पद : राग मल्हार सप्रताल

गरजत बरसत सावन आयो।
प्रीत पयारे अजहु न आयो ॥ ध्रु० ॥
सुन रे सखी हम में गुन नाही।
या कारन पिय परदेस गयो ॥ १ ॥
पिय मन मानी सोई पटरानी।
करि करि सेवा सजन रिझायो ॥२ ॥
मानपुरी प्रभु तबहि पाये।
गुरू चरन सो जब चित लायो ॥३॥

१६७—पद : राग मल्हार बैताल

माई री शाम घन घटाई ।
पापी पपीहा टेर सुनाई ।। ध्रु० ।।
गरजि गरजि घन बरसन लागो ।
बिरहिन को पिय की सुध माई ।।१।।
पिय प्यारो परदेस बिलम रहो ।
हमरी सुध बिसराई ।। २ ।।
मानपुरी साईं हरि घट माहीं ।
गुरु बिन लखो न जाई ।। ३ ।।

१६८—पद : राग मल्हार अड़ताल

साजन झूलत मोही झुलावत ।
राग मल्हार सुनावत ।। ध्रु० ।।
गगन हिंडोरा माहीं पिय बिन ।
दूजा नाहि सन्मुख रूप दिखावत ।।१।।
प्रीतम सो प्रीत लागी प्रेम की तो झर लागी ।
भाव पपीहा पुकारत ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु रंग बरसावत ।
भींज प्यारी गावत ।। ३ ।।

१६९—पद : मल्हार अड़ताल

सावन घर घर गावत भावत हमकु ।
अपने अपने पिय संग ।। ध्रु० ।।
मैं मतवारी पिय मतवारा ।
जग तम वारी सब अंग ।। १ ।।
घरी घरी राग मल्हार सुनावत ।
निसदिन बरसे हरि रंग ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु रंग बरसावत ।
भींजत री गावत ।। ३ ।।

होली का रंग

१७०—पद : बसंत अड्ताल

आलि नित बसंत ।
जित देखो तित नित बसंत ।। धृ० ।।
हरि कोई खेलत हरि काहु संग ।
हम खेलत संग अपने कंथ ।। १ ।।
जित तित डफ बाजत अनहत धुनि ।
जानत कोई है साधु संत ।। २ ।।
मानपुरी जित दृष्टि पडे तित ।
अमर बस्त तन मन को तंत ।। ३ ।।

१७१—पद : रामकली आदिताल

घर घर होरी खेलत कान्हा ।
भक्तन हात बिकाना ।। धृ० ।।
बहुरूपी बहु भेष बनायो ।
आखर एक निदाना ।। १ ।।
सुन्दर रूप सकल घरमाही ।
जिन जाना तिन माना ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु अन्तर बाहेर ।
संत संग पहिचाना ।। ३ ।।

१७२—पद : सारंग आदिताल

साजन तन मो खेलत होरी ।
सुधी बुधी चोरी तेरी ।। धृ० ।।
आपहि गावे आपहि बजावे ।
आप नचे सुन बोरी ।। १ ।।
इतनी बात सुन के फिर देखा ।
तन मन भूली गोरी ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु के रंग रंगी ।
बिन जप अजप जपोरी ।। ३ ।।

१७३—पद : सारंग आदिताल

पिय प्यारे पत्र गुमचाई री।
चुटकी दे मोहे नचाई री ॥ ध्रु० ॥
सुख अपार दियो पिय प्यारे।
आपने रंग रच्याई री ॥ १ ॥
दीन दयाल दया करि माको।
जनम मरन सु बचाई री ॥ २ ॥
मानपुरी पिय के रंग रंगी।
तीन लोक छबि छाई री ॥ ३ ॥

१७४—पद : कानड़ा नायकी आदिताल

साजन होरी खेले।
या रंग रंगीले साथ ॥ ध्रु० ॥
रंग भरे सब घर घर डोले।
पिचकारी लिये हाथ ॥ १ ॥
सात पाँच बनि मिलि मिलि आई।
रंग मचो दिन रात ॥ २ ॥
मानपुरी यह बात विरह की।
कही सुनी नहीं जात ॥ ३ ॥

१७५—पद : राग कल्याण इमन आदिताल

आज होरी हरि संग खेलना।
मिठी मिठी बात बोलना ॥ ध्रु० ॥
जो दिन आवे सो फेर न आवे।
ब्रह्मानंदे डोलना ॥ १ ॥
जो कोई होरी खेलो चाहे।
लोक लाज सब मेलना ॥ २ ॥
कहत मानपुरी फगुआ कारण।
बचन गुरू को झेलना ॥ ३ ॥

१७६—पद : सारंग आदिताल

सजनी होरी खेले नन्दकिसोर ।
तू परिपूरन चोर ।। ध्रु० ।।
गावे बजावे रंग बरसावे ।
नजर न आवे चोर ।। १ ।।
होरी खेलत हाथ न आवे ।
देखा हरि बरजोर ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु रस बस कीनो ।
बांधि प्रेम की डोर ।। ३ ।।

१७७—पद : राग बंगाला आदिताल

हरदम होरी खेल लो ।
पिय प्यारे के रंग रंग री ।। ध्रु० ।।
पिय अपने से मनन कीजे ।
सेवा कर सब आंगरी ।। १ ।।
सुखसागर नागर की लगन बिन ।
दिसि दिन दहत अंग री ।। २ ।।
आदि अन्त आनन्द पावेगी ।
मानपुरी परसंग री ।। ३ ।।

१७८—पद : सोरट आदिताल

होरी खेलो हो लला ।
सुख पावत आवला ।। ध्रु० ।।
भाव भंग तैसे होरी खेलो ।
सब कोई कहत भला ।। १ ।।
जो आवे सो रहे न कोई ।
जातो जगत चला ।। २ ।।
कहत मानपुरी गुरु साहेब की ।
समझो अकल कला ।। ३ ।।

१७६—पद : अड़ाना आदिताल

होरी खेलियो पिया संग ।
रहसि रहसि अर्धंग ।। ध्रु० ।।
थोरे दिनन के जियने कारन ।
करिये नाची भंग ।। १ ।।
मान गुमान छोड़ दे बावरी ।
प्रीतम के रंग रंग ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु मदन मनोहर
सोहै भीने अंग ।। ३ ।।

१८०—पद : राग विभास ताल बिलंदी

हरि रंग भरि होरी हो गावता ।
ताल मृदंग बजावता ।। ध्रु० ।।
भाव भगति सो होरी खेले ।
ग्यान गुलाल उड़ावता ।। १ ।।
प्रात समय हरि रंग बरसावे ।
राग विभास जमावता ।। २ ।।
मानपुरी कहे तन गोकुल में ।
कान्ह रे फाग मचावता ।। ३ ।।

१८१—पद : विलावल आदिताल

हम सो जिन खेले फगुहार रे ।। ध्रु० ।।
बड़े बड़े भूपति महाराजा ।
खेल खेल सब हारे रे ।। १ ।।
हम अबला सबला जग माहीं ।
सब जन बस कर डारे रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी जग गुलजारी ।
देखन की गति न्यारी रे ।। ३ ।।

१८२—पद : राग बंकावली आदिताल

मेरो पिया फगुवा मागे।
दौरि दौरि लेरे लागे ॥ ध्रु० ॥
हौं नहीं बोलौं हौं संकुच की मारी।
सासु ननंदिया जागे ॥ १ ॥
कहा करूँ रोय इह लोक लाज को।
नैनन सो नहीं भागे ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु रंग रंगीलो।
रसिक रसायन पागे ॥ ३ ॥

१८३—पद : विराव अड़ताल

होरी खेलत नित नई।
अब ग्वाल बाल सब कृष्ण मई ॥ ध्रु० ॥
तन गोकुल में हरि रंग बरसे।
भीजत फागु भई सुभई ॥ १ ॥
कहाँ कहु सुख कहत न आवे।
मोहन मोह लई सुलई ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु प्रेम प्रीत सो।
मोहमाल दई सुदई ॥ ३ ॥

१८४—पद : राग आल्हया बिरावर अड़ताल

होरी खेलत नन्दलाला।
रंग बरसो निरमल ॥ ध्रु० ॥
उड़त गुलाल चहुँ दिस छायो।
लाल भयो बहला ॥ १ ॥
रंग भरी मूरति बहुत बिराजत।
लाजत चन्द्र कला ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु देखन आई।
सात पाँच अबला ॥ ३ ॥

१८५—पद : राग धनाश्री आदिताल

अलि भली यह आजु फागु।
आछि फाग री ॥ धु० ॥
सुनि सुनि धुनि अनहद फकी।
हों तो सोवत ते परि जागरी ॥ १ ॥
रंग भरे नैन रंग भरे बयन।
रंग भरी सिर पाग री ॥ २ ॥
मानपुरी हरि की छबि निरखत।
पायो अचल सुहाग री ॥ ३ ॥

१८६—पद : धनाश्री आदिताल

फाग मचाई तन गोकुल मों कान्हाँ ॥धु०॥
रस को रसि लो रंग रगीलो।
मोरे मन माना ॥ १ ॥
गावत बजावत रंग बरसावत।
सारे जग जाना ॥ २ ॥
मानपुरी कहे फगुवा कारण।
साई घर आना ॥ ३ ॥

१८७—पद : धनाश्री आदिताल

मदन मनोहर होरी खेले घर।
जानत है कोई जानन हारा ॥ धु० ॥
आपहि पुरुष आपहि नारी।
आपहि आप जगत उजियारा ॥ १ ॥
आपहि गावे आप बजावे।
आपहि रंग पर डारा ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु की छबि निरखत।
मगन भई भूला दुख सारा ॥ ३ ॥

१८८—पद : राग सारंग दरबारी आदिताल

घर घर कान्हा फागु मचाई।
रस भरी तान माय सुनाई॥ ध्रु० ॥
हो बैठी आपने घर माही।
मोहन मुरली आन बजाई॥ १ ॥
मधुर मधुर सुर बाजत बनसी।
सुनत सुनत कुल कानि गवाई॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु की छबि न्यारी।
कर लीनी निर्वान सगाई॥ ३ ॥

१८९—पद : सारंग ब्रिंदावन आदिताल

कान्हा होरी गावे ताल मृदंग बजावे ॥ध्रु०॥
मगन भये अब ग्वाल बिच्यारे।
नईन तान सुनावो॥ १ ॥
गोपी ग्वाल संग लिये डोले।
घर घर रंग मचावे॥ २ ॥
मानपुरी यह रंग भरी मूरति।
हिरदे माहीं बसावे॥ ३ ॥

१९०—पद : राग सारंग ताल रूपक

रंग भरि डारी पिया प्यारी।
केशर भर पिचकारी॥ ध्रु० ॥
प्रीतम मेह मेह बरसावे।
भींज गई मोरी सारी॥ १ ॥
हरि रंग भींजा तिन चिन्हा।
रस बस किन्ही नारी॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु के रंग-रंगी।
कौन होत मतवारी॥ ३ ॥

१६१—पद : सारंग आदिताल

पिया होरी खेलो हो खेलो हो।
खेलो हो खेलो हो॥ धृ०॥
मन मोरे की इच्छा ऐसी।
होरी तुम संग खेलो हो॥ १॥
दुविधा दूरी करो या जिय की।
लोक लाज गही मेलो हो॥ २॥
मानपुरी प्रभु प्रेम अपनो।
आज दया करि बोलो हो॥ ३॥

१६२—पद : राग गौड़ सारंग अड़ताल

होरी तू खेलत कुंवर कन्हाई।
तन गोकुल मो धूम मचाई॥ धृ०॥
आनन्द धुनि सुनि मगन भई री।
चहुँ दिस ग्यान गुलाल उड़ाई री॥ १॥
गोपी ग्वाल सब बाल भयो है।
लाल गुपाल प्रेम भरि लाई॥ २॥
मानपुरी हरि की छबि निरखत।
सब संसार भयो सुख दाई॥ ३॥

१६३—पद : राग कल्यान इमन आदिताल

मन मोहन खेलत होरी।
संग लियो राधा गोरी॥ धृ०॥
बाल गोपाल ब्रज बनिता।
सब जग लाल करो री॥ १॥
हरि की छबि निरखत तन मन भूला।
जित तित नवल किसोरी॥ २॥
मानपुरी प्रभु फागु मचाई।
चितवत चित्त हरो री॥ ३॥

१६४—पद : यमन कल्यान आदिताल

आज रंग रंग रंग।
रंगी रहो रे ॥ ध्रु० ॥
इत राधा उत कुंवर कन्हैया।
नाचत होरी ता थैया ॥ १ ॥
बादल बिना प्रेम-रंग बरसे।
भिजत मेरो मन हरि रो ॥ २ ॥
लाले लाल नजरि सब आवे।
मानपुरी होरी गावे ॥ ३ ॥

१६५—पद : राग नायकी कानड़ा आदिताल

देखो रे देखो रे होरी खेला रे।
मन मोहन बड़पार ॥ ध्रु० ॥
पूर्ण ब्रह्म जहाँ तहाँ दीसे।
लीला अगम अपार ॥ १ ॥
अब तो रूप नाम धरि आयो।
भगत काज करतार ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु मदन मनोहर।
मोहे या सब संसार ॥ ३ ॥

१६६—पद : राग काफी अड़ताल

शाम सुन्दर खेले होरी।
भूली लोक लाज गोरी ॥ ध्रु० ॥
ऋतु बसंत घट ही घट प्रगटी।
सुधि बुधि थकित भई मोरी ॥ १ ॥
मो तन हेरि धरि लई सजनी।
करि कृपा रंग मो बोरी ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु फागु मनाई।
भर दुपहर कीनी चोरी ॥ ३ ॥

१६७—पद : राग काफी अड़ताल

सुन हो लाल अब होरी आई ।
पंच रंग चुनरी देहु रंगाई ।। ध्रु० ।।
तुमहि करो केसरिया बागो ।
इन नैननमों रहे बस माई ।। १ ।।
पल पल फागु होत नयन मों ।
रस की बात कछु कही न जाई ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु होरी खेले ।
रंग-भरी मूरत मो मन भाई ।। ३ ।।

१६८—पद : कल्यान यमन आदिताल

आज लाली देखी लाल की ।
मन मोहन गोपाल की ।। ध्रु० ।।
आठ प्रहर आनन्द झर लागी ।
निर्मल ग्यान गुलाल की ।। १ ।।
आपहि आप घटो घट खेले ।
फागु मच्चाई ख्याल की ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु हरि छबि निरखत ।
फिकिर मिटी जंजाल की ।। ३ ।।

१६९—पद : सोरट आदिताल

महर को कान्ह रे खेले होली ।
रंग बरसावत घन घोरी ।। ध्रु० ।।
काछ जो काछे नाच जो नाचे ।
संग लियो राधा गोरी ।। १ ।।
दुनियाँ लखे सो लखे न कोई ।
घर घर करती चोरी ।। २ ।।
मानपुरी अब जान लियो सब ।
मोहन रूप किसोरी ।। ३ ।।

२००—पद : रामकली आदिताल

आरे फगुहारे यारी जन दे रे।
फगुवा अपनो ले रे ॥ ध्रु० ॥
लाल गुलाल अरगजा ले के।
आज आव घर मेरे ॥ १ ॥
ताल मृदंग बजावत गावत।
साधु संग घनोरे ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु फाग खिलावे।
हौ बलिहारी तेरे ॥ ३ ॥

२०१—पद : तोड़ी ताल विलंदी

अलि री आज रंग।
मनभावन पिय संग ॥ ध्रु० ॥
हो गई भेंट अचानक सजनी।
लाय लई अरधंग ॥ १ ॥
जान सुजान सुनावत तान।
बाजत ताल मृदंग ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु के रंग रंगी।
तन मन भयो अपंग ॥ ३ ॥

२०२—पद : बिरावर आदिताल

होरी खेलत भर्म भगा।
तन मन प्रेम पगा ॥ ध्रु० ॥
गुरु प्रसाद साधु की संगत।
रंग सुरंग लगा ॥ १ ॥
भाव भगत सो होरी खेलत।
तिनको कर्म जगा ॥ २ ॥
मानपुरी सतगुरु परसादे।
माया मोह ठगा ॥ ३ ॥

२०९—पद : सोरट आदिताल

सो होरी खेल लो ओ पियारी।
घट घट राम निहारी ॥ धृ० ॥
चहुँ दिस देख लाल की लाली।
फूलि रही फुलवारी ॥ १ ॥
धन जोबन दुपहर की छाई।
सपना सा दिन चारी ॥ २ ॥
कहत मानपुरी समझ बावरी।
प्रीत से नहिं न्यारी ॥ ३ ॥

२१०—पद : कॉफी आदिताल

नंदलाला गावे रसीली फाग।
क्या सोवे अब जाग जाग जाग ॥ धृ० ॥
अनहद ताल मृदंग बजावे।
सरस अलापे राग राग राग ॥ १ ॥
मान गुमान छोड़ देवो री।
दरसन फगुवा माँग माँग माँग ॥ २ ॥
मानपुरी साईं अधम उधारण।
हित सो पैंया लाग लाग लाग ॥ ३ ॥

२११—पद : राग आड़ानी ताल बिलंदी

जी फागु खेलो राम राम बोलो।
प्रेम मगन हो डोलो ॥ धृ० ॥
पूरण ब्रह्म जहाँ तहाँ देखो।
ग्यान की अँखियाँ खेलो ॥ १ ॥
आपही पुरुष आपही नारी।
आप ही आप अकेलो ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु के रंग राचो।
आठ पहर ही लो लो ॥ ३ ॥

२१२—पद : सोरट अड़ताल

होरी गुरु परसादे खेलियो ॥ धु० ॥
गुरु अंजन सो अंजन नाहीं ।
दिये यक कार ललना ॥
भेद भेद गयो सब तन की ।
सुफल भयो संसार ॥ १ ॥
कर्म जोग दुख भरि कहियो ।
राज जोग है सार ॥
सहजे सहज परम पद पायो ।
मिलत न लागी बार ॥ २ ॥
तिर्थ व्रत दान जप तप करता ।
मन न होया स्थिर ॥
कहत मानपुरी गुरु परसादे ।
कटि गये कर्म जंजीर ॥ ३ ॥

२१३—पद : काफी अड़ताल

पहिले अपने नाम बतावो ।
पीछे पद होरी को गावो ॥ धु० ॥
ग्यान अग्यान सो कर्म जलावो ।
तब तुम आपन आपकु पावो ॥ १ ॥
गुरु सुख हो के मन समझावो ।
ब्रह्म भजो त्रिपन बिसरावो ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु सो लई लावो ।
भव सिंधु क्षण में तर जावो ॥ ३ ॥

२१४—पद राग काफी अड़ताल

कमन नैन मो मन भायो ।
तुम फगुवा देवो हमारी हो ॥ धु० ॥
अब लाल जात नहीं छकावो ॥ १ ॥

लागो ध्यान जब तुम्हारो ।
यक रंगी रंग ठावो हो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु रंग रंगीलो ।
रसिक रसायन गावो हो ।। ३ ।।

२१५—पद : राग ललित आदिताल

हो हो होरी खेलत नन्द किसोरी ।। धृ० ।।
गोप बंधु सब बनी बनी आई ।
दुहु वो रंग मचो री ।। १ ।।
ग्यान गुलाल गोपाल उड़ावे ।
प्रीति अचानक जोरी ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु फागु मनाई ।
दुईत गाँटी गछोरी ।। ३ ।।

२१६—पद : धनाश्री आदिताल

श्रीराम राजा घट घट होरी खेलता ।। धृ० ।।
नाप त्यावतो साखी बताऊँ ।
भगवत गीता बोलता ।। १ ।।
यो भवसागर तारण कारण ।
अंतर को सुख खोलता ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु की बात ।
सुनी सुनी निस दिन डोलता ।। ३ ।।

२१७—पद : धनाश्री आदिताल

लाल होरी खेलो जोबन है दिन चार का ।। धृ० ।।
सपना संसार है जी ।
स्मरो साई पार का ।। १ ।।
अलख निरंजन घट घट देखा ।
पंथ बतायो यार का ।। २ ।।
मानपुरी साईं हाजिर नाजीर ।
ये ही नफा दीदार का ।। ३ ।।

२१८—पद : धनाश्री आदिताल

तीन पाँच मिल धूम मचाई ।
खेलत हो हो होरी हो ।। ध्रु० ।।
बाजत ताल मृदंग खंजिरि ।
मुरली की धुनि थोरी हो ।। १ ।।
केसरी अगर गुलाल अरगजा ।
लिनो भरि झोरि हो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु फागु मनाई ।
विरहिनी रंग मो बोरी हो ।। ३ ।।

२१९—पद : राग गौड़ सारंग अड़ताल

मन मोहन प्यारो खेलत फाग ।
मधुर मधुर सुर होत राग ।। ध्रु० ।।
लख चौऱ्यासी बाजे बाजे ।
अनहद धुनी सुनि-परी हो जाग ।। १ ।।
गोपी ग्वाल बुलाय लाल सब ।
अपनो प्रेम तब देन लाग ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु हरि रंग बरसावत ।
ब्रजबासिन के बड़े है भाग ।। ३ ।।

२२०—पद : बसंत अड़ताल

फागुन आयो विरह जनायो ।
पिय प्यारो नहीं आयो ।। ध्रु० ।।
और सखी पिय की सुख लूटे ।
हम सब जनम गमायो ।। १ ।।
नर नारी मिल होरी खेले ।
हम दुखिया दुखिया दुख पायो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु रंग रंगीलो ।
किन बिरहिन बिरमायो ।। ३ ।।

२२१—पद : राग भैरव अड़ताल

खेलत फागुन मनमोहन प्यारे।
घटि गई रैन भयो भुवन सारो ।। ध्रु० ।।
दै दै गारी तान सुनावे।
भरि भरि मुठिये गुलाल उड़ावो ।। १ ।।
साँवरे बदन पर तन मन वारी।
मगन भई सब ब्रज की नारी ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु फगुवा दीनो।
घट घट ब्रह्म यक करि चीन्हो ।। ३ ।।

२२२—पद : रामकली आदिताल

होरी खेले सर्व जनासी।
नंद नंदन ब्रिजवासी ।। ध्रु० ।।
अगम अपार अमूरत साई।
अजर अमर अविनासी ।। १ ।।
ग्यान गुलाल चहुँ दिस फेके।
तन गोकुल के निवासी ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु की छबि निरखत।
मेरो मन भयो है उदासी ।। ३ ।।

२२३—पद : बिभास आदिताल

होरी खेलत नंद के लाला।
संग लियो गोपाल बाला ।। ध्रु० ।।
बिंद्राबन के कुंज गलि मों।
उड़त अबीर गुलाला ।। १ ।।
बाजत ताल मृदंग झांझ डफ।
गावत फाग रसाला ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु को रसीले।
साँचो दीन दयाला ।। ३ ।।

२२४—पद : राग सारंग ताल तिलंदी मिश्रावन

होरी गावे सारंग कान्हा ।
मुनि सुनि धुनि मनमाना ।। ध्रु० ।।
मोहन लाल मोहनी डारी ।
सब संसार भुलाना ।। १ ।।
मगन भयो ब्रिंदावन वासी ।
मदन मनोहर जाना ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु शामसुन्दर पर ।
वारूँ तन मन प्राना ।। ३ ।।

२२५—पद : सारंग

भली ब्रिंदावन फगुवा भई ।
सुख सो रैन गई ।। ध्रु० ।।
ब्रज वासियाँ आनंदे डोले ।
ब्रह्म रूप सबही ।। १ ।।
भक्तन को भगवन्त दिखावे ।
क्रीडा नित्य नई ।। २ ।।
कह मानपुरी रास मंडल मो ।
जीवन मुक्ति दई ।। ३ ।।

२२६—पद : सारंग

कुंज भुवन मो खेलत होरी ।
शामसुन्दर राधा गोरी ।। ध्रु० ।।
केसर अगर गुलाल अरगजा ।
रंग बरसावत नवल किसोरी ।। १ ।।
अनहद डफ बाजत निशि वासर ।
गावत रसिक ले गयो चित चोरी ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु फगुवा दीनो ।
मगन भई अब सुद मोरी ।। ३ ।।

२२७—पद : सारंग

लाली लाल की हो लाल।
जब देखो जब लाल ।। धृ० ।।
एक रंग बिन रंग न दूजा।
सब जग लाल गुलाल ।। १ ।।
लालहि लाल भई सब बनिता।
लालहि लाल गुपाल ।। २ ।।
मानपुरी लालन की लाली।
देखत भयो निहाल ।। ३ ।।

२२८—पद : धनाश्री आदिताल

लाली लाल की हो जब देखो तब लाल ।।धृ०।।
एक रंग बिना रंग न दूजा।
सब जग लाल गुलाल ।। १ ।।
लाल ही लाल भई सब बनिता।
लाल ही बाल गुपाल ।। २ ।।
मानपुरी लालन की लाली।
देख भई हो निहाल ।। ३ ।।

२२९—पद : बिरावर आदिताल

हो साजन मोरे घर आयो।
आनंद उर न समायो ।। धृ० ।।
हालि फूलि डोले हँस हँस बोले।
आनि मिले सुखदाई ।। १ ।।
जनम सुफल अब भयो है मेरो।
प्रीतम प्रीत लगाई ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु के रंग रंगी।
निस दिन बजत बधाई ।। ३ ।।

२३०—पद : आडाना आदिताल

सो प्रभु आये हमरे आज।
अब भयो पूरण काज ॥ ध्रु० ॥
पछी करि जिन ध्रुव प्रह्लाद को।
द्रोपदि की राखी लाज ॥ १ ॥
भाग्य जगे सब पाप भगे।
अब देहि लहे ब्रजराज ॥ २ ॥
मानपुरी नहिं ऊँच नीच कोई।
सब दीखे सिरताज ॥ ३ ॥

२३१—पद : सारङ्ग

हो हो ठीक दुपहरी प्रीतम आये।
आनंद मंगल गाये ॥ ध्रु० ॥
जप तप करि सकल जन थाके।
प्रेम प्रीत सो पाये ॥ १ ॥
अब तो प्यारा हो तन न्यारा।
नैनन माही समाये ॥ २ ॥
मानपुरी सुख सागर नागर।
सब सखियन मन भाये ॥ ३ ॥

२३२—पद : यमन कल्यान आदिताल

आज अपनो काज करि लै।
यह भव सागर तरि लै ॥ ध्रु० ॥
मान गुमान छोड़ी सनमुख है।
पियकी बात चित धरि लै ॥ १ ॥
अपनी जात आपको भूली।
परमेश्वर छोड़ रो लई ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु अंतरजामी।
हित कर पायन परि लई ॥ ३ ॥

२३३—पद : सोरट आदिताल

सोऊ मगन छोड़ देवे दिवानी।
पिय पाया दिल जानी ॥ ध्रु० ॥
नार सुनार सुहागिन सोई।
प्रीतम के मन मानी ॥ १ ॥
मान गुमान काज नहिं आवे।
आजहु समझ अयानी ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु के मन भावे।
विरहन स्वरस सयानी ॥ ३ ॥

२३४—पद : पद दीपचंदी

मेरो पिया गावे रंग बरखावे।
तान सुनावे नई नई ॥ ध्रु० ॥
रैन जगावे मोही छकावे।
भाव दिखावे कही कही ॥ १ ॥
राम परकासा भो भ्रम नासा।
पूरन आसा भई भई ॥ २ ॥
मानपुरी मन करि करि सुमिरन।
बस करि मोहन लई लई ॥ ३ ॥

२३५—पद : सारङ्ग सूर फाकता

सारंग राग अति ही सलोना।
भर दुपहर रहो छाय ॥ ध्रु० ॥
रंग रूप यह सब जग देखो।
शोभा वर्न नी जाय ॥ १ ॥
रूप न रेख अमूरत साईं।
तैसा राग दिखाय ॥ २ ॥
मानपुरी यह राग अनूठा।
सुनि लीजो चित लाय ॥ ३ ॥

२३६—पद : राग मल्हार अड़ताल

आली झर लाई।
यह झर मो मन भाई ।। ध्रु० ।।
आज सजन मोरे घर आवे।
आनंद उर न समाई ।। १ ।।
भीजत सारी प्रेम की बूँदन।
वायु बहे सुखदायी ।। २ ।।
मानपुरी साईं सीतल कीनी।
नेह के मेह भिजाई ।। ३ ।।

२३७—पद : राग सारङ्ग ताल सावत रूपका

भये मोहे आनंद।
आजी मोरे आये दया सिंध ।। ध्रु० ।।
साई घर आये मो मन भाये।
दूर भये दुख दंद ।। १ ।।
हरखि हरखि जिय सुख उपजत है।
निरखि निरखि मुख चंद ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु विरह वियोगी।
परो है प्रेम के फंद ।। ३ ।।

२३८—पद : बिहागड़ा अड़ताल

आव रे लगन अब लाव प्यारे।
कबहु न करिहो पल भरि न्यारे ।। ध्रु० ।।
पलकन डगर बहारति प्यारे।
प्रेम प्यारे सो कंठ लगाव रे ।। १ ।।
को जाने अंतर की तुम बिन।
जोबन दीन्ह जात दगा रे ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु दरसन दीजे।
तन मन वारो नंद दुल्हारे ।। ३ ।।

२३९—पद : केदार

दृष्टि पड़े जब तो तुम शाम जहाँ तहाँ ।
मो को शाम भयो है ।। ध्रु० ।।
नरक को भौ अरु आस बैकुंठ की देखी ।
तूमें सब डार दिये है ।। १ ।।
ग्यान अग्यान को ठौर नहीं रही ।
जा दिन ते नन्द लाल मिलो है ।। २ ।।
मानपुरी कहे ज्यानकी नाथा ने ।
कैसो कछु टोना करो है ।। ३ ।।

२४०—पद : राग देव गांधार आदिताल

देवा बहुरूपी का ख्याल ।
कहुँ गोपी कहुँ ग्वाल ।। ध्रु० ।।
कहुँ भयो जोगी कहुँ भयो भोगी ।
कहुँ दुखिया बेहाल ।। १ ।।
कहुँ भयो ग्यानी कहुँ भयो ध्यानी ।
कहुँ पापी चंडाल ।। २ ।।
कहत मानपुरी देखि तमासा ।
नासो भवजंजाल ।। ३ ।।

२४१—पद : राग जीवनार आदिताल

प्रभु आवो हो भगत बछल महाराज ।
गरीब निवाज दया करो आज ।।
तो भोग लगावो हो ।। ध्रु० ।।
आपहि आप देव भगत, जहाँ तहाँ जगत ।
दौरि दौरि आवत तो तुमहि बुलावो हो ।।१।।
तुम लायक जिवनार नहिं संसार ।
भगति लडी बार तो आनि लड़ावो हो ।। २ ।।
भाव, भगति; छिमा, ज्यान नाना पकवान ।
जेवो भगवान तो प्रेम बढ़ावो हो ।। ३ ।।

२४२—पद : राग गौड़ ताल बिलंदी सारङ्ग

पी प्याला मोसे बोल मोरें।
यार यार यार ।। ध्रु० ।।
छिन सैंया जोबन जात सिरानो।
करो दीदार दार दार दार ।। १ ।।
नैन मों नूर भरा इत उत क्या देखे।
नहीं वार पार पार पार पार ।। २ ।।
मानपुरीं प्रभु दयाल प्रगट घट घट मो।
कहीं बार बार बार बार ।। ३ ।।

२४३—पद : चाल सोरठ आदिताल

मेरे प्रीतम आज दया कर बोला ।। ध्रु० ।।
ऐसो समय फेर न पाये।
हिलि मिलि अन्तर खोला ।। १ ।।
जानत हो तुम रूप अपारे।
विरहिनी को नाहीं मोला ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु रसिक रसीले।
अनरस मों रस घोला ।। ३ ।।

२४४—पद : राग ब्याहाग आदिताल

हो पिय की सेवा करियो।
हित सो पायन परियो ।। ध्रु० ।।
तन मन मान निछावर कीजे।
ये भवसागर तरिये ।। १ ।।
पिय सङ्ग जनम सुफल कर लीजे।
लोक लाज परि हरिये ।। २ ।।
मानपुरी साईं हूर घट माहीं।
दिलजानी से दुरिये ।। ३ ।।

२४५—पद : चाल कल्याण आदिताल

पाया री प्रीतम पायो ।
भूला मन समझावे यो ॥ ध्रु० ॥
मैं जानों कहु दूर रहत है ।
घट घट आप समायो ॥ १ ॥
जब देखे तब सन्मुख ठाड़ो ।
मन मोहन मन भायो ॥ २ ॥
मानपुरी साईं बिसरत नाहीं ।
या कारण जस गावे ॥ ३ ॥

२४६—पद : चाल परज आदिताल

प्रीतम फिरि फिरि यह सुख दीजे हो ।
दीजे हो दीजे हो दीजे हो ॥ ध्रु० ॥
जो तुम्हरी सेवा से चुको ।
हम पर कृपा कीजे हो ॥ १ ॥
हम सखी बहुत हैं तुम्हरे ।
तुम अनन्त जुग जीजो हो ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु अन्तर जामी ।
तुम हमको हरि लीजो हो ॥ ३ ॥

२४७—पद : ललित आदिताल

कलरिया प्रेम का प्याला लावु ।
तू पिय मोहि पिलाउ ॥ ध्रु० ॥
धूंढत धूंढत तेरो घर पायो ।
तन मन आजि छकाउ ॥ १ ॥
ग्यान कबाब बहुते है मीठो ।
ध्यान खाव बजाउ ॥ २ ॥
मानपुरी मन मगन भयो अब ।
मधुरी तान सुनाउ ॥ ३ ॥

२४८—पद : कॉफी आदिताल

प्यारे तुमरी रीझ पर ।
वारौं तन मन प्रान ।। धृ० ।।
सबसों नीची बावरी दासी ।
कीन्हीं आप समान ।। १ ।।
चन्द्रबदन मृगनैनी तजिके ।
मोरे घर आयो सुजान ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु निज सुखदाई ।
राखत सब को मान ।। ३ ।।

२४९—पद : परज आदिताल

प्रभु को भाव भगति ही भावे ।
जो पावे सो आछे पावे ।। धृ० ।।
झूठे बेर सोरीं भीलनी के ।
प्रेम प्रीतम सो खावे ।। १ ।।
चीरि खम्ब प्रह्लाद उधारे ।
गज कारण उठी धावे ।। २ ।।
मानपुरी ऐसे साहेब ।
हृदय में बसावे ।। ३ ।।

२५०—पद : राग बिरावर आदिताल

ााव भगति भेट लेति है ।
नक्त मुक्ति सुख देति है ।। धृ०।।
जहाँ देखे वहाँ आप बिराजे ।
घट घट मौंहि चेति है ।। १ ।।
अपरंपार पार नहिं पायो ।
जतो शिव यह चेति है ।। २ ।।
कहत मानपुरी चुप भलि आव ।
बात ग्यान. की यति है ।। ३ ।।

२५१—पद : राग ललित आदिताल

साँची कहो बात आनन्द उर न समात ।।धु०।।

नजरि पसारि देखो जल थल मों ।
भाव बिना आवे नहिं हात ।। १ ।।

नर देहि सो साहिब भेंटा ।
महासुख पायो गुरु साथ ।। २ ।।

मानपुरी आनन्दे डोले ।
रैन दिन ब्रह्म रस खात ।। ३ ।।

२५२—पद : श्री ताल चौताल

जहाँ हों भागौं तहाँ हों देखौ आगे आगे ।
आलि कहाँ कोई भागो वो तो दिसे आगे आगेरी ।।धु०।।

बाँसरी बजावे सब सुद्धो बुद्धी जावे ।
वे तो लाग्या हो आवे कोउ कहाँ कहाँ भागे री ।। १ ।।

येति येति कौन सहे या ब्रिज माहीं कौन रहे ।
दौर दौर बाँहा गहे हमरो कहाँ लागे री ।। २ ।।

कहत मानपुरी प्रभु तारे तुन पतित सब ।
भक्ति भई ऐसी भई भाग्य मारे जागे री ।। ३ ।।

२५३—पद : राग कानड़ा नायकी आदिताल

मगन मगन मेरा ।
निरखि निरखि तन तेरा ।। धु० ।।

सुन्दर रूप अरूप बिराजे ।
घट घट लीन बसेरा ।। १ ।।

रूप न रेख कहाँ कहि गाऊँ ।
अपरम्पार घनेरा ।। २ ।।

२५४—पद : चाल भूपाल खान आदिताल

लागे बान तिहारे।
प्रीतम प्यारे ॥ धृ० ॥
मोह कमठ कर खैंचि नैन सर।
मेरो मन भेदा ढोल बजा रे ॥ १ ॥
घायल कीन्हि बस कर लीनी।
अब कहाँ जाहो मितहा मोरे ॥ २ ॥
मानपुरी स्वामी अन्तर जामी।
नाम अनामी आप दुलारे ॥ ३ ॥

२५५—पद : कॉफी आदिताल

मोरी अँखियाँ मोरी अँखियाँ।
लग गई वासो री ॥ धृ० ॥
अगम अपार अमूरत साईं।
तन मन अटको तासुँ री ॥ १ ॥
आँतन ही लागी सोई तन जानो।
खोली कहुँ अब कासों री ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु अपने जानि के।
लय लई हियरा सों री ॥ ३ ॥

२५६—पद : राग तोड़ी झंपा

आन बसे मोरी अँखियन मो।
अब दुवारिका मो मेरो कोन ज्यावे ॥धृ०॥
लागी छतिया उनकी छतियन सो।
तन मन मेरो विश्राम पायो ॥ १ ॥
बिना नैन देखे बिना कान सुने।
बिना मुख बोले, बिना पग धावे ॥ २ ॥
कहे मानपुरी ऐसे रूप अरूप का।
देखना जी मोरे मन भावे ॥ ३ ॥

२५७—पद : आड़ाना आदिताल

नैना प्रेम सो गलतान।
निरखि निरखि निर्बान ।। ध्रु० ।।
भरि भरि नजरि स्वरूप निहारे।
टप टप चुवत निदान ।। १ ।।
प्रेम पियारे को अन्त न पावे।
ताते रहत भुलान ।। २ ।।
मानपुरी महबूब पियारे को।
किह बिध करहि बखान ।। ३ ।।

२५८—पद : आदिताल तोड़ी

अब नैनन मो पिया बसो री।
पिया बसो मेरे मान खसोरी ।। ध्रु० ।।
निसि दिन गाय प्रभु घर आया।
तन मन मेरो बहुत कसोरी ।। १ ।।
पल भर प्यारो होत न न्यारो।
अब नहि छूटे प्रेम फसो री ।। २ ।।
मानपुरी नट निरखो घट घट।
ताते सुख दुःख सहज नसो री ।। ३ ।।

२५९—पद : बिलावल आदिताल

नैन भर देखी गुलजारी री ।। ध्रु० ।।
नजर पसारी जहाँ तहाँ देखत।
कहा कहुँ बलहारी री ।। १ ।।
एक देखत एक देख सिधारी।
अपनी अपनी तारी री ।। २ ।।
कहत मानपुरी जग गुलजारी।
देखन की गति नारी री ।। ३ ।।

२६०—पद : सारङ्ग आदिताल

नैनन सो नैना लागे हो ।
लागे हो लागे हो लागे हो ।। ध्रु० ।।
नैन की सेन बचन सतगुरु को ।
बूझत है बड़भागे हो ।। १ ।।
पल पल धार धरि छबि निरखत ।
सोवत सो अब जागे हो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु जित तित दोसे ।
प्रीतम के रस पागे हो ।। ३ ।।

२६१—पद : सारंग सावत आदिताल

सो प्यारे तेरे नैनन नेह घना ।
रूप स्वरूप बना ।। ध्रु० ।।
नैनन नेह बरसावे ।
भूलि घर घर अंगना ।। १ ।।
शामसुन्दर पर सब से संवारो ।
तन मन धन जोबना ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु सो लय लागी ।
दिमत जग अपना ।। ३ ।।

२६२—पद : बिहागड़ा आदिताल

मोहन छबि तेरी नैनन बीच खड़ी ।
निरखत घरिय घरी ।। ध्रु० ।।
जित देखो तित और न सूझे ।
द्वैत भाव बिसरो ।। १ ।।
अन्तर बाहेर येकहि देखा ।
कोन के काज करी ।। २ ।।
मानपुरी यह भगति बिरहनी ।
भवसागर उतरी ।। ३ ।।

२६३—पद : राग कानड़ा आदिताल

भर भर नैन निरखा नूर ।
झलख रहा भरपूर ।। धृ० ।।
अगम अरूप सरूप जहाँ तहाँ ।
वोहि निकट वोहि दूर ।। १ ।।
जहाँ देखो तहाँ परगट दिसे ।
घट घट हाल हुजूर ।। २ ।।
मानपुरी कहे ग्यान नजरि सो ।
सूझ्या जगत जहूर ।। ३ ।।

२६४—पद : राग पंचम आदिताल

साई नेना लाज भरे ।
लाज भरे ते आप धरे ।। धृ० ।।
तजि अभिमान चरण चित लायो ।
हरखि हरखि पर काज करे ।। १ ।।
निरलज्य होय येक ब्रह्म ध्यावे ।
ऊँच नीच सिरताज खरे ।। २ ।।
मानपुरी सब पाप जनम के ।
गुरु किरपा छिन माहि झरे ।। ३ ।।

२६५—पद : बिभास ताल सूर फाकता

नैन के नैन दिखावे गुर ।
देख लियो मुख साजन का ।। धृ० ।।
कान के कान बताय देय सुर एका ।
सुनो सबद साजन का ।। १ ।।
काम भयो उनही जन को ।
जिये रामजी कतर साजन का ।। २ ।।
मानपुरी बलि जाऊँ गुरू के ।
जो अमृत ही बरसा जन का ।। ३ ।।

२६६—पद : राग देव गांधार तिताला

अब मोरी लग गयी अँखियाँ लाल।
लागो बिरहन जाल ॥ ध्रु० ॥
लोक लाज तजि भई हो बावरी।
रैन दिना बेहाल ॥ १ ॥
कोई नीको कोई बदो लागो।
मन मानो गोपाल ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु प्रेम प्रीत सो।
आप ही भयो दयाल ॥ ३ ॥

२६७—पद : बिभास ताल सूर फाकता

नैना बैरागी मेरे।
लागे बैना फिरत नाही फेरे ॥ ध्रु० ॥
मोहन जान सुजान सजन से।
लगन लगी बिरहा ने घेरे ॥ १ ॥
अब नहिं छूटे प्रेम की फाँसी।
कोटि उपाय करो प्रभु तेरे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी दरसन कारन।
नैन भये सतगुरु के चेरे ॥ ३ ॥

२६८—पद : राग कल्यान इमन अड़ताल

रोम रोम पिय के रंग भीनी।
तन मन प्रान निछावर कीनी ॥ ध्रु० ॥
बहुत दिन के बिछुरे प्रीतम।
भली ये करी हमरी सुध लीनी ॥ १ ॥
अब तो प्यारो हो तन न्यारो।
ये कही मूर्ति घट घट चीनी ॥ २ ॥
मानपुरी साईं बिसरत नाही।
अपनी प्रेम माल मोहे दीनी ॥ ३ ॥

२६६—पद : जैतश्री आदिताल

इच्छा पूर्ण कीनी हो ।
बस कर लीनी हो ।। धृ० ।।
अगम अपार अखंडित दौलत ।
सो मोहि दीनी हो ।। १ ।।
खोटा खरा नजर नहिं आवे ।
अवगत चीन्ही हो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु करुना सिंधु ।
देत अधीनी हो ।। ३ ।।

२७०—पद : राग आसा आदिताल

अब प्रेम मगन होय नाचो रे ।
साईं के रंग राचो रे ।। धृ० ।।
हरि को नाम जो लेत लाजे ।
सो जन जानो काचो रे ।। १ ।।
अलख खल मों देखो चाहो ।
ज्या सतगुरु को ज्याचो रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी हरि गुण गाये ।
काल सत्ता सो बाँचो रे ।। ३ ।।

२७१—पद : राग देव गांधार आदिताल

प्यारी प्रीत ही मगन भई ।
सुख सो रैन गई ।। धृ० ।।
पिया प्यारे को संग न छोड़े ।
लोक लाज भूल गई ।। १ ।।
या जग माहि बहुत विरहनी ।
दिखी और कई ।। २ ।।
मानपुरी यह भगति विरहनी ।
देखी आज नई ।। ३ ।।

२७२—पद : राग रामकली ताल बिलंदी

सद्रूप साईं का प्यारी।
पल भर पिय लो होत न न्यारी।
तन मन जीवन वारी ।। ध्रु० ।।
मन सोहन छबि जब सों देखी।
सुदि बुदि भूली नारी ।। १ ।।
निस दिन चित्त सो टरत न टारी।
बिसरत नाहिं बिसारी ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु अगम अमूरत।
गुन गावत अब हारी ।। ३ ।।

२७३—पद : राग कानड़ा नायकी अड़ताल

प्यारे तुम बिन यों ही बाला जोबन जाय ।।ध्रु०।।
सब सुधि आवे विरह जनावे।
तलफत रैन बिहाय ।। १ ।।
अब हो जाने अंत लुभाने।
खबरि न लीनी आय ।। २ ।।
मानपुरी स्वामी अंतरजामी।
बिनती सुन चित लाय ।। ३ ।।

२७४—पद : राग कानड़ा नायको आदिताल

प्यारे तुम बिन यो ही।
बाला जोबन जाय ।। ध्रु० ।।
जब सुधि भावे विरह जनावे।
तलब तरे न बिहाय ।। १ ।।
अब हो जाने अंत लुभाने।
खबरि न लीनी जाय ।। २ ।।
मानपुरी स्वामी अंतरजामी।
बिनती सुनो चित लाय ।। ३ ।।

२७५—पद : चाल काफी आदिताल

कोई आनि मिलावो ।
पिय परदेसी प्यारा प्यारा प्यारा प्यारा ।। धु० ।।

पिया बिन जीवन जात अकारत ।
मिथ्या जनम हमारा ।। १ ।।

जो कोई पिय की खबर सुनावे ।
तो पर तन मन वारा ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु आनन्द सिधु ।
जाने जाननहारा ।। ३ ।।

२७६—पद : बिहागड़ा अड़ताल

प्यारे तेरी प्रीत घटती नाही हो ।।धृ०।।

जागत सोवत पल न भूले ।
जित देखो तित माई हो ।। १ ।।

अंतर बाहेर मोहन मूरत ।
फैल रही जग माही हो ।। २ ।।

मानपुरीं प्रभु दरसन दीनो ।
प्रेम मगन हो गाई हो ।। ३ ।।

२७७—पद : कल्यान यमन आदिताल

राखो राखो हो प्रीतम लाज हमारी ।। धृ० ।।

प्रेम पिलाय मगन करि डारी ।
अब तुम हम लेउ सम्हारी ।। १ ।।

लोक लाज तजि भई ये बावरी ।
हम अबला को आस तुम्हारी ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु परोपकारी ।
छिद बाने पर काया नारी ।। ३ ।।

२७८—पद : बिहागड़ा आदिताल

प्यारे तेरे प्रेम मोहि छकाई हो ।
सोवत आनि जगाई हो ।। धु० ।।
माया मोह नजरि नहीं आवे ।
सुन्दर छबि मन भाई हो ।। १ ।।
साँची प्रीति लगी प्रीतम सों ।
झूटी प्रीति भगवाई हो ।। २ ।।
मानपुरी यह भगति बिरहनी ।
दरसन दे समझाई हो ।। ३ ।।

२७९—पद : राग कल्यान इमन आदिताल

बार बार छकावे ।
मगन भई कछु कहत न आवे ।। धु० ।।
प्रेम प्याला भरि मतवाला ।
आप पिये मोहि पिलावे ।। १ ।।
ध्रुपत गावे रैन जगावे ।
हँसि हँसि प्रीतम प्रीत बढ़ावे ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु मोरे मन भावे ।
लागी लगन अब कछु न सुहावे ।। ३ ।।

२८०—पद : ढोला आदिताल

नेहरा जोर बिरहिनी छकी ।
बिरहिनी छकी बिरहिनी छकी ।। धु० ।।
गगन मंडप मों परम पुरुष सो ।
लागि रही टक टकी ।। १ ।।
बाँह पसारि मिलो मेरो सैंयाँ ।
टेक लगाई सखी ।। २ ।।
सुख दुख भूला मन भयो लूला ।
आसा मन साथ की ।। ३ ।।
कहत मानपुरी गुरु परसादे ।
बस्त अगोचर लखी ।। ४ ।।

२८१—पद : राग असावरी अड़ताल

भई मैं अब बैरागिन बौरी।
लागी हरि सों दौरी ॥ धु० ॥
छोड़ी लोक लाज चतुराई।
बंसी सुनि उठि दौरी ॥ १ ॥
धुंडत धुंडत कान्ह रे भेटे।
सुख नहीं जात कहो री ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु प्रगट देखा।
जहाँ तहाँ छाय रहो री ॥ ३ ॥

२८२—पद : मल्हार अड़ताल

पिया बिन घर अँगना न सुहाई।
पावस री लाई ॥ धु० ॥
पल पल प्रीतम बिसरत नाहीं।
पल भरि नींद न आई ॥ १ ॥
दादूर मोर पपीहा बोलत।
कोयल कहत सुनाई ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु दरसन दीजो।
कामिन बहु सुख पाई ॥ ३ ॥

२८३—पद : मल्हार अड़ताल

भीजत मारी कंपत प्यारी।
आग ग ग ग गजति यह विश्व पै भारी ॥ धु० ॥
रिमी झिमी बरसत पवन झकोरत।
दमकत दामिनि निसि अंधियारी ॥ १ ॥
बन बन हेरत पिय पिय फिरत।
इत उत फिरत विरह की मारी ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु बेगि दरस दीजो।
तुम बिन बहुत विकल भई नारी ॥ ३ ॥

२८४—पद : यमन कल्यान ताल तिलँदी

पिया बिन और कछु नहीं मेरा ॥ ध्रु० ॥
झूठी काया झूठी माया ।
झूठा है घर डेरा ॥ १ ॥
जबहि गाया तबहि पाया ।
जब तब घट घट हेरा ॥ २ ॥
मानपुरी कछु कहु कहत न आवे ।
फिर फिर किजो फेरा ॥ ३ ॥

२८५—पद : यमन कल्याण आदिताल

प्रिय बिन नींद न आवे ।
खान पान नहिं भावे ॥ ध्रु० ॥
निरफल जनम प्रेम प्यार बिन ।
समझि समझि पछतावे ॥ १ ॥
लागे सुरत निरत प्रीतम सो ।
और कछु न सुहावे ॥ २ ॥
मानपुरी निस दिन पिय प्यारी ।
सुमिरि सुमिरि गुण गावे ॥ ३ ॥

२८६ - पद : सारंग

हरो मोरी पीर हरो मोरी पीर ।
यहो बलबीर ॥ ध्रु० ॥
रैन दिना मोहे नींद न आवे ।
सूछम भयो शरीर ॥ १ ॥
तुमसो वैद दूसरा नाहीं ।
भवरोगी नही धीर ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु वेगी दरस दीजे ।
मेरो मन भयो फकीर ॥ ३ ॥

२८७—पद : राग कल्याण इमन आदिताल

सुधि हू जब बिछुरे मिलबे की।
तो कौन लिखे किहि को पतियाँ ॥ध्रु०॥
आनि बसो दृग मों पिय प्यारो।
तो भूल गयी गृह की बतियाँ ॥ १ ॥

सुख की कछु बात कहीं नहीं जात।
जो सीतल हुई रहि रहि छतियाँ ॥ २ ॥
कहे मानपुरी प्रभु की अँखियाँ।
प्रभु देखि भई रमिया मतिया ॥ ३ ॥

२८८—पद : चाल सोरट आदिताल

तुम बिन को समझावे हो।
अब को समझावे हो ॥ ध्रु० ॥
तुमसे दुजा और न कोई।
नजरि न आवे हो ॥ १ ॥

विरहिनी का सोने लगाये।
पिया बिना कछुव न भावे ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु अंतर ध्यावे।
तब ही प्रेम-सुख पावे हो ॥ ३ ॥

२८९—पद : राग काफी ताल बिलंदी

प्राण प्यारा नाहीं नियारा माय।
देखा हित चित लाय लाय लाय ॥ध्रु०॥
प्रीतम की सेवा बिन सजनी।
जनम अकारथ जाय जाय जाय ॥ १ ॥

सुन्दर रूप सकल घट माहीं।
दरसन देवे धाय धाय धाय ॥ २ ॥
कहत मानपुरी भगति बिचारि।
जनम सँवारो गाय गाय गाय ॥ ३ ॥

२६०—पद : राग खट आदिताल

म्हारो जिये तुम बिन भारी हो राज ।
बही जाय अबला तारी हो राज ॥धु०॥
दरद दिवानी की तज हो राज ।
तुम बिन दर्द न जावे हो राज ॥ १ ॥
भवसिंधु सो काढ़ो हो राज ।
लागी प्रीति जिनि छोड़ो हो राज ॥२ ॥
अपना बिरद बिचारो हो राज ।
प्रेम प्रीति सो लागो हो राज ॥ ३ ॥
मानपुरी प्रभु जागो हो राज ।
पावन पतित उधारो हो राज ॥ ४ ॥

२६१—पद : राग रासा आदिताल

भूली रे मार भूली ।
भूली भूली भूली ॥ धु० ॥
कि तनक दूर प्रीतम कोड़े ।
चलत चलत भई लूली ॥ १ ॥
पास रहे पिया नजर न आवे ।
धन जोबन सो फूली ॥ २ ॥
कहत मानपुरी जब फिर देखा ।
प्रेम मगन होय झूली ॥ ३ ॥

२६२—पद : राग बिलावल-ताल आदिताल

हा हो आम की डार कोयली बोलत ।
मधुर मधुर सुर नीके ॥ धु० ॥
अगम साईं-देस सुन बीती नाही ।
ताते लागत फीकी रे ॥ १ ॥
अब तो मोर कछु नाहीं भावे ।
गावत गुन उसी की रे ॥ २ ॥
मानपुरी गावत ही गावे ।
दरसन होय पियु के रे ॥ ३ ॥

२६३—पद : चाल सोरट ताल झंपा

बोल पपीहरा तू पिय पिय पिय ।। धृ० ।।

पिय को नाम में मेरा मन भावे ।
तो ही खाउँ वा खाउँ वा धिय धिय धिय ।।१।।

जागन पिय पिय सोवत पिय पिय ।
मो लगो मेरो जिय जिय जिय ।। २ ।।

मानपुरी पिय की लय लागी ।
अपार रिखी किय किय किय ।। ३ ।।

२६४—पद : बिलावल आदिताल

मोरे मितवा मोतन चितवो रे ।। धृ० ।।

तेरे कारन दर्द दिवानी ।
तू दिल मों घर कित वारे ।। १ ।।

मन भाई सब लाज गँवाई ।
निस दिन गावति गीतवा रे ।। २ ।।

मानपुरी साईं जुग जुग जीवो ।
फिर फिर कीजो हितवा रे ।। ३ ।।

२६५—पद :सारंग ताल झंपा

हों तो वारन जाउँ तू आव पियारे ।। धृ० ।।

रैन घटे नहि न तुम बिन प्यारे ।
तलपत है जियरे ।। १ ।।

मग जोवत मारी पलक न लागत ।
नाहि दिसत नियरे ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु दरसन दिखावे ।
नैन करो सियरे ।। ३ ।।

२९६—पद : ताल सारंग सारंग बिलावल अद्धताल

नहि भूले मूरति लाल की ।
तीन लोक प्रति पाल की ।। धृ० ।।
मोहन मूर्ति मो मन भाई ।
फिकिर मिटी जंजाल की ।। १ ।।
लाल भई अब लाल के संगे ।
कछु न चले अब काल की ।। २ ।।
मानपुरी भवसागर तरि गई ।
दासी दीन दयाल की ।। ३ ।।

२९७—पद राग रासा आदिताल

पियरवा प्रेम न पाया ।
राम न गाया वे वे वे ।। धृ० ।।
रूप अरूप स्वरूप अपनो ।
सो बिसराया वे वे वे ।। १ ।।
सोवत सोवत सपना देखा ।
सो मन भाया वे वे वे ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु स्वामी ।
नाहि न जगाया वे वे वे ।। ३ ।।

२९८—पद . आड़ाना आदिताल

अब मुझे सब मिल देहु बधाई ।। धृ० ।।
आवन की लिखी पठई प्रीतम ।
यह देख पतिया आई ।। १ ।।
सुन्दर रूप अनूप पिया को ।
प्रगट रहो सब ठाईं ।। २ ।।
कहत मानपुरी भाग्य जगे अब ।
पाये अगाध गुसाईं ।। ३ ।।

२९९—पद : राग कल्याण इमन ताल बिलंदी

वारि डारो हो लालन पर ।
यह तन मन बार बार ।। धृ० ।।
बहि जात बिरह सागर मों ।
कर गहि कीनी पार पार ।। १ ।।
भली कीनी पिया यह मोरे आवे ।
कहि हौं गर को दार दार ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु तुम्हारी दया सु ।
मिथ्या भयो संसार सार सार ।। ३ ।।

३००—पद : राग बिरावर आदिताल

वारी मोरे सजना मैं तो वारी हो ।। धृ० ।।
प्रेम प्याला मोहि पिलावे ।
अब तो मगन कर डारी ।। १ ।।
अब तो निहाल भई तो दासी वे ।
अब तू तो नाक न्यारी ।। २ ।।
मानपुरी साई अन्तरजामी वे ।
गुन गावत अब हारी ।। ३ ।।

३०१—पद : कालंगड़ा आदिताल

वारि वारि पिया प्रीतम प्यारा ।
वारि वारि पिया प्रीतम प्यारा ।। धृ० ।।
मन हर लीनो मनोहर मेरो ।
छूटी भव बन्धन सो ।। १ ।।
पिया मेरा मैं पिया की दासी ।
एक भई तन मन सो ।। २ ।।
मानपुरी पिया पल पल न भूले ।
लगन लगे चरनन सो ।। ३ ।।

३०२—पद : यमन कल्याण आदिताल

पिया पर वारी वारी वारी ।
तन मुवा बलिहारी ॥ धृ० ॥
रूप अरूप रूप दिखाकर ।
मोहन बस कर डारी ॥ १ ॥
लगन बिहार को छूटत नाहिं ।
बन बन धुंड पुकारी ॥ २ ॥
मानपुरी सतगुरु की कृपा ।
भवसिंधु मो तारी ॥ ३ ॥

३०३—पद : राग मधु माधवी आदिताल

वारी तेरे हा वारी तेरे ।
छेदे भव बन्धन मेरे ॥ धृ० ॥
निर्विकार को स्वरूप ।
दिसे इत उत अनूप ।
जान बूझ मूढ हो रहे रे ॥ १ ॥
आस पास भये निरास ।
चुका अब गर्भवास ।
निस दिन या प्रेम सो छकरे ॥ २ ॥
मानपुरी कहे सार ।
व्यापक प्रभु वार पार ।
गुरु बिन नर भटकत घनोरे ॥ ३ ॥

३०४—पद : विभास आदिताल

पिया कोटि कोटि बलहारी सो ।
वारी वारी वारी रे ॥ धृ० ॥
साँवरी सूरत जब सो देखी ।
बिसरत नाहीं बिसारी रे ॥ १ ॥
मगन भई अब तेरे गुन गावत ।
तन मन भूली नारी रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी भवसागर मों ।
दासी डूबत तारी रे ॥ ३ ॥

३०५—पद : रामकली ताल बिलंदी

जहाँ द्रिष्टि पड़े तहाँ आप खसे।
प्रभु महा दिसे मुख सुन्दर तेरो ॥ धृ० ॥

भाग्य जगो सब पाप भग्यो।
मन लागि गयो सदा शाम सो मेरो ॥१॥

केवल कृष्ण भयो तिहुँ लोका।
तो कौन साहिब सो कौन सो चेरा ॥ २ ॥

कहे मानपुरी गुरु ग्यान सो तासु।
आनन्द भयो मांही धन्य रो ॥ ३ ॥

३०६—पद : राग ललित आदिताल

राम रहो राम कोई कोई•ज्यानत गुलाम ॥ धृ० ॥

अन्तर राम निरन्तर राम।
जन मन दरम तमाम ॥ १ ॥

गुरु की दया भई भ्रांति सबै गई।
अद बेहद घनश्याम ॥ २ ॥

मानपुरी अब ब्रम्हरूप सब।
नाहिन काहू से काम ॥ ३ ॥

३०७—पद : सोरट

आये मेरे जनम जनम के मीता।
राम लछिमन सीता ॥ धृ० ॥

मोसे मूरख तारन कारण।
बोलत भगवत गीता ॥ १ ॥

गरीब नवाज गरीबनवाजो।
आप सरीखा कीता ॥ २ ॥

मानपुरी सतगुरु परसादे।
निसिदिन हरिरस पीता ॥ ३ ॥

३०८—पद : राग बिहागड़ा चौताल

दूरि मत जाना तुज बीच भगवान ।
तू आप पहिचान मत कर झगरा ॥ ध्रु० ॥
खेलि दृग जाग अभिमान को त्याग ।
धरु चरन सतगुरु के छोड़ रगरा ॥ १ ॥
आगी अग्यान की तब बुझै बावरी ।
जब मिले तुझको धरम धगरा ॥ २ ॥
कहत मानपुरी तेरे देह के द्वारका ।
बीच है कृष्ण मत पूज देवरा ॥ ३ ॥

३०९—पद : राग सारंग सावंत आदिताल

क्यों बन बन धुडत साईं ।
साईं हर घट माही ॥ ध्रु० ॥
अलख खलख मों यो कर देख्यो ।
जो दरपन मों छाही ॥ १ ॥
कोई पूरब कोई पछिम ध्यावे ।
गुरु बिन समझत नाही ॥ २ ॥
कहत मानपुरी साँचो साहेब ।
फैल रहै सब ठाईं ॥ ३ ॥

३१०—पद : राग आढ़ाना ताल त्रिलंदी

री माये तेरो पार न पाया ।
चरन कमल चित लाया ॥ ध्रु० ॥
शेष महेश थके सब मुनिजन ।
रइन दिना जसु गाया ॥ १ ॥
मैं अग्यान भक्ति नहिं जानो ।
अब तेरे शरनाया ॥ २ ॥
कहत मानपुरी निज भक्तन पर ।
करुणा फिरि फिरि छाया ॥ ३ ॥

३११—पद : रामकली ताल बिलंदी

अलख अमूरत पार न सिंधु ।
सब दुनिया को जीवन कंदु ।। धृ० ।।
आगे पीछे अन्तर बाहिर ।
रूप धनी को देखो ज्याहीर ।। १ ।।
जल की मछी जल मों डोले ।
ऐसी बतियाँ सबको ही बोले ।। २ ।।
मानपुरी कहत नर ज्याने ।
जे सतगुरु के हात बिकाने ।। ३ ।।

३१२—पद : बंकावली आदिताल

यार पायो नहीं पार ।
पायो नही पार पायो नहीं पार ।। धृ० ।।
पूरब धूंडा पछिम धूंडा ।
धूंडा सब संसार ।। १ ।।
पिय सो भेंटि भय नही कबहुँ ।
झूटे सब सिनगार ।। २ ।।
मानपुरी माई हर घट माँही ।
भटकत फिरत गँवार ।। ३ ।।

३१३—पद : राग जैतश्री आदिताल

साधो न पाये जी पार तुह्मारा ।
नासो भरम हमारा ।। धृ० ।।
अस्तुत करत सकल जन थाके ।
लीला अगम अपारा ।। १ ।।
हम अज्यान तुमको कहाँ जाने ।
जीन जाननहारा ।। २ ।।
कहत मानपुरी गुरु परसादे ।
सार सार विचारा ।। ३ ।।

३१४—पद : विभास ताल बिलंदी

अगम निगम पार नहीं पाया ।
स्वरूप वार पार छाया ।। ध्रु० ।।
अलख अकेला गगन मंडल मों ।
ऊज रंगावत साया ।। १ ।।
आपहि राजा आपहि परजा ।
आप आप मन भाया ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु परसादे ।
नजर न आवे माया ।। ३ ।।

३१५—पद : राग असावरी आदिताल

तुम्हारा नहीं पारावार ।
साईं सिरजन हार ।। ध्रु० ।।
गा अस्तुत करत ।
सकल जन थाके ।
अकथ कियो निरधार ।। १ ।।
निर्गुण ब्रम्ह सगुण बन आयो ।
सहज सबद ओंकार ।। २ ।।
कहत मानपुरी गुरु परसादे ।
देखा सारा सार ।। ३ ।।

३१६—पद : विभास ताल बिलंदी

जगत रूप वार पार रोकड़ा ।
परगट दिसे जो खड़ा ।। ध्रु० ।।
नहि अग्यानी नहिं सग्यानी ।
नहिं भोगी नहिं जोगड़ा ।। १ ।।
नैनन सो न्यारो नहिं होवे ।
निसि दिन तन मन मों खड़ा ।। २ ।।
कहत मानपुरी या जगमाही ।
सहज ब्रह्म सब सो खड़ा ।। ३ ।।

३१७—पद : बिरावर आदिताल

ये हो वार पार सब आपहि दिसे।
अलख निरंजन साईं ॥ ध्रु० ॥
जो कोई तलब दरसन की राखो।
दूर करहु चतुराई ॥ १ ॥
सब सो नीचे हो जब बंदा।
तब दीदार सब ठाईं ॥ २ ॥
मानपुरी साईं हाजर नाजर।
गुरु बिन समझत नाहीं ॥ ३ ॥

३१८—पद : राग बिहार आरुह्या आदिताल

अकथ कथा को वार न पार।
अलख लखे सोइ मति सार ॥ ध्रु० ॥
जब गुरु दियो महा परसाद।
तब सो छूटा वाद विवाद ॥ १ ॥
ना कोई आवे ना कोई जावे।
जहाँ को उपजे तहाँ समाये ॥ २ ॥
या की सुधि बुधि मन भयो थीर।
मेक आत्मा सकल शरीर ॥ ३ ॥
ना कछु हानि न देखो लाभ।
कहत मानपुरी अगम हिसाब ॥ ४ ॥

३१९—पद : राग जैतश्री आदिताल

साहेब देखावे।
देखा सर्व समान ॥ ध्रु० ॥
अलक सलक मों।
खलक अलक मों।
वार पार भगवान ॥ १ ॥
जल थल मांहीं।
दूजा नाहीं।
नासो तन अभिमान ॥ २ ॥

कहत मानपुरी मन भयो निहचल।
पायो गुरु सो ग्यान ॥ ३ ॥

३२०—पद : राग कल्यान यमन आदिताल

निर्गुनिया साहब देखा।
लीन्हे बहुविध भेखा ॥ ध्रु० ॥
अब तो आप सगुनि बन आयो।
जाके रूप न रेखा ॥ १ ॥
नजरि पसारि पसारि निहारो।
नाहि न तेरो लेखा ॥ २ ॥
कहत मानपुरी मगन भयो अब।
भेटा एक अनेका ॥ ३ ॥

३२१—पद : राग जैवंति आदिताल

अब तो पायो पिय बहुरंगी।
रोम रोम रंग रंगी भाई ॥ ध्रु० ॥
आनंदकंद अखंड अभंगी।
अपरमपार निसंगी ॥ १ ॥
इत उत देखि भई मन चंगी।
जित पिय तित अर्धंगी ॥ २ ॥
पिय पिय रटते पिय भई अंगी।
मानपुरी परसंगी ॥ ३ ॥

३२२—पद : राग यमन कल्याण अड़ताल

अंतर की अँखियाँ खोलो।
खोलो खोलो खोलो ॥ ध्रु० ॥
अब घट ब्रह्म येक कर देखो।
प्रेम मगन होय डोलो डोलो ॥ १ ॥
मानपुरी प्रभु चारि खानि मों।
आप ही आप अकेलो ॥ २ ॥

३२३—पद : राग सारंग सावध अड़ताल

सुंदर रूप देखा अगम अरूप ।। धृ० ।।

गुण नहिं अवगुण निरगुण सोई ।
सब रूपन को रूप ।। १ ।।

रंक निवाजि कियो महाराजा ।
सब भूपन को भूप ।। २ ।।

मानपुरी गुण कहाँ लग गावे ।
गुरु बिन जग अंधाकूप ।। ३ ।।

३२४—पद : बिरावर आल्या आदिताल

तुम्हारो रूप स्वरूप अपार ।
का बोलो कछु नाहीं अधार ।। धृ० ।।

शेषादिक ब्रह्मादिक थके ।
कह लगि बरनौं वार न पार ।। १ ।।

जित देखो तित और न कोई ।
हम तुम मिलि कीनो निरधार ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु अगम अगोचर ।
बिन सतगुरु भरमो संसार ।। ३ ।।

३२५—पद : राग सारंग फाकता

वा बलमा के दरस करो री ।
दरस करो फिर पाँय परो री ।। धृ० ।।

बिन देखें मन मानत नाहीं ।
या कारण कर लेवे हेरो री ।। १ ।।

घट घट ब्रह्मा यक पहिचानो ।
गुरु के बचन हृदय मों धरो री ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु प्रगट देखो ।
भव सिंधु छिन माँहि तरो री ।। ३ ।।

३२६—पद : बिलावर आदिताल

क्या बोलौं कोई बोलन हारा।
नाम रूप बिन सहज निहारा ॥ ध्रु० ॥
सब घट पूरन अलख अमूरत।
वार पार नहि अगम अपारा ॥ १ ॥

निर्गुण ब्रह्म नजर नहिं आवे।
पांच रंग सो रहत नियारा ॥ २ ॥

कहत मानपुरी गुरू परसादे।
रूप अरूप विचारा ॥ ३ ॥

३२७—पद : राग धनाश्री अड़ताल

अब मैं का बोलौं का बोलौं मोरी माय ॥ध्रु०॥

गुरु परसाद गुरु पहिचानो।
तन मन गयो हिराय ॥ १ ॥

का कहि बोलौं रूप न रेखा।
कहे बिन रहो न जाय ॥ २ ॥

मानपुरी प्रभु अंतरजामी।
घट घट रहो समाय ॥ ३ ॥

३२८—पद : चाल कानड़ा नायकी ताल रूपक

तुम्हरी चुप की बात।
नाही न समझी जात ॥ ध्रु० ॥

वेद पुराण हम सब पढ़ि देखे।
कछु न आवे हात ॥ १ ॥

रूप न रेख अमूरत साईं।
जाके मात न तात ॥ २ ॥

कहत मानपुरी मेरे मन मानी।
सतगुरु दीनानाथ ॥ ३ ॥

३२६—पद : राग सोरठ आदिताल

चुप कर चुप कर चुप कर ।
किस को देना रे उरहना ।। धृ० ।।
दुःख सुख क्या किन दिना ।
किह को इतमन मों धरना ।। १ ।।
कांटे फूल एक बिरछ न मो ।
बिरछ नजर मो करना ।। २ ।।
मानपुरी दुरजन सुरजन सो ।
हँसि हँसि कर दिन भरना ।। ३ ।।

३३०—पद : राग शंकराभरण आदिताल

अब भजन लील। अब गति कहाँ लगि बरनो ।
मो मति थोरी रूप बना ।। धृ० ।।
अंग अंग छबि अधिक बिराजे सुन्दर रूप अपार बना ।
जो जाने सोही पहिचाने ठेर ठेर जग जीवना ।।१।।
रोम रोम रमि रहो अमूरत सहज मुकत निरबंधना ।
ताके रंग रंगे जे प्राणी हिलि मिलि काजु करे अपना ।।२।।
येक अनेक भेष बहु तेरे तू निदान एके सजना ।
मानपुरी परसाद गुरू को थोरि थोरि चाखे रसना ।।३।।

३३१—पद : जैतश्री आदिताल

बंदा कहाँ लो गावे गीत ।
साहेब आप अतीत ।। धृ० ।।
साहु चोर पर नजर सारखी ।
देखी उलटी रीत ।। १ ।।
हौं छोड़ो प्रभु छोड़त नाहीं ।
को जाने यह प्रीत ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु समझायो ।
अब कहाँ जै हो मीत ।। ३ ।।

३३२—पद : यमन कल्याण आदिताल

हर दम साहेब जपना ।
दुनिया सपना मपना ।। ध्रु० ।।
अंतकाल मरने के अवसर ।
कोई नही अपना अपना ।। १ ।।
जो आवे सो रहे न कोई ।
बाकी दिन भरना भरना ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु को ध्याव रे ।
जीवंत ही मरना मरना ।। ३ ।।

३३३—पद . राग बंगला ताल धुवा चंपक

घट ही मों साईं ।
जाने कोई जाननहारा ।। ध्रु० ।।
देखि स्वरूप मगन भयो मनवा ।
नासो भरम हमारा ।। १ ।।
गुन अवगुन भूले तन मन को ।
लागे प्रेम पियारा ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु अंतर बाहेर ।
सतगुरु काज संवारा ।। ३ ।।

३३४—पद : राग कॉफी ताल विलंदी

सुखदाई री सांवरो सुरबंग ।
जहाँ देखो तहाँ रंग ।। ध्रु० ।।
घरी घरी आवे मोवत जगावे ।
छांडत नहि संग ।। १ ।।
सनमुख जावे मन हरि लेवे ।
देवे प्रेम अभंग ।। २ ।।
मानपुरी साईं हरि घट माही ।
छूटो मदन मतंग ।। ३ ।।

३३५—पद : असावरिल ताल बिलंदी

अब प्रिय प्यारे दरस दियो री ।
प्यारे दरस दियो री ।। ध्रु० ।।
निरगुण रूप नजरि भरि देखो ।
सीतल नैन भयो री ।। १ ।।
निसिदिन प्रीति लगी प्रीतम सो ।
सब दुख बिसरन यों री ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु अंतरजामी ।
सब घटि जानि लियो री ।। ३ ।।

३३६—पद : आड़ाना ताल बिलंदी

जी आ जी देखा राजाधिराजा ।
सब घट आप बिराजा ।। ध्रु० ।।
धुंडत धुंडत सतगुरु पायो ।
भक्त वत्सल महाराजा ।। १ ।।
अपनो ग्यान ध्यान मोहे दीन्हा ।
खिन मों दास निवाजा ।। २ ।।
मानपुरी आनंदे डोलै ।
कीन्हा तन मन ताजा ।। ३ ।।

३३७—पद : रासा आदिताल

हर घट माहि दूजा नाहिं ।
ग्यान नजर सो देखो रे ।। ध्रु० ।।
येक अनेक अनेक येक है ।
लीन्हें बहुविध भेख रे ।। १ ।।
कहुँ भयो साहेब कहुँ भयो सेवक ।
अंत येक को येक रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी सो नर समझे ।
जो कोई करत बिवेक रे ।। ३ ।।

३३८—पद : यमन कल्याण रूपक ताल

घट घट बेगन बोले ।
अंतर अपनो नहिं खोले ।। धृ० ।।

ग्यान ध्यान की बाता सुन सुन ।
प्रेम मगन होय तन डोले ।। १ ।।

आपहि लेवे आपहि देवे ।
आपहि आवे अनमोलो ।। २ ।।

मानपुरी सुख दुख बराबर ।
नाहिं ऊना हरि तोरे ।। ३ ।।

३३९—पद : यमन कल्याण आदिताल

सब घट तुहि तुहि मैं ना ।। धृ० ।।
अंतर बाहेर एक निरंजन ।
शाम सुन्दर रंग भीना ।। १ ।।

जीव शिव को भेद येक है ।
समझी जिय की सेना ।। २ ।।

कहत मानपुरी बिन गुरु जीना ।
अंजुरि नीर रहेना ।। ३ ।।

३४०—पद : बंगाल अड़ताल

हर घट हाजिर नजर यार ओ ।। धृ० ।।

अलख खलक मों भेद न दूजा ।
देखा यक कंकार वो ।। १ ।।

बहु रूपी बहु स्वांग नचावे ।
जामे जाननहार वो ।। २ ।।

कहत मानपुरी गुरु परसादे ।
सुफल भयो संवसार वो ।। ३ ।।

३४१—पद : माल श्री आड़ाताल

पीहरवा अंतर बाहेर बुझा बुझारे ।।धु०।।
जित देखो तित आप ही दीसे ।
नजर न आवे दूजा रे ।। १ ।।
आपहि भगत आपहि देवा ।
आप करत है पूजा रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी अलख खलक सो ।
गुरु अंजन सो सूझारे ।। ३ ।।

३४२—पद : बिहागड़ा अड़ताल

अगम अरूप दिसत नाही ।
भटकत लोगु लुगाई ।। धु० ।।
आप आपको ढूंढत डोले ।
आप छिपा जग माही ।। १ ।।
अपनो रूप आप मो निरखो ।
जो दरपन मों छाँही ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु परसादे ।
देखा जन बन साई ।। ३ ।।

३४३—पद : यमन कल्याण आदिताल

देखो री अंतर जानी ।
अलख अमूरत ग्यानी ।। धु० ।।
नाहि न वाके ठोर ठिकाना ।
नाहि न रूप निशानी ।। १ ।।
जहाँ कछु नहि तहाँ सब देखा ।
बोलत अनहद बानी ।। २ ।।
कहत मानपुरी बात गुरु की ।
जिने जानी तिन मानी ।। ३ ।।

३४४—पद : सोरट ताल झंपा

दिसे रूप निज झल झल।
रूप रेख नहीं मल मल ।। ध्रु० ।।
हले चले नही आवे न जावे।
सो नहीं भू पल पल ।। १ ।।
नजर सो बोध होत नही कबहुँ।
पायो ग्यान को फल फल ।। २ ।।
कहत मानपुरी निज सुख चाखो।
लागी लगन मोही भल भल ।। ३ ।।

३४५—पद : बंकाधली आदिताल

मै वारि जाऊँ, मेरो मन कहे बस कीन।
हौ अबला आधीन ।। ध्रु० ।।
हौ जानौ तुम मोहि कछु दे हौ।
प्रीत लगा घर लीन ।। १ ।।
जान परे तुमरे मनमोहन।
तुमसे को परवीन ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु अंतर बाहेर।
सतगुरु या सुख दीना ।। ३ ।।

३४६—पद : काफी आदिताल

मानस जन्म दुहेला।
क्या भूला देखि तबेला ।। ध्रु० ।।
जिस माया का गरब करत है।
संग न जात अधेला ।। १ ।।
या देही परमार्थ करले।
अगम पंथ को मेला ।। २ ।।
कहत मानपुरी चेत सबेरा।
हो सतगुरु को चेला ।।३ ।।

३४७—पद : जैतश्री आदिताल

मेरो मन मनही मों समझो ।
मनहि मों समझो ॥ ध्रु० ॥
आयो यह संसार हाट मों ।
आप अपन बन जो ॥ १ ॥
आपको आप निरंतर देखो ।
देखत हि लरजो ॥ २ ॥
कहत मानपुरी गुरु परसादे ।
मन ही मन उपजो ॥ ३ ॥

३४८—पद : राग सारंग सावत आदिताल

मन ही मँझार ।
भेंटो मीत हमार ॥ ध्रु० ॥
धुंडत धुंडत चार जुग बीते ।
कहुँ न पाये पार ॥ १ ॥
तन मन माहिं समरथ साईं ।
देखो बारंबार ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु अंतर बाहेर ।
सतगुरु कियो निरधार ॥ ३ ॥

३४९—पद : चाल गौरी आदिताल

साईं भाव सो मिलि जाय ।
मिलत मिलत मिलि जाय ॥ ध्रु० ॥
जप तप करत भरम बहु पाटे ।
कोई नहीं दे समझाय ॥ १ ॥
प्रगट आप निरंजन खेलो ।
घट घट रहो है समाय ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु तनमन माहीं ।
सतगुरु देत जताय ॥ ३ ॥

३५०—पद : चाल काफी आदिताल

आवसो तन मनुआ पियापर वारौं हो ।। ध्रु० ।।
और कछु पिया लायक नाहीं ।
कैसे प्रीति बढ़ाऊँ ।। १ ।।
अब बड़ी छोड़ी कुल लाज ।
रस बस कियो है सनवा हो ।। २ ।।
जब ही जाने तब ही माने ।
मेरो मन भयो है मगनुवा हो ।। ३ ।।
मानपुरी प्रभु हर घट माही ।
गुरु बिन उमजत नाही ।। ४ ।।

३५१—पद : राग विराघर आल्हैया आदिताल

मनुवा भाव भगति बिना मिथ्या जीवन ।
नाम धनी को धोक ।। ध्रु० ।।
समझत ना समझावत डोले ।
हँसते हैं त्रैलोक ।। १ ।।
आसा छोड़ निरासा होना ।
तजि दुख हो निरदुख ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु परसादे ।
पावेगो संतोख ।। ३ ।।

३५२—पद : राग सोरट

अरजूं, मो की बात कहुँ कहुँ कहुँ ।
परात्पर सुख लेऊँ लेऊँ लेऊं ।। ध्रु० ।।
नाहीं वार पार गुन अवगुन ।
प्रेम मगन होय चिरउं रउं रउँ ।। १ ।।
रूप अरूप सदा निरमल है ।
देह-कल्पना दउं दउं दउं ।। २ ।।
कहत मानपुरी एक भाव सो ।
चरन गुरु के गहुँ गहुँ गहुँ ।। ३ ।।

३५३—पद : राग श्याम कल्यान झब रूपक ताल

मनुवा छोड़ दे भव भ्रम।
क्यों भूला निज धर्म।। धु० ।।
नाही देह विदेह अमर।
लागत नाहिं कर्म ।। १ ।।
नाना देव मनावत डोले।
नाहिं न तोको सर्म ।। २ ।।
'मानपुरी' सतगुरु परसादे।
पायो अपना मर्म ।। ३ ।।

३५४—पद : राग बीभास ताल सूर फाक्ता

भागो री भव भ्रम भागो।
हरि रस मीठो लागो ।। धु० ।।
माया मोह नजर नहीं आवे।
ग्यान सदोदित जागो ।। १ ।।
तन मो तलवरहि नहीं सजनी।
सहज राग अनुरागो ।। २ ।।
मानपुरी सबही मन मानो।
प्रेम गुरू मो लागो ।। ३ ।।

३५५—पद : नट ताल रूपक

मनोहर ने मन मोहि लियो।
जु लयो सु लयो, सु लयो हि लयो ।।धु०।।
दरस दियो जु दयाकर मोही।
दियो सु दियो सु दियो हि दियो ।। १ ।।
अब मान गुमान सदा जिय को।
जु गयो सु गयो सु गयो हि गयो ।। २ ।।
मानपूरी जब ग्यान भयो।
जु भयो सु भयो सु भयो हि भयो ।। ३ ।।

३५६—पद : आसा आदिताल

मन मगन हुआ वा थैया।
गावत वेनु बजैया ॥ धृ० ॥
कीनी दया प्रभु मोरे घर आये।
बिरहिनी लेत बलैया ॥ १ ॥
लागी लगन अब सुख दुख भूखा।
सब घट राम रमैया ॥ २ ॥
कहत मानपुरी जारिखान मां।
नाचत बाल कन्हैया ॥ ३ ॥

३५७—पद : यमन कल्याण आदिताल

मन रे गुसैया घट घट आप है।
बिन सुमरन सब जाप है ॥ धृ० ॥
गुरु बिना अलख लखो नहीं जावे।
तन मन धन संताप है ॥ १ ॥
केवल ब्रह्म जहाँ तहाँ पूरन।
अनहद अलापत है ॥ २ ॥
मानपुरी निश दिन गुन गावत।
गावत गावत हर दम जाप है ॥ ३ ॥

३५८—पद : राग गोड सारंग आदिताल

मन।। तू राम सखा करले रे।
गुरुचरनन चित दे रे ॥ धृ० ॥
यो संसार रैन को सपनो।
अगम बस्त लखि ले रे ॥ १ ॥
खटपट पाय गयो सूखो।
अजपा ज्याप जपिले रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी एक भाव सो।
सब सो हिलि मिलि ले रे ॥ ३ ॥

३५९—पद : बिभास आदिताल

गावे मन मंगल भावे ।
बलि बलि जावे ॥ ध्रु० ॥
सतगुरु पायो मन समझायो ।
अब कछु नजरि और नही आयो ॥ १ ॥
सतगुरु साईं बिसरत नाही ।
चरण धोय धोय सीस चढावे ॥ २ ॥
मानपुरी अब भये सब ताते ।
ताल मृदंग बजावे ॥ ३ ॥

३६०—पद : रागकी खणिताल ध्रुवा चंपक

साधो मोरे मन मोहु बर होरे ॥ ध्रु० ॥
जासो उरन होत गुरु से ।
दिसे उपाव नही रे ॥ १ ॥
गुरु चरनन पर काया वारो ।
सो तो झूट कही रे ॥ २ ॥
देत खरा ताको खोट दिजे ।
सो कैसे होत हीरे ॥ ३ ॥
मानपुरी प्रभु पतित उद्धारण ।
तेरे सरण गई रे ॥ ४ ॥

३६१—पद : बिलावल

माया सो मन लागि रहो रे ।
भव सागर सो जात बहो रे ॥ ध्रु० ॥
आदि अंत की सुद बिसराई ।
साँच छोड के झूठ गहो रे ॥ १ ॥
मेरो तन मेरो धन करि करि ।
प्रेम पदारथ नहिं लहो रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी गुरु परसादे ।
घरिये घरिये सुख होत महो रे ॥ ३ ॥

३६२—पद : राग बिरावर आदिताल

मन मूरख जनम सोवत है हो।
फतरो सो चित लावत है हो।। ध्रु० ।।
अपनी सुधि अपना कोई नाँहि।
औरन को समझावत है हो।। १ ।।
करि करि कर्म भर्म में भूले।
मुकति मरे बतावत है हो।। २ ।।
कहत मानपुरी गुरु के बालक।
प्रेम पियाला पावत है हो।। ३ ।।

मन-प्रबोध।

३६३—पद : ताल बिलंदी असावरी

मनुवा मगन कियो मोरे पारे।
मोसे पतित उधारे।। ध्रु० ।।
बहुत दिन के बिछुरे प्रीतम।
सोइ ता आज पधारे।। १ ।।
हम बन्दे तुम साहब साँचे।
कीन्हे काज हमारे।। २ ।।
मानपुरी प्रभु अंतरजामी।
अब कैसे होत हो न्यारे।। ३ ।।

३६४—पद : राग सारंग आदिताल

देख मन अपनो प्रेम प्रकाश, जरे मरे नही जल में बूड़े।
रकत रेस नही माँस।। ध्रु० ।।
निर्मल रूप जहाँ तहाँ पूर, निर्विकार अविनाश
वेद पुराण पार नही आवे, अपरंपार विनास।। १ ।।
नहिं न रूप रेख कुल जाके, निर्गुन नाम अभास।
साधु संत महामुनि गावे, जरा मरन नहि वास।। २ ।।
मूल डाल फल फूल न जाके, उपमा दिजे काज।
मानपुरी प्रभु अगम अगोचर, माया मोह उदास।। ३ ।।

३६५—पद : नट ताल रूपक

छोड़ी जातपन मगन भयो मन ।
राम रूप जन जानि परे है ।। ध्रु० ।।
आपहि आप यहि सब जाप ।
कटे सब पाप आनन्द भयो ।। १ ।।
एक अनेक भये सब बेका ।
कियो रे विवेक अलख सरे है ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु आप तुही सब ।
आप भये कलिकाल डरे है ।। ३ ।।

३६६—पद : कल्याण यमन आदिताल

मेरा मन मोहारे मोहा ।
हरि सु लागो नेहा नेहा ।। ध्रु० ।।
कहा कहो इस हरि के प्रेम को ।
बरखत है मेहा मेहा ।। १ ।।
अगम अरूप सदा सम्पूरण ।
नाहीं नम्र देहा देहा ।। २ ।।
कहत मानपुरी यह हरि की प्रीति ।
पायो नहीं छोहा छोहा ।। ३ ।।

३६७—पद : राग सारङ्ग सावत आदिताल

मन चाहत है तुमको दिन रैनीजी ।
वेगि मिलो मुझसो ललना ।। ध्रु० ।।
जोवन जात कछु न सुहावत ।
तिहारी सों मोही प्यारो ललना ।। १ ।।
कासों कहु दुःख ऐसो भयो ।
जु बिना मिलबे भुजको ललना ।। २ ।।
कहत मानपुरी ललना गलना तब जाय ।
जु होय तुमसो मिलना ।। ३ ।।

३६८—पद : सारंग गौड़ आदिताल

अब तुम राम सुमरन बौरे ।
राम स्मरण मन बौरे ।। ध्रु० ।।
यहाँ तू आयो कौन काम को ।
वहाँ तू कौन हतो रे ।। १ ।।
अपनो मो संसार दिखावे ।
तेरो कौन सगो रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी तीनी बीते ।
केस भये सब धोरे ।। ३ ।।

३६९—पद : राग इमन कल्यान मेन धुवा चंपक

मनवा यह जस लेना रे ।
गुरु पद चित देना देना ।। धु० ।।
बिसरे ना गुरु नाथ हमारे ।
नयन के नयना नयना रे ।। १ ।।
अंग अंग सीतल भयो सुनि सुनि ।
सतगुरु के बैना बैना रे ।। २ ।।
मानपुरी माईं हर घट माही ।
बोलत है मैना मैना रे ।। ३ ।।

३७०—पद : राग कल्यान इमन आदिताल

साईं मनवाछा कियो मोही ।
प्रेम को प्याला पिलायो ।। धृ० ।।
लोक लाज कुल कानि गँवाई ।
जहाँ रे नेह लगायो ।। १ ।।
मगन भई अब सब दुख भूला ।
आपको आप लखायो ।। २ ।।
मानपुरी माईं मेरो मन लीन्हों ।
जगमों ब्रह्म बतायो ।। ३ ।।

३७१—पद : राग कल्यान यमन आदिताल

मन मूरख जनम गमायो रे।
गुरु मुख नाहीं भयो रे॥ धृ०॥
अंतर घट की खबर न लीनी।
तोहे कोन भुरायो रे॥ १॥
छिन छिन यों तन का लगि राखे।
साहेब नाहीं भिझयो रे॥ २॥
मानपुरी कहे अमृत छोड़ा।
बरजत बिख अँचयो रे॥ ३॥

३७२—पद : चाल कानड़ा नायकी ताल रूपक

मनुवा मन ही माँहि उदासी।
गुरुचरनन को निवारी मी॥ धृ०॥
मन ही मथुरा मन ही मो कासी।
मन ही मो ब्रजबासी॥ १॥
मन की बात कही नही जात।
मन की मन परकासी॥ २॥
मानपुरो मन मगन भयो अब।
मन भावे अविनासी॥ ३॥

३७३—पद : राग दरबारी कानड़ा ताल झंपा

सुन सुन बे मन मूरख मेरे।
संसार मो क्या गलतान है रे॥ धृ०॥
आँखें दिल की खोल निगाह कीजे।
कला सून्य मो ऐन निर्बान है रे॥ १॥
तेरा घर कहाँ तेरा बार कहाँ।
तुझे कछु भी मन मो ग्यान है रे॥ २॥
कहे मानपुरी जाय फिर पकर।
दुनिया का झूठ अभिमान है रे॥ ३॥

३७४—पद : कानडा नायकी आदिताल

मनुवा खेले चौगान ।
गगन मंडल मैदान ।। ध्रु० ।।
तीन पाँच मिल खेलन लागे ।
इन मो आप सुजान ।। १ ।।
जित जावे तित ही सुख पावे ।
देखत सर्व समान ।। २ ।।
मानपुरी मन की मन जानो ।
मानत नाहीं अजान ।। ३ ।।

३७५—पद : काफी आदिताल

मेरो मनुवा मेरो मनुवा ।
कोई समझावो रे ।। ध्रु० ।।
मनुवा संग बहु दुःख पायो ।
सुख की बात सुनावो रे ।। १ ।।
भटकत फिरत ठौर नहीं पावे ।
सूधो पंथ बतावो रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी सतगुरु साईं ।
मन को भूल लखावो रे ।। ३ ।।

३७६—पद : राग परज आदिताल

भोले मन स्मर ले हरि नाम ।
स्मर ले हरि नाम ।। ध्रु० ।।
जनम ऐसो फिर न ग्रेहो ।
करि ले अपनो काम ।। १ ।।
छाँड़ि र व हरि नाम ।
सुमिर ले हरि नाम वो ही सुन्दर श्याम ।। २ ।।
कहत मानपुरी प्रकट जित नित ।
राम की सो राम ।। ३ ।।

३७७—पद : बिहागड़ा अड़ताल

भूला मन मूढ कोई समझावो रे।
आवरे आवरे आवरे ॥ धृ० ॥
जो कोई मेरो मन समझावे।
यो मन ताहे चढ़ाव रे ॥ १ ॥
और बात मोहे भावत नाहीं।
चुप की बात सुनावो रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी अलख नगर को।
सूधो पंथ बताओ रे ॥ ३ ॥

३७८—पद : बिहागड़ा आदिताल

यह मन मूरख आप न संमझे।
औरन को समझावे ॥ धृ० ॥
हरि को रूप नाम नहि देखे।
लोगन को दिखलावे ॥ १ ॥
मान गुमान छोड़ नही देवे।
या कारण दुख पावे ॥ २ ॥
मानपुरी भगवन्त भजन बिन।
फेर फेर पछितावे ॥ ३ ॥

३७९—पद : रामकली ताल बिलंदी

कछु न सुहाय सैंया मन भावे।
पायो हे अब प्रेम पियारा ॥ धृ० ॥
मगन भई सुख कहत न आवे।
रामकली जब गाया ॥ १ ॥
घरि घरि आवे सोवत जगावे।
नैन सो नैन मिलावे ॥ २ ॥
मन हरि लेवे दरसन देवे।
चुप की बात सुनावे ॥ ३ ॥
मानपुरी प्रभु अगम अगोचर।
बिन कर बीन बजावे ॥ ४ ॥

३८०—पद : राग रामकली आदिताल

सांईं मन भावे रैन जगावे ।
नेह लगावे धरि धरि ।। ध्रु० ।।
निसदिन दासी चित्त उदासी ।
प्रेम की फाँसी परि परि ।। १ ।।
होतो वारि को प्रीति पार को ।
आप सारिखी करि करि ।। २ ।।
मानपुरी पद पायो बेहद ।
ताते भव नदी तरि तरि ।। ३ ।।

योगपरक

३८१—पद : आसा अदिताल

शिव जोगी घालत फेरा ।
नहीं कछु में तेरा ।। ध्रु० ।।
भाव भगति बिन जनम् गँमाया ।
करि करि मेरा मेरा ।। १ ।।
पूर्ण ब्रह्म जहाँ तहाँ देखा ।
जाको सकल उजियारा ।। २ ।।
मानपुरी परमारथ कारण ।
होत सतगुरु को चेरा ।। ३ ।।

३८२—पद : असा वरील बिलंदी

अब मैं जोगिन भाली भोली ।
बात न आवे बोली ।। ध्रु० ।।
ग्यान मेखला शांति टोपी ।
सोहे आनंद झोली ।। १ ।।
परमार्थ के मुद्रा कानन ।
भाव भगत की सेली ।। २ ।।
कहत मानपुरी लोक लाजत जी ।
मांगो भीक अमोली ।। ३ ।।

३८३—पद : तोडी आदिताल

यह दुनियाँ माँहि देव ।
साधु जानत हैं भेव ।। धृ० ।।
वेद पुराण सदा गुण गावत ।
पावत नाहीं लेव ।। १ ।।
चंचल मन निहचल नहीं होवे ।
संत संग करि लेव ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु दरसन कारण ।
करिये गुरु की सेव ।। ३ ।।

३८४—पद : कालंगड़ा

घर घर जोगिया घालत फेरी ।
भिक्षा जीवन मैया मोरी ।। धृ० ।।
जग जुग जोगी दरसन कारण ।
राखत आस घनेरी ।। १ ।।
भुगति मुगति स्वरूप परिपूरण ।
जब किरपा होय तेरी ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु परसादे ।
बस्त अगोचर हेरी ।। ३ ।।

३८५—पद : राग गौरी आदिताल

घर घर जोगिया अलख जगावे ।
निसि दिन धुरपद गावे ।। धृ० ।।
रूप न रेख घट घट मों ।
अनहद बीन बजावे ।। १ ।।
सहजई आवे सहजई जावे ।
सहजई सहज समावे ।। २ ।।
कहत मानपुरी ऐसा जोगी ।
बिन गुरु नजर न आवे ।। ३ ।।

३८६—पद : राग रामकली आदिताल

गगन मंडल में देखा एक जोगी।
जोगी निज पद भोगी॥ ध्रु०॥
आवे न जावे मांगे न खावे।
जोगी रहत अरोगी॥ १॥
माला न मुद्रा सींग न सेली।
जोगी आप बिजोगी॥ २॥
मानपुरी कहे निरगुन जोगी।
लीला सगुनी शोभी॥ ३॥

३८७—पद : आड़ाना आदिताल

मुद्रा खेचरि लागी।
लागी लागी भय भागी॥ ध्रु०॥
कोन जाने अंतर की तुम बिन।
निसि बासर जागी॥ १॥
दिन दिन नेह सवावो बाढ़े।
तन मन बैरागी॥ २॥
मानपुरी प्रभु अगम अगोचर।
बूझत बड़ भागी॥ ३॥

३८८—पद : सारंग सावत आदिताल

अब तो भूली सब चतुराई।
सतगुरु जुगति बताई॥ ध्रु०॥
जित देखो तित प्रेम पियारो।
दीसत है सुखदाई॥ १॥
जागत सोवत ठाड़े बैठे।
सहज समाधि लगाई॥ २॥
मानपुरी कहे भव भ्रम नासी।
निस दिन बजत बधाई॥ ३॥

३८९—पद : बिलावल आदिताल

अब तुम कछु पूछे दिल जानी रे।
आप लखे सोई ग्यानी रे ॥ धृ० ॥
पंडित खंडित बात सुनावे।
सूधी बात भूलानी रे ॥ १ ॥
सब जीवन को जीव एक है।
नाहीं रूप निसानी रे ॥ २ ॥
मानपुरी सतगुरु परसादे।
बीलत अनहद जानी रे ॥ ३ ॥

३९०—पद : बिहागड़ा अड़ताल

सहज को सहजे सहज लखो।
सहजै चित अटको ॥ धृ० ॥
सहजै सहज जहाँ तहाँ भरमो।
सहजे सहज थको ॥ १ ॥
सहजे सहज परम पद पायो।
सहजे सहज बको ॥ २ ॥
मानपुरी सहजे सतगुरु के।
प्याला प्रेम छको ॥ ३ ॥

३९१—पद : राग बरूवा आदिताल

येक येकी होय निदान।
दुनिया में ज्यान अज्यान ॥ धृ० ॥
अकथ कहानी कोई न जाने।
जानत है चतुर सुजान ॥ १ ॥
भव सिंधु में मन मुख डूबे।
गुरु मुख लोक भये मस्तान ॥ २ ॥
मानपुरी सतगुरु के आगे।
नाचत है धरि धरि कान ॥ ३ ॥

३६२—पद : सोरट ताल झंपा

बालमा मोरे हम है तोरे।
तुम बिन या घट घट मो को रे ।। ध्रु० ।।
तू ही देव तुही भगत तुही मन बसो रे।
तुही पुन तुही पाप तुही रहो रे ।। १ ।।

तुही राव तुही रंक तुही बूड़ तरो रे ।।
तुही जीव तुही सिव तुही रहो रे ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु आज भव बंधन छोड़े।
हम तुममें, तुम हममें, या बिध पखोरे ।।३।।

३६३—पद : परज आदिताल

तू तूभी तू भी तू बोल।
हरखि हरखि बन डोला ।। ध्रु० ।।
देख तमासा ब्रह्म बाग को।
फूले फूल अमोला ।। १ ।।

तुही बाग बाग तुझ माहिं।
अंतर के पट खोला ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु आप आपमों।
निस दिन करत कलोला ।। ३ ।।

३६४—पद : राग गौरी ताल सूर फाकता

नाहि आप ऊँच व नीच।
खेलत है दोनों के बीच ।। ध्रु० ।।
आज अमर प्रभु जुग जुग जीवे।
मरते मूरख बिन मीचा ।। १ ।।

आपहि गावत आप बजावत।
आप नचावत सकल सरीरा ।। २ ।।
कहत मानपुरी नजरी न आवे।
या कारण जैये गुरु तीरा ।। ३ ।।

३६५—पद : राग बिलावल आड़ाताल

आपको आप बिच्यारत नाहीं ।
उत्तम जन्म सँवारत नाहीं ।। धृ० ।।
बिख को खावे अमर भयो चाहे ।
काम क्रोध सो रहे नाहीं ।। १ ।।
आप आप सुखी, जग भरमित डोले ।
तन की सुधि मन डारत नाहीं ।। २ ।।
कहत मानपुरी दाव बनो है ।
गुरु चरनन परत नाहीं ।। ३ ।।

३६६—पद : बिभास आदिताल

साईं आपको आप जगाव ।
मैं पन बिसराव ।। धृ० ।।
करि करि कर्म भर्म बहु बाढ़ो ।
फेरि न ऐसो दाव ।। १ ।।
खोटा खरा भरा जिन माँही ।
उर्साह सो चित लाव ।। २ ।।
मानपुरी सब घट ध्यावे ।
सहज मिले सत भाव ।। ३ ।।

३६७—पद : राग मालश्री आदिताल

जग गुलजारी वे जित देखो तित लाल ।। धृ० ।।
तीन लोक फुलवारी फूली त्रिगुण तीनों अंग ।
चाँद सूरज नवलख तारांगण ।
पंच फूल पंच रंग ।। १ ।।
फूल फूल मों भात है जी ।
फूले फूले अनंत ।
बलिहारी वा फूल की, जो सूंगे संत महंत ।। २ ।।
मन भंवरा तृप्ति भयो जी, चरण कमल की वास ।
मानपुरी सतगुरु परसादे, दिन दिन लेत सुवास ।।३।।

३६८—पद : राग हमीर कल्याण ताल सूर फाकता

मृग नाभि सुगन्ध भरे भटके।
बन मों तृण सूंघत चित्त उदासी ।। धृ० ।।
घट मों नट आप बिराजत है।
सुध्धी लेत न मूर्ख बुध्धी विनासी ।। १ ।।
देह के देव को भवन जाने।
तो कैसी कटेगी तेरी जम फाँसी ।। २ ।।
कहे मानपुरी गुरु ग्यान बिना।
सदा मीन मरे जल माहि पियासी ।। ३ ।।

३६६ - पद : राग काफी आदिताल

केता समझाऊँ।
समझे नाम न मेरा ।। धृ० ।।
बार बार हो कहाँ ले सिखाऊँ।
मानत नही छछोरा ।। १ ।।
कहो करे नही आप बिच्यारे।
भाग्य फिर भंगोरा ।। २ ।।
कहत मानपुरी गुरुमुख होना।
तब मन होवेगा तोरा ।। ३ ।।

४००—पद : रामकली चलंदी ताल

लागो ध्यान पंचवा तेरा।
चरन कमल मन मधुकर मेरा ।। धृ० ।।
भगत जगत में तेरे गुन गावे।
पूरव परसादे अमर पद पावे ।। १ ।।
तीन लोक मो फिरत दुवाई।
तोरी महिमा मोसे कही न जाई ।। २ ।।
भाव भक्ति बिन जनम गंवाया।
मानपुरी तेरे शरन आया ।। ३ ।।

४०१—पद : बिहागड़ा अड़ताल

मगन भई री सब जग ब्रह्म भई ।। धृ० ।।

जनम जनम की आशा तृष्णा ।
सो अब भगि गई ।। १ ।।

दीन दयाल दया करि मो को ।
मोहन माल हुई ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु बात तिहारी ।
अब हो जान लई ।। ३ ।।

४०२—पद : आड़ाना आदिताल

हुन मेरु वड़ा यार मनाया ।
मेह नेह बरसाया ।। धृ० ।।

आसा यार तु यार असानु ।
आपस बीच गल लाया ।। १ ।।

अहे सैंयो मिल देंहु मु मारख ।
दिल दाम हराम आया ।। २ ।।

मानपुरी मन माना होया ।
डाढे आन मिलाया ।। ३ ।।

४०३—पद : जैवंति आदिताल

साईं रे जैसे को तैसा ।
तैसा साईं रे जैसे को तैसा ।। धृ० ।।

जो जाने सोहि पहिचाने ।
और न जाने कोई कैसा ।। १ ।।
जो नर ध्यावे सो नर पावे ।
बूझे ना पाखंडी ऐसा ।। २ ।।

जैसो ग्राहक तैसो सौदा ।
कहत मानपुरी यो जन ऐसा ।। ३ ।।

४०४—पद : छाया नाटक ताल

जैसे सूरज तेज में भेद नाहीं।
हाजी, ऐसे इस देह को देव बिच्चारी ।। ध्रु० ।।
घट मों नट है, नट मों घट है।
यही भाव धरो ऐसी टेक न खरो ।। १ ।।
खांड बतासा, बतासा सो खांड।
जो दृष्टि परो साईं प्रीतम प्यारे ।। २ ।।
कहे मानपुरी जब सो जगदिस परे।
गोकुल गाँव को पेंडई न्यारो ।। ३ ।।

४०५—पद : चाल कानड़ा दरबारी ताल झंपा

देखो चाँदना चाँद कुत।
दरिया के बीच पानी पियासा ।। ध्रु० ।।
कैसा खेल बना यारो जो रखा सा।
भरा अगम दरिया बेहद बे अंत सा ।। १ ।।
वही अपना आपकु भूला।
ऐसे अचरज का बड़ा है तमासा ।। २ ।।
कहे मानपुरी सब खांड ही खांड।
पन खांड की बात भूला बतासा ।। ३ ।।

४०६—पद : केदार

जाका सत्ता सों सब सुख भोगता।
तो ही न मूरख चित मों आने ।। ध्रु० ।।
खैये कहा अरु खात सु कौन।
खिलावत कौन यह तीन ही जाने ।। १ ।।
जानत सो जो न जानता बात अचंबे की।
ऐसी नारी न माने ।। २ ।।
कहे मानपुरी पग लाग गुरु को।
नहीं तो तेरे सिरस्ता के दिवाने ।। ३ ।।

४०७—पद : रामकली बिलंदी

निरंजन गाँव में बसी।
निज घर देख हंसी ।। धृ० ।।
जहाँ कछु नाहीं तँह सब देखा।
सूरज और ससी ।। १ ।।
प्रेम नगर की बात कठिन है।
लोक लाज तज धँसी ।। २ ।।
मानपुरी निरगुनपुर माँही।
भो भ्रम भ्रांति नसी ।। ३ ।।

४०८—पद : गौड़ सारंग आदिताल

झूलत है सबे झूलने में झूला।
झूलता नहीं क्या क्या ख्याल हे ।। धृ० ।।
तहकीक जाने बिना भाग पुरे।
ऐसा बुझ नाम हाल है जी ।। १ ।।
एक झूल चले एक झूलत है।
इस झूले में चला च्याल है जी ।। २ ।।
कहे मानपुरी ऐसी बात बिकट को।
पावना बहुत जंजाल है जी ।। ३ ।।

४०९—पद : रामकली बिलंदी

सनातन ब्रह्मा देस ही।
जग जगदीस होई ।। धृ० ।।
सारामार विचार बिबेके।
साँची वा कही ।। १ ।।
आपही ब्रह्मा, आपही माया।
आपही दुध आपही दही ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु परसादे।
निरगुन बस्त लई ।। ३ ।।

४१०—पद : धनाश्री आदिताल

प्रीतम सैंइया पर ब्रह्म दियो बतलाय ।। धृ० ।।

जल मो थल मों जीव जंतु मों ।
सब घट मो रहो समाय ।। १ ।।

कोई जाय मथुरा कोई जाय कासी ।
गुरु बिन भरम न जाय ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु सब घट व्यापक ।
सतगुरु देत बताय ।। ३ ।।

४११—पद : राग पूर्वी चौताल

अलख निरंजन भव भय भंजन ।
तन मन रंजन ध्यावो बावा ।। धृ० ।।

अजर अमर घर गयो बिसर कर ।
हित चित हर बर ध्यावो बावा ।। १ ।।

गुरु के बचन सुन मगन भयो जना ।
निसिदिन वाके गुन गावे बावा ।। २ ।।

मानपुरी अब ब्रह्म रूप देखे सब ।
गुरु को शरण जब आवे बावा ।। ३ ।।

४१२—पद : सारङ्ग आदिताल

अलख अमूरत सो मन माने ।
संत संग पहिचानो ।। धृ० ।।

नाम रूप बिन सहज निहारा ।
अंतर बाहिर जानो ।। १ ।।

जनम जनम को झगरा चूका ।
आपको आप भुलानो ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु अगम अगोचर ।
गुरु बिन ग्यान बखानो ।। ३ ।।

४१३—पद : चाल सोरट आदिताल

ब्रह्म रस मीठो लागे रे।
माया मोह भ्रम सब संशय फीको लागे रे ॥धृ०॥
जाहि लागि सोहि जन जाने।
और न जाने कोई ॥ १ ॥
कहाँ कहु कछु कहत न आवे।
सबद सु न्यारा होई ॥ २ ॥
जग सो ब्रह्म ब्रह्म सो सब जग।
दिसे एक अनेक ॥ ३ ॥
एक सो दोय दोय से त्रिगुन।
लीने बहुबिध भेक ॥ ४ ॥
जहाँ तहाँ दरसन, जहाँ तहाँ परसन।
जहाँ तहाँ है परिपूरन ॥ ५ ॥
कहत मानपुरी सब घट व्यापक।
नाही निरंजन दूर ॥ ६ ॥

४१४—पद : राग श्री चौताल

जैसे डार पान फूल फल मिलाये ब्रह्म कहिये।
तैसे सब जग को जगदीस कौन कहत है ॥ धृ० ॥
प्रभु भयो साठी हम तुम हम तुम भये तीन बीसी।
इतनो भेद जानि के अनंद क्यों न करत है ॥१॥
सागर सो तरङ्ग, तरङ्ग सो सागर सब।
सूरज सो तेज कैसे न्यारे करि धरिये ॥ २ ॥
कहत मानपुरी चांद सो तो चांद है।
चांद न हो चांदन की धुंडत क्यों फिरत है ॥३॥

४१५—पद : राग सारङ्ग सावत ताल झंपा

अपने मूल को खोजि के मूरखा।
देह की देव का ध्यान धरना ॥ धृ० ॥
येक है बस्त परकास सब येक का।
दूसरे भाव को दूर करना ॥ १ ॥